

# लाक्षा 2026



भाकृअनुप – राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान  
नामकुम, राँची - 834 010 झारखण्ड (भारत)



# लाक्षा 2026



भाकृअनुप – राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान  
नामकुम, राँची - 834 010 झारखण्ड (भारत)

ISSN :2454-7840

लाक्षा: 2026

संस्थान की वार्षिक हिंदी पत्रिका

वर्ष : 18, अंक : 01

प्रकाशक

डॉ अभिजीत कर

निदेशक

संकलन, संपादन एवं निर्माण

डॉ संतोष कुमार सिंह यादव

डॉ प्रियका साकरे

श्री मुहम्मद तारीक ज़मौ

श्री इन्द्रजीत कुमार

दूरभाष : 0651-2261156

ई-मेल : [director.nisa@icar.org.in](mailto:director.nisa@icar.org.in)

सम्पर्क करें : <https://nisa.res.in/>

सितम्बर 2026

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान

नामकुम, राँची - 834010 झारखण्ड (भारत)

मुद्रक : अन्नपूर्णा प्रिंटेर्स, राँची

दूरभाष - 9835778101

ई-मेल - [annapurnaprinters.mco@gmail.com](mailto:annapurnaprinters.mco@gmail.com)

मुख्य पृष्ठ पर दिये गये चित्र, ऊपर से नीचे बढ़ते हुए घड़ी की दिशा में :

1. संस्थान का ऐतिहासिक भवन
2. आरजीबी इमेजिंग का उपयोग करके संतरे की छटाई को दर्शाते हुए
3. कृषि में डिजिटल मॉडल निर्माण हेतु डेटा संग्रहण
4. प्राकृतिक रूप से प्राप्त हुए सगंध तेल
5. मधु निर्माण में स्वच्छ छत्ते में मधुमक्खियाँ

## प्राक्कथन



भारत में लगभग 198.11 मिलियन हेक्टेयर सकल फसली क्षेत्र तथा 774.38 मिलियन टन कुल फसल उत्पादन दर्ज किया गया। इससे लगभग 754.50 मिलियन टन फसल अवशेष उपलब्ध होने का अनुमान है। अवशेषों का समुचित उपयोग न होने के कारण अनेक क्षेत्रों में इसे खेतों में ही जला दिया जाता है। धान, गेहूँ, गन्ना, मक्का, कपास एवं दलहनी फसलों के अवशेष प्रमुख हैं। इन अवशेषों में सेल्यूलोज, हेमिसेल्यूलोज एवं लिग्निन जैसे मूल्यवान जैव-बहुलक पाए जाते हैं, जिनसे जैव-ऊर्जा, बायोचार, जैव-ईंधन, नैनोसेल्यूलोज, जैव-आधारित रसायन, पैकेजिंग सामग्री तथा अन्य उच्च-मूल्य उत्पाद विकसित किए जा सकते हैं। अतः फसल अवशेषों का वैज्ञानिक प्रबंधन एवं मूल्य संवर्धन पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के साथ-साथ 'वेस्ट टू वेल्थ' और चक्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा दे सकता है।

खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के बाद भारतीय कृषि को अधिक लाभकारी, टिकाऊ एवं उद्यमशील बनाना समय की आवश्यकता है। इस दिशा में उच्चतर प्रसंस्करण कृषि, कृषि उत्पादों एवं अवशेषों के मूल्य संवर्धन, किसानों की आय वृद्धि तथा ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए नए अवसर प्रदान करती है। कृषि एवं जैव संसाधनों से न्यूट्रास्यूटिकल, जैव-आधारित पैकेजिंग, प्राकृतिक राल एवं गौद उत्पाद, खाद्य संरक्षण सामग्री, सौंदर्य प्रसाधन तथा बायो-पॉलीमर जैसे उच्च-मूल्य उत्पाद विकसित किए जा सकते हैं। भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, राँची कृषि एवं संबद्ध संसाधनों के मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण तथा उपयोग-आधारित प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए अनुसंधान एवं नवाचार कर रहा है। कृषि अवशेषों, जैव-आधारित उत्पादों, खाद्य प्रसंस्करण, जैव-अर्थव्यवस्था तथा प्राकृतिक राल एवं गौद के क्षेत्र में संस्थान के प्रयास कृषि को उत्पादन-केंद्रित व्यवस्था से मूल्य-सृजन आधारित अर्थव्यवस्था की ओर ले जाने में सहायक हैं।

वैज्ञानिक ज्ञान के प्रभावी प्रसार में राजभाषा हिन्दी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। शोध उपलब्धियों एवं तकनीकी जानकारी को किसानों, विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं, उद्यमियों तथा आमजन तक सरल एवं सुगम भाषा में पहुँचाना हमारी प्राथमिकताओं में शामिल है। इसी उद्देश्य से संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'लाक्षा' निरंतर प्रकाशित की जा रही है, जो वैज्ञानिक ज्ञान और समाज के बीच एक सशक्त सेतु का कार्य कर रही है। मुझे प्रसन्नता है कि 'लाक्षा' का 2026 का यह अद्धारहवा अंक उच्चतर प्रसंस्करण कृषि विषय पर केन्द्रित है। इस अंक में कृषि प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन, प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग, कृषि अपशिष्ट प्रबंधन, ग्रामीण उद्यमिता, नवाचार तथा आत्मनिर्भर भारत से संबंधित विविध विषयों पर सारार्थित लेख सम्मिलित किए गए हैं। मुझे विश्वास है कि यह प्रकाशन पाठकों को नवीन ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ कृषि-आधारित उद्योगों एवं ग्रामीण उद्यमिता के क्षेत्र में नवाचार को प्रोत्साहित करेगा।

मैं इस अंक के प्रकाशन में योगदान देने वाले सभी लेखकों, समीक्षकों, संपादक मंडल के सदस्यों तथा राजभाषा कार्यान्वयन से जुड़े सभी सहयोगियों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ। आशा है कि 'लाक्षा-2026' का यह विशेषांक पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक, उपयोगी एवं प्रेरणादायक सिद्ध होगा तथा विकसित भारत के निर्माण में उच्चतर प्रसंस्करण कृषि की भूमिका को और अधिक सशक्त बनाने में सहायक होगा।

अभिजीत कर

अभिजीत कर  
निदेशक



# सम्पादकीय

भारत ने हरित क्रांति और वैज्ञानिक कृषि तकनीकों के माध्यम से खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, परन्तु बदलती आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों ने कृषि विकास के नए आयामों की आवश्यकता को रेखांकित किया है। आज कृषि का लक्ष्य केवल अधिक उत्पादन नहीं, बल्कि उत्पादन के साथ मूल्य संवर्धन, संसाधनों का कुशल उपयोग, पर्यावरण संरक्षण, पोषण सुरक्षा तथा किसानों की आय में स्थायी वृद्धि सुनिश्चित करना है। यही दृष्टिकोण "उच्चतर प्रसंस्करण कृषि" की अवधारणा को नई दिशा प्रदान करता है।

संस्थान से प्रतिवर्ष नियमित रूप से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'लाक्षा' ने विगत 17 वर्षों के सतत प्रकाशन के दौरान अपना एक विशिष्ट स्थान स्थापित किया है। 'लाक्षा-2026' के रूप में इसका 18वाँ अंक प्रस्तुत किया जा रहा है। लाक्षा का यह अंक कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में हो रहे नवाचारों, वैज्ञानिक उपलब्धियों तथा ग्रामीण विकास के विविध आयामों को समर्पित है। इस अंक में सम्मिलित लेख प्राकृतिक एवं जैविक कृषि, मृदा स्वास्थ्य, जलवायु-अनुकूल कृषि प्रणालियों, सटीक कृषि, कृषि यंत्रीकरण, मधुमक्खी पालन, मूल्य संवर्धन, खाद्य प्रसंस्करण, कृषि अपशिष्ट प्रबंधन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन विज्ञान तथा डिजिटल प्रौद्योगिकियों जैसे समसामयिक विषयों पर केंद्रित हैं। कृषि की स्थिरता का आधार स्वस्थ मृदा है। जैव-कीटनाशकों, जैविक खेती, अम्लीय मृदा प्रबंधन, बायोचार, पंचगव्य तथा हरित अभियांत्रिकी तकनीकों पर आधारित लेख मृदा स्वास्थ्य और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में नवीन संभावनाओं को प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के बीच जलवायु-अनुकूल कृषि प्रणालियाँ, धान परती क्षेत्रों में दलहन फसलों की खेती तथा कार्बन क्रेडिट जैसी अवधारणाएँ कृषि को अधिक टिकाऊ और लाभकारी बनाने का मार्ग प्रशस्त करती हैं।

कृषि उत्पादों एवं कृषि-आधारित उपोत्पादों के मूल्य संवर्धन पर आधारित लेख यह दर्शाते हैं कि कृषि अवशेष, मधुमक्खी उत्पाद, महुआ पुष्प, चीनी उद्योग के सह-उत्पाद तथा अन्य जैव संसाधन ग्रामीण उद्योगों और उद्यमिता के सशक्त आधार बन सकते हैं। "कचरे से कचन" जैसी अवधारणाएँ कृषि अपशिष्टों को मूल्यवान् उत्पादों में परिवर्तित कर चक्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। खाद्य उद्योग में जैव-परिरक्षक बैक्टीरियोसिन्स, खाद्य गुणवत्ता मूल्यांकन तथा मिलावट पहचान संबंधी प्रौद्योगिकियाँ सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण खाद्य प्रणाली के निर्माण में योगदान दे रही हैं।

वर्तमान युग डिजिटल कृषि का युग है। मृदा नमी मापन तकनीकों, मशीन विज्ञान, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल ट्रैकिंग तथा सटीक कृषि संबंधी लेख कृषि निर्णयों को अधिक वैज्ञानिक, सटीक और प्रभावी बनाने की दिशा में नई संभावनाएँ प्रस्तुत करते हैं। इन प्रौद्योगिकियों का समुचित उपयोग संसाधनों की बचत, उत्पादन लागत में कमी तथा उत्पादकता वृद्धि में सहायक सिद्ध होगा। ग्रामीण आजीविका और उद्यमिता को सशक्त बनाने में मधुमक्खी पालन, सुगंधित तेल उद्योग, लघु कृषकों की सफलता की प्रेरक कहानियाँ तथा श्री अन्न (मिलेट) आधारित पहलें महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। ये प्रयास "आत्मनिर्भर भारत" और "विकसित भारत" की परिकल्पना को जमीनी स्तर पर साकार करने की दिशा में प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

यह प्रसन्नता का विषय है कि लाक्षा-2026 में प्रकाशित लेख विविध संस्थानों के वैज्ञानिकों, शोधकर्ताओं एवं विशेषज्ञों के ज्ञान और अनुभव का सार प्रस्तुत करते हैं। हमें विश्वास है कि यह अंक शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों, कृषि वैज्ञानिकों, विस्तार कार्यकर्ताओं, उद्यमियों तथा प्रतिभाशील कृषकों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा। पत्रिका में अपने बहुमूल्य लेखों के माध्यम से योगदान देने वाले सभी लेखकों, वैज्ञानिकों एवं विद्वानों के प्रति हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। आशा है कि यह अंक कृषि, ग्रामीण विकास और उच्चतर प्रसंस्करण कृषि के क्षेत्र में नए विचारों, नवाचारों और अवसरों को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।



सम्पादक मंडल

# विषय सूची

| क.सं. | विषय                                                                                                                                                                                   | पृष्ठ सं. |
|-------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----------|
| 1     | प्राकृतिक रूप से तैयार जैव-कीटनाशकों द्वारा सब्जी एवं फल फसलों में कीट प्रबंधन<br>प्रीति प्रिया एवं पी. के. सिंह                                                                       | 1         |
| 2     | मृदा संजीवनी: बायोचार और पंचगव्य द्वारा टिकाऊ खेती का कार्याकल्प<br>सफीक अहमद, अभिलाषा पाठक, प्रदीप कुमार, हर्ष कुमार नामदेव, अजय सिंह, हिमाशु एवं श्रुति शर्मा                        | 4         |
| 3     | अधिक फसल उत्पादन के लिए अम्लीय मिट्टी का प्रबंधन<br>रेशमा शिंदे, संतोष माली, कीर्ति सौरभ, अवनी कुमार सिंह एवं अनुप दास                                                                 | 7         |
| 4     | जैविक खेती का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव<br>हर्ष कुमार नामदेव एवं सफीक अहमद                                                                                                              | 12        |
| 5     | फल वृक्षों की उच्च सघनता रोपण प्रणाली<br>गायत्री सिन्हा, प्रीति सुधा नायक, शिप्रा प्रधान, पाणिग्राही प्रत्ययूषा भगवती एवं शिव मंगल प्रसाद                                              | 15        |
| 6     | सरसों की खेती में उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनीक का उपयोग<br>अमित नामदेव, रूपल जैन एवं विनोद कुमार भार्गव                                                                                  | 17        |
| 7     | धान परती क्षेत्रों में दलहनी फसलों की खेती: खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की नई दिशा<br>आशीष कुमार राउत, अनूप चंद्र, जी. के. सुजयानंद, ऋषिकेश कुमार एवं नरेंद्र कुमार                         | 20        |
| 8     | पर्यावरण के अनुकूल उभरती ग्रीन इंजीनियरिंग तकनीकी द्वारा मृदा शुद्धि के साथ बहुमूल्य धातुओं की प्राप्ति का विस्तृत विश्लेषण<br>प्रदीप कुमार, गौरव शर्मा, सफीक अहमद एवं विजय कुमार यादव | 22        |
| 9     | मधुमक्खी पालन : ग्रामीण आजीविका का एक सफल विकल्प<br>प्रीति प्रिया, पी. के. सिंह एवं विनय कुमार                                                                                         | 26        |
| 10    | सटीक खेती के लिए मिट्टी की नमी मापने की तकनीकें<br>मृदुस्मिता देबनाथ                                                                                                                   | 29        |
| 11    | जलवायु अनुकूल कृषि प्रणाली<br>विद्यापति विद्याकर, ज्योतिर्मय घोष, नववेश कुमार सिन्हा एवं वैभव डी. लोहोट                                                                                | 32        |
| 12    | बायोमास: सतत विकास का एक प्रमुख ऊर्जा स्रोत<br>प्रमोद शेलके, निशा सुलाखे, रोहित नलवडे, मौसुमि साबत, नवीन जोस एवं मनोज महावर                                                            | 37        |
| 13    | महुआ पुष्प: पोषण, औषधीय गुण एवं खाद्य उद्योग में उपयोगिता<br>सिमरन अरोड़ा, जितेन्द्र भुक्का, सखाराम काले एवं सरोज कुमार गिरी                                                           | 40        |
| 14    | भारत में कृषि उत्पादों के उच्चतर प्रसंस्करण को प्रोत्साहन देना समय की मांग<br>ब्रह्म प्रकाश, दीपक राय, ओम प्रकाश एवं मुकुन्द कुमार                                                     | 46        |
| 15    | प्रोपोलिस: एक अद्भुत मधुमक्खी उत्पाद<br>संतोष कुमार सिंह यादव, अर्नब राय चौधुरी एवं सतीश चन्द्र शर्मा                                                                                  | 48        |
| 16    | सुगंध से समृद्धि तक: सुगंध तेलों की अनूठी दुनिया<br>अर्चना महापात्र, प्रियंका साकरे, नंदकिशोर ठोंबरे                                                                                   | 52        |

| क्र.सं. | विषय                                                                                                                                                            | पृष्ठ सं. |
|---------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----------|
| 17      | भारत में कृषि उत्पादों के उच्चतर प्रसंस्करण से किसानों की आमदनी बढ़ाने की अपार संभावनाएं<br>ब्रह्म प्रकाश, दीपक राय, ओम प्रकाश एवं मुकुन्द कुमार                | 57        |
| 18      | चक्रीय अर्थव्यवस्था के लिए चीनी उद्योग के सह-उत्पादों का मूल्य संवर्धन<br>प्रियंका साकरे, नंदकिशोर ठोंबरे एवं अर्चना महापात्र                                   | 61        |
| 19      | कचरे से कंचन: कैसे द्वितीयक चयापचयज कृषि अपशिष्ट को बदल रहे हैं 'कीमती सोने' में<br>संदीप कुमार, अर्चना महापात्रा एवं मिनू ससी                                  | 65        |
| 20      | जैव-परिरक्षक बैक्टीरियोसिन्स: सुरक्षित और रसायन-मुक्त भोजन<br>मौसम कुमार राम एवं संदीप कुमार                                                                    | 68        |
| 21      | एक कप चाय की बदलती पहचान: स्वाद, स्वास्थ्य और विज्ञान की अनूठी कहानी<br>नेहा, अनुपमा शर्मा, ऋतिका, भाविनी शर्मा, नंदकिशोर ठोंबरे एवं सौरव कुमार                 | 72        |
| 22      | मशीन विज्ञान आधारित खाद्य गुणवत्ता एवं सुरक्षा के मूल्यांकन<br>राजवर्धन पाटील, देबब्रद्धा महापात्र, सखाराम काले एवं परमानंद साहू                                | 77        |
| 23      | कृषि में डिजिटल ट्यूनिंग का अनुप्रयोग एक नई क्रांति<br>देबब्रद्धा महापात्र, परमानंद साहू, सखाराम काले एवं राजवर्धन पाटील                                        | 82        |
| 24      | खाद्य पदार्थों में मिलावट की पहचान: पारंपरिक घरेलू परीक्षणों से कृत्रिम बुद्धिमत्ता तक<br>बी. नरेश, नंदकिशोर ठोंबरे, प्रियंका साकरे एवं सौरव कुमार              | 87        |
| 25      | कार्बन क्रेडिट व्यापार योजना: भारत की हरित क्रांति और आर्थिक विकास का नया अध्याय<br>सफीक अहमद, आर के पटेल, देवीदीन यादव, कृपा शंकर, हरपाल सिंह एवं प्रदीप कुमार | 91        |
| 26      | छोटी ज़ोत से लाख लीडर तक : श्री नारायण बेदिया की प्रेरणादायक यात्रा<br>उदयकुमार एम एस, संजय कुमार पाण्डेय, दिनेश कुमार, सिंगराय माझी एवं पी. पटमाझी             | 95        |
| 27      | प्रशिक्षण से परिवर्तन की ओर: आईगोट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म<br>संगीता श्रीवास्तव एवं प्रियंका श्रीवास्तव                                                             | 97        |
| 28      | झारखंड मिलेट मिशन: श्री अन्न से समृद्धि की ओर एक कदम<br>नीतू कुमारी, शशि भूषण चौधरी एवं विशालाक्षी चौबे                                                         | 100       |

## प्राकृतिक रूप से तैयार जैव-कीटनाशकों द्वारा सब्जी एवं फल फसलों में कीट प्रबंधन

प्रीति प्रिया एवं पी. के. सिंह

कीट विज्ञान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची

भारत विश्व के प्रमुख फल एवं सब्जी उत्पादक देशों में से एक है। फल एवं सब्जी फसलें न केवल पोषण एवं खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, बल्कि लाखों किसानों की आजीविका और आय वृद्धि का भी प्रमुख आधार हैं। बढ़ती जनसंख्या, बदलती खाद्य आवश्यकताओं तथा कृषि विविधीकरण की आवश्यकता को देखते हुए उद्यानिकी फसलों का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। टमाटर, बैंगन, मिर्च, भिंडी, गोभी वर्गीय फसलें, कद्दूवर्गीय सब्जियाँ तथा आम, अमरुद, पपीता और केला जैसी फल फसलें देश के विभिन्न भागों में व्यापक रूप से उगाई जाती हैं। झारखंड राज्य में फल एवं सब्जी उत्पादन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार है। राज्य की अनुकूल जलवायु एवं प्राकृतिक संसाधन विभिन्न प्रकार की उद्यानिकी फसलों की खेती के लिए उपयुक्त हैं। राँची, खूटी, गुमला, लोहरदगा तथा पूर्वी सिंहभूम जैसे जिलों में सब्जियों एवं फलों का बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जाता है, जो किसानों की आय में महत्वपूर्ण योगदान देता है। हालांकि, विभिन्न कीटों का प्रकोप इन फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित करता है, जिसके कारण किसानों को पर्याप्त आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

फल एवं सब्जी फसलों में फल छेदक, तना छेदक, माहू, जैसिड, सफेद मक्खी, थ्रिप्स, लाल कटु भृंग तथा फल मक्खी प्रमुख कीट हैं। इनके नियंत्रण के लिए किसान प्रायः रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग करते हैं। यद्यपि रासायनिक कीटनाशक त्वरित एवं प्रभावी नियंत्रण प्रदान करते हैं, किंतु इनके अधाधुन एवं असंतुलित उपयोग से कीटों में प्रतिरोधक क्षमता विकसित होने, खाद्य पदार्थों में अवशेषों के संचय, पर्यावरण प्रदूषण, लाभकारी जीवों की क्षति तथा मानव एवं पशु स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। चूंकि फल एवं सब्जियाँ प्रायः सीधे उपभोग की जाती हैं, इसलिए इनमें रासायनिक अवशेषों की समस्या और भी गंभीर हो जाती है। हरित क्रांति के पश्चात रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग तेजी से बढ़ा और प्रारंभिक वर्षों में कीट नियंत्रण में उल्लेखनीय सफलता मिली। परंतु समय के साथ इनके अत्यधिक उपयोग के कारण अनेक पारिस्थितिक एवं स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियाँ सामने आईं। परिणामस्वरूप, आज ऐसे विकल्पों की आवश्यकता महसूस की जा रही है जो प्रभावी होने के साथ-साथ पर्यावरण एवं स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित भी हों। प्राकृतिक

रूप से तैयार जैव-कीटनाशक इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण एवं टिकाऊ समाधान प्रस्तुत करते हैं।

बीजामृत, जीवामृत, नीमामृत, ब्रह्मास्त्र, दशपर्णी अर्क तथा अग्निअस्त्र जैसे पारंपरिक जैव-कीटनाशक स्थानीय संसाधनों की सहायता से कम लागत में तैयार किए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त बैसिलस थुरिंगिएन्सिस, ब्यूवेरिया बेसियाना, मेटाराइजियम एनीसोप्ली तथा वर्टिसिलियम लेकेनी जैसे सूक्ष्मजीव आधारित जैव-कीटनाशक भी कीट प्रबंधन में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुए हैं। ये जैविक एजेंट न केवल कीटों को नियंत्रित करते हैं, बल्कि लाभकारी कीटों के संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य में सुधार तथा पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समेकित कीट प्रबंधन एवं जैविक खेती में इनका महत्व निरंतर बढ़ रहा है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि जैव-कीटनाशकों का उपयोग रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करने, पर्यावरण प्रदूषण को घटाने तथा कृषि जैव विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान देता है। साथ ही, ये सुरक्षित खाद्य उत्पादन एवं जलवायु-अनुकूल कृषि प्रणाली को बढ़ावा देने में भी सहायक हैं। इसलिए फल एवं सब्जी फसलों में प्राकृतिक रूप से तैयार जैव-कीटनाशकों के उपयोग को प्रोत्साहित करना टिकाऊ कृषि, पर्यावरण संरक्षण तथा खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में अत्यंत आवश्यक है।

### प्रमुख प्राकृतिक जैव-कीटनाशक

**नीमामृत :** नीमामृत एक पौध-आधारित जैव-कीटनाशक है, जिसे नीम की पत्तियों अथवा बीजों, गौमूत्र तथा पानी से तैयार किया जाता है। इसकी तैयारी में नीम की सामग्री को गौमूत्र और पानी के साथ 24-48 घंटे तक किण्वित किया जाता है तथा बाद में छानकर उपयोग किया जाता है। 7-10 दिन के अंतराल पर इसके नियमित छिड़काव से माहू, सफेद मक्खी, थ्रिप्स तथा विभिन्न प्रकार की इलियों का प्रभावी नियंत्रण होता है। नीमामृत कीटों की भोजन ग्रहण करने की क्षमता, प्रजनन तथा अंडे देने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है, जिससे उनकी संख्या में कमी आती है। फलदार फसलों में भी यह घूसक कीटों के प्रबंधन में सहायक है तथा रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करता है।

नीम में एजाडिरेक्टिन, निम्बिन तथा सालानिन जैसे जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जो कीटों की वृद्धि, भोजन ग्रहण तथा प्रजनन क्रियाओं को बाधित करते हैं। इसी कारण नीम-आधारित उत्पाद समेकित कीट प्रबंधन में विशेष महत्व रखते हैं।

**ब्रह्मास्त्र :** ब्रह्मास्त्र एक पारंपरिक वनस्पति-आधारित जैव-कीटनाशक है, जिसे नीम, धतूरा, करंज, अरंडी तथा आक की पत्तियों से तैयार किया जाता है। इन पत्तियों को गौमूत्र एवं पानी के साथ उबालकर तैयार घोल को छानकर फसलों पर छिड़का जाता है। यह फल छेदक, तना छेदक, इल्लियो तथा विभिन्न चूसक कीटों के नियंत्रण में उपयोगी पाया गया है। विभिन्न पौधों से प्राप्त जैव सक्रिय तत्व मिलकर व्यापक प्रभाव प्रदान करते हैं, जिससे यह एक प्रभावी प्राकृतिक कीटनाशक बन जाता है। वनस्पति-आधारित कीटनाशकों में एल्कलॉइड, टरपेनॉइड, फ्लेवोनॉइड तथा फिनॉलिक यौगिक पाए जाते हैं, जो कीटों की वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करते हैं तथा अपेक्षाकृत कम पर्यावरणीय जोखिम उत्पन्न करते हैं।

**दशपर्णी अर्क :** दशपर्णी अर्क दस प्रकार की पत्तियों से तैयार किया जाने वाला एक पारंपरिक जैव-कीटनाशक है। इसमें सामान्यतः नीम, करंज, अरंडी, धतूरा, आक, पपीता तथा अमरुद सहित अन्य पौधों की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इन पत्तियों को गौमूत्र एवं पानी के साथ 15-20 दिनों तक किण्वित कर तैयार किया जाता है। इसका नियमित उपयोग कीट एवं रोग प्रकोप को कम करने के साथ-साथ पौधों के समग्र स्वास्थ्य में सुधार करता है। इसकी निवारक प्रकृति के कारण इसे जैविक एवं प्राकृतिक खेती में व्यापक रूप से अपनाया जा रहा है। किण्वन प्रक्रिया पौधों में उपस्थित जैव सक्रिय यौगिकों के निष्कर्षण को बढ़ाती है तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को प्रोत्साहित कर पौधों की प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करती है।

**बीजामृत :** बीजामृत का उपयोग मुख्यतः बुवाई से पूर्व बीज उपचार के लिए किया जाता है। इसे ताजे गोबर, गौमूत्र, चूना, खेत की मिट्टी तथा पानी से तैयार किया जाता है। बीजों को इस घोल में कुछ समय तक डुबोकर छाया में सुखाने के बाद बोया जाता है। बीजामृत अंकुरण में सुधार करता है, बीज एवं मृदा जनित रोगों को कम करता है तथा पौधों की प्रारंभिक वृद्धि को प्रोत्साहित करता है। फलदार पौधों की नर्सरी में जड़ों के उपचार हेतु भी इसका उपयोग लाभकारी पाया गया है। जैविक बीज उपचार बीजों के आसपास लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है, जिससे पौधों की प्रारंभिक वृद्धि बेहतर होती है तथा डेमिंग-ऑफ जैसे रोगों की संभावना कम हो जाती है।

**जीवामृत (तरल सूक्ष्मजीव संवर्धक) :** जीवामृत एक सूक्ष्मजीव-समृद्ध जैविक घोल है, जिसे गोबर, गौमूत्र, गुड़, बेसन अथवा दाल के आटे, खेत की मिट्टी तथा पानी से तैयार किया जाता है। इसे 48 घंटे तक किण्वित किया जाता है ताकि लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि हो सके। जीवामृत के उपयोग से मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ती है, पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है तथा

पौधों की वृद्धि, पुष्पन एवं फलन में वृद्धि होती है। फलदार वृक्षों में इसका प्रयोग मृदा उर्वरता एवं जड़ विकास को बेहतर बनाता है। जीवामृत प्रत्यक्ष रूप से कीटनाशक नहीं है, बल्कि यह मृदा की जैविक सक्रियता एवं पोषक चक्रण को बढ़ाकर पौधों की कीट एवं रोगों के प्रति सहनशीलता को मजबूत करता है।

## जैव-कीटनाशकों के लाभ

- सुरक्षित एवं गुणवत्तापूर्ण खाद्य उत्पादन में सहायक।
- फल एवं सब्जियों में रासायनिक अवशेषों की मात्रा कम करने में सहायक।
- स्थानीय संसाधनों से कम लागत पर तैयार किए जा सकते हैं।
- उत्पादन लागत में कमी लाते हैं।
- पर्यावरण प्रदूषण को कम करते हैं।
- परागणकर्ताओं, प्राकृतिक शत्रुओं एवं अन्य लाभकारी जीवों का संरक्षण करते हैं।
- मृदा स्वास्थ्य एवं सूक्ष्मजीव गतिविधियों में सुधार करते हैं।
- कृषि पारितंत्र में जैव विविधता को बढ़ावा देते हैं।
- कीटों में प्रतिरोध विकसित होने की संभावना कम होती है।
- किसानों एवं उपभोक्ताओं के लिए अपेक्षाकृत सुरक्षित हैं।
- जैविक एवं प्राकृतिक खेती के लिए उपयुक्त हैं।
- रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता कम करते हैं।
- दीर्घकालीन कृषि उत्पादकता एवं टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देते हैं।

जैव-कीटनाशक टिकाऊ कृषि का एक महत्वपूर्ण आधार बनते जा रहे हैं। सांस्कृतिक, यांत्रिक एवं जैविक नियंत्रण उपायों के साथ इनके समन्वित उपयोग से रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता कम की जा सकती है तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखा जा सकता है।

## जैव-कीटनाशकों की सीमाएँ एवं चुनौतियाँ

- रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में प्रभाव अपेक्षाकृत धीमा होता है।
- प्रभाव बनाए रखने के लिए बार-बार उपयोग की आवश्यकता पड़ सकती है।
- गंभीर कीट प्रकोप की स्थिति में इनकी प्रभावशीलता सीमित हो सकती है।
- भंडारण अवधि अपेक्षाकृत कम होती है।
- वर्षा, तापमान एवं धूप जैसी मौसमीय परिस्थितियाँ इनके प्रभाव को प्रभावित कर सकती हैं।
- निर्माण विधि एवं उपयोग की तकनीक के अनुसार परिणामों में भिन्नता आ सकती है।
- बड़े पैमाने पर उत्पादन एवं मानकीकरण चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

- कुछ जैव-कीटनाशकों की तीव्र गंध उपयोग में असुविधा उत्पन्न कर सकती है।
- इनके प्रभावी उपयोग के लिए किसानों को पर्याप्त प्रशिक्षण एवं तकनीकी जानकारी की आवश्यकता होती है।
- सर्वोत्तम परिणाम समेकित कीट प्रबंधन के अंतर्गत अन्य नियंत्रण उपायों के साथ उपयोग करने पर प्राप्त होते हैं।

यद्यपि जैव-कीटनाशकों के अनेक लाभ हैं, फिर भी इन्हें रासायनिक कीटनाशकों का पूर्ण विकल्प न मानकर समेकित कीट प्रबंधन की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में अपनाना अधिक उपयुक्त है। इनके व्यापक उपयोग के लिए वैज्ञानिक मानकीकरण, क्षेत्रीय परीक्षण तथा किसानों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।



## ब्रह्मास्त्र (जैव-कीटनाशक)

नीम, धतूरा, कलेंज, अरंडी, आलू आदि पत्तियों तथा गौमुख से तैयार किया जाने वाला एक बहुलवर्षीय जैव-कीटनाशक, जो विभिन्न कीटों के प्रबंधन में सहायक है।



1 विभिन्न पौधों की पत्तियों का संग्रह



2 पत्तियों को काटकर या चौरकर छोटा करें



3 पत्तियों को गौमुख एवं घासी के साथ उबालें (30-45 मिनट)



4 घोल को ठंडा करने के बाद घुंघरी



5 घोल को कपड़े से छान लें



6 छानकर बोतलों में भर दें और उपयोग करें



### उपयोग विधि

5-10% घोल बनाकर (1 लीटर ब्रह्मास्त्र + 10-20 लीटर घासी) फसल पर छिड़काव करें।

आलू छेदक, उलूख छेदक, इल्लरी, माधु, मोरेल मक्खी तथा अन्य घुसक कीटों के नियंत्रण में प्रभावी।

### प्रमुख सामग्री



नीम की पत्तियाँ



धतूरा की पत्तियाँ



कलेंज की पत्तियाँ



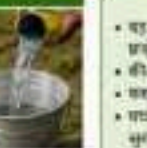
अरंडी की पत्तियाँ



आलू की पत्तियाँ



गौमुख



घासी

### लाभ

- यह एक स्वस्थ-उत्पन्न और प्राकृतिक कीटनाशक है।
- कीटों की वृद्धि एवं प्रजनन को रोकता है।
- फसलों को हानि से बचाता है।
- पर्यावरण एवं उपभोक्ताओं के लिए सुरक्षित है।
- जीविक स्रोतों के लिए उपयुक्त है।

## मृदा संजीवनी : बायोचार और पंचगव्य द्वारा टिकाऊ खेती का कार्याकल्प

सफीक अहमद<sup>1</sup>, अभिलाषा पाठक<sup>2</sup>, प्रदीप कुमार<sup>3</sup>, हर्ष कुमार नामदेव<sup>4</sup>,  
अजय सिंह<sup>5</sup>, हिमांशु एवं श्रुति शर्मा<sup>6</sup>

<sup>1</sup>भाकूअनुप - भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

<sup>2</sup>जी बी पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पतनगर, उत्तराखंड

<sup>3</sup>बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी

<sup>4</sup>उत्तरांचल यूनिवर्सिटी, देहरादून

### (अ) बायोचार (मृदा सुधारक)

बायोचार एक विशेष प्रकार का कोयला है जिससे कृषि अवशेषों (जैसे पुआल, डंठल) को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में उच्च तापमान पर गर्म करके बनाया जाता है। यह सामान्य कोयले से अलग है क्योंकि इसका उपयोग जलावन के लिए नहीं, बल्कि मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और कार्बन को जमीन में स्थिर करने के लिए किया जाता है। प्राचीन समय में इसका उपयोग 'टेरा प्रेटा' नामक उपजाऊ मिट्टी बनाने में किया जाता था।

#### निर्माण की विधि (ताप-अपघटन)

बायोचार बनाने की प्रक्रिया को 'ताप-अपघटन' (पायरोलिसिस) कहा जाता है। इसे विस्तार से समझने के लिए नीचे दी गई विधि का पालन किया जा सकता है:

कच्चे माल का चयन और तैयारी : बायोचार बनाने के लिए किसी भी प्रकार के जैविक कचरे का उपयोग किया जा सकता है।

- सामग्री: धान का पुआल, गेहूँ के अवशेष, मक्के के टूट, लकड़ी का बुरादा, या सूखे गोबर के उपले।
- तैयारी: सामग्री पूरी तरह सूखी होनी चाहिए। इसमें नमी 15% से कम होनी चाहिए। यदि सामग्री गीली होगी, तो कोयला बनने के बजाय अधिक धुआँ निकलेगा और गुणवत्ता भी खराब हो जाएगी।

ताप-अपघटन की प्रक्रिया (मुख्य चरण) : बायोचार बनाने का वैज्ञानिक सिद्धांत यह है कि सामग्री को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में उच्च तापमान पर गर्म किया जाए।

इसे 350°C से 500°C के बीच गर्म किया जाता है।

इसके लिए लोहे के ड्रम या जमीन में गहरे गड्ढे (कोन-टिकी विधि) का उपयोग किया जा सकता है।

ड्रम के नीचे आग जलाई जाती है और ऊपर से जैविक कचरा भरा जाता है।

जैसे ही ऊपर की परत जलने लगे, उसके ऊपर और कचरा डाल दिया जाता है। इससे नीचे वाली परत को ऑक्सीजन नहीं मिलती और वह राख बनने के बजाय सीधे कोयले (बायोचार) में बदल जाती है।

शमन (बुझाना) : जब सारा कचरा काले कोयले जैसा दिखने लगे और राख बनने की स्थिति में आने वाला हो, तब उसे तुरंत बुझाना जरूरी है। इसके लिए पानी का छिड़काव किया जाता है या ड्रम को पूरी तरह ढक्कन से बंद कर दिया जाता है ताकि हवा का संपर्क टूट जाए। बुझाने की क्रिया से बायोचार की छिद्रता (छोटे छेद) बनी रहती है।

सक्रियण (एक्टिवेशन) - सबसे महत्वपूर्ण चरण : ताजा बना हुआ बायोचार 'प्यास' की स्थिति में होता है। यदि इसे सीधे खेत में डाला जाए, तो यह मिट्टी के मौजूदा पोषक तत्वों और नमी को खुद में सोख लेता है, जिससे फसल कमजोर हो सकती है। इसे 'चार्ज' करने का तरीका यह है कि, बायोचार को कूटकर महीन कर लें। इसे गोबर की खाद, वर्मीकॉपोस्ट या पंचगव्य के साथ 1:4 के अनुपात में मिलाएँ। इस मिश्रण को 15 से 20 दिनों तक नमी के साथ छाया में रखें। इस दौरान बायोचार के सूक्ष्म छिद्रों में लाभदायक जीवाणु और पोषक तत्व भर जाते हैं।

उपयोग की मात्रा : सक्रिय होने के बाद, इसे खेत की तैयारी के समय 2 से 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाया जा सकता है। बायोचार बनाते समय निकलने वाले धुएँ से बचने के लिए इसे हमेशा खुले स्थान पर बनाएँ और सुरक्षा के लिए मास्क का प्रयोग करें।

#### लाभ और विशेषताएँ

- मिट्टी की उर्वरता: यह मिट्टी में नाइट्रोजन और पोटेशियम जैसे पोषक तत्वों को बहने से रोकता है।
- जल संचयन: इसके सूक्ष्म छिद्र मिट्टी में पानी रोकने की क्षमता बढ़ाते हैं।

- स्थिरता: यह मिट्टी में हजारों वर्षों तक बिना नष्ट हुए बना रहता है
- पर्यावरण: यह वातावरण की हानिकारक गैसों को मिट्टी में सोख लेता है

#### सावधानियाँ और हानि

- सीधा प्रयोग: यदि इसे बिना खाद मिलाए सीधे डाला जाए, तो यह शुरू में मिट्टी के पोषक तत्व खुद सोख लेता है जिससे फसल पीली पड़ सकती है
- स्वास्थ्य: इसे फैलाते समय मास्क पहनना चाहिए क्योंकि इसकी महीन धूल फेफड़ों को नुकसान पहुँचा सकती है
- मिट्टी का प्रकार: पहले से अधिक क्षारीय मिट्टी में इसका ज्यादा उपयोग नुकसानदेह हो सकता है

#### (ब) पंचगव्य (जैविक विकास वर्धक)

पंचगव्य एक जैविक तरल खाद और कीटनाशक है जो गाय से प्राप्त पाँच मुख्य पदार्थों के मिश्रण से तैयार होता है। यह पौधों को रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने और उनके समग्र विकास के लिए एक चमत्कारिक औषधि की तरह कार्य करता है।

निर्माण की विधि : पंचगव्य बनाने की विधि काफी व्यवस्थित होती है। इसे बनाने के लिए मुख्य रूप से गाय से प्राप्त पाँच अमृत तुल्य पदार्थों का उपयोग किया जाता है। नीचे इसकी पूरी प्रक्रिया विस्तार से दी गई है:

आवश्यक सामग्री (मात्रानुसार) : एक मानक घोल तैयार करने के लिए निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है:

- गाय का ताजा गोबर: 5 किलोग्राम
- गाय का घी: 500 ग्राम
- गाय का मूत्र: 3 लीटर
- गाय का दूध: 2 लीटर
- गाय का दही: 2 लीटर
- अतिरिक्त मिठास (किण्वन के लिए): 500 ग्राम गुड़ या 1 लीटर गन्ने का रस और 5-6 पके हुए केले।

निर्माण के चरण : प्रथम चरण (गोबर और घी का मिश्रण): सबसे पहले एक बड़े मिट्टी के बर्तन या प्लास्टिक के ड्रम में 5 किलो गोबर और 500 ग्राम घी को अच्छी तरह मिला लें। इस मिश्रण को 3 दिनों तक छाया में छोड़ दें। इसे दिन में दो बार लकड़ी के डंडे से हिलाएं। यह प्रक्रिया गोबर की गंध को कम करती है और घी को सक्रिय करती है। द्वितीय चरण (अन्य सामग्री का मिलान): चौथे दिन इस मिश्रण में गाय का मूत्र, दूध और दही मिला दें। इसके साथ ही गुड़ (पानी में घोलकर), गन्ने का रस और मेश

किए हुए पके केले भी डाल दें। गुड़ और केले सूक्ष्मजीवों के लिए भोजन का काम करते हैं, जिससे वे तेजी से बढ़ते हैं। तृतीय चरण (किण्वन प्रक्रिया): इस पूरे मिश्रण को अगले 15 से 21 दिनों तक छायादार स्थान पर रखें।

- हिलाना: प्रतिदिन सुबह और शाम इसे लकड़ी के डंडे से घड़ी की दिशा में अच्छी तरह चलाएं।
- ढक्कन: बर्तन को हमेशा एक महीन सूती कपड़े या जालीदार ढक्कन से ढँक कर रखें ताकि मक्खियाँ अंदर न जा सकें, लेकिन हवा का आवागमन बना रहे।

तैयार पंचगव्य की पहचान : 21 दिनों के बाद, मिश्रण से एक भीनी खुशबू आने लगती है और इसका रंग गहरा हो जाता है। यह इस बात का संकेत है कि पंचगव्य अब उपयोग के लिए पूरी तरह से तैयार है।

प्रयोग करने की विधि : छिड़काव के लिए: 3 लीटर पंचगव्य को 100 लीटर पानी में मिलाकर अच्छी तरह छान लें। इसे फसलों पर स्प्रे के रूप में उपयोग करें।

- सिंचाई के साथ: इसे सिंचाई के पानी (जैसे ड्रिप या नालियों) के साथ सीधे खेत में भी डाला जा सकता है।
- बीज उपचार: बुवाई से पहले बीजों को पंचगव्य के घोल में डुबाने से उनका अंकुरण बेहतर होता है।

#### महत्वपूर्ण सावधानियाँ

- पात्र का चयन: कभी भी तांबे, पीतल या एल्यूमीनियम के बर्तन न चुनें। केवल मिट्टी, प्लास्टिक या कंक्रीट के टैंक का ही उपयोग करें।
- भण्डारण: तैयार पंचगव्य को 6 महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है, बशर्ते इसे सीधी धूप और बारिश से बचाकर रखा जाए।
- गाय का चयन: सर्वोत्तम परिणामों के लिए भारतीय नस्ल (देशी गाय) के उत्पादों का ही उपयोग करना चाहिए।
- हानि: यदि बहुत पुराना या सड़ा हुआ पंचगव्य (सही विधि से न बना हुआ) उपयोग किया जाए, तो यह पौधों को नुकसान पहुँचा सकता है।

#### लाभ और विशेषताएँ

- विकास वर्धक: यह पौधों की जड़ों को मजबूत बनाता है और शाखाओं के फैलाव में मदद करता है।
- मिट्टी का स्वास्थ्य: इसके प्रयोग से मिट्टी में केंदुओं और लाभदायक जीवाणुओं की संख्या तेजी से बढ़ती है।

- कीट नियंत्रण: यह एक प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में भी कार्य करता है, जिससे रासायनिक दवाओं की जरूरत नहीं पड़ती।
- गुणवत्ता: पंचगव्य के प्रयोग से पैदा होने वाले फल और अनाज अधिक स्वादिष्ट और पोषिक होते हैं।

### प्रयोग विधि

- सिंचाई के पानी के साथ या छिड़काव के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है। छिड़काव के लिए आम तौर पर 3 लीटर पंचगव्य को 100 लीटर पानी में मिलाया जाता है।

### निष्कर्ष

बायोचार और पंचगव्य का संयुक्त प्रयोग मिट्टी को पुनर्जीवित करने का सबसे उत्तम तरीका है। जहाँ बायोचार मिट्टी के भौतिक ढांचे और पोषक तत्वों को स्थायी रूप से सुधारता है, वहीं पंचगव्य पौधों को तत्काल पोषण और सुरक्षा प्रदान करता है। भविष्य की टिकाऊ खेती के लिए इन दोनों का ज्ञान होना अनिवार्य है।



## अधिक फसल उत्पादन के लिए अम्लीय मिट्टी का प्रबंधन

रेशमा शिंदे<sup>1</sup>, संतोष माली<sup>1</sup>, कीर्ति सौरभ<sup>2</sup>, अवनी कुमार सिंह<sup>1</sup> एवं अनुप दास<sup>2</sup>

<sup>1</sup>भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, रांची

<sup>2</sup>भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना, बिहार

वर्तमान समय में भूमि क्षरण वैश्विक स्तर पर कृषि उत्पादन और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए एक गंभीर खतरा बन गया है। दुनिया भर के वैज्ञानिकों और कृषि विशेषज्ञों ने बार-बार इस बात पर चिंता व्यक्त की है कि यदि समय रहते इसका समाधान नहीं किया गया, तो इससे खाद्य सुरक्षा पर भी संकट गहराता जाएगा। भूमि क्षरण के अनेक कारणों में एक प्रमुख कारण मृदा की अम्लीयता है, जो मिट्टी की उर्वरता को कम करके फसल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है। विश्व में लगभग 3.95 बिलियन हेक्टेयर भूमि अम्लीय मृदा से प्रभावित है, जो कुल हिममृत्त भूमि का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा है। यदि मृदा का पी.एच. मान 7 से कम होता है तो इस प्रकार की मृदा की अभिक्रिया अम्लीय होती है और उसे अम्लीय मृदा कहते हैं। इस प्रकार की मृदाएं मुख्यतः लेटेराइट, लेटेरिटिक, लौहमय लाल और अन्य लाल मृदा समूह से संबंधित होती हैं, जिनका विकास नमीयुक्त जलवायु, अम्लीय मूल चट्टानों और भू-आकृतिक कारकों के सम्मिलित प्रभाव से होता है। अम्लीय मृदा में घुलनशील नाइट्रोजन और एल्युमिनियम की अधिकता पौधों की जड़ों की वृद्धि, पोषक तत्वों के अवशोषण और संपूर्ण स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालती है। इससे न केवल फसल की उपज घटती है, बल्कि भूमि की दीर्घकालिक उर्वरता और उत्पादन क्षमता भी क्षीण हो जाती है। अतः ऐसी भूमि को

“समस्याग्रस्त भूमि” की श्रेणी में रखा जाता है। यह लेख अम्लीय मृदाओं की जटिलता को समझने और उन्हें सुधारने की दिशा में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करता है, जो कि टिकाऊ कृषि, किसानों की आय वृद्धि और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है।

### अम्लीय मृदा का विस्तार और वितरण

भारत में अम्लीय मिट्टी का विस्तार हिमालय क्षेत्र, पूर्वी और उत्तर-पूर्वी मैदानों, प्रायद्वीपीय भारत और तटीय मैदानों में पाया जाता है। हमारे देश में 328 मिलियन हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से लगभग 89.94 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र (27.4 प्रतिशत) अम्लीय मिट्टी का है, जिसमें से 31 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में मिट्टी का पी.एच. 5.5 से नीचे है जहाँ पर अम्लीयता की समस्या गंभीर दिखाई देती है। जबकि 58.94 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में मिट्टी का पी.एच. 5.5 और 6.5 के बीच है वहाँ पर अम्लीयता की समस्या थोड़ी कम है। अम्लीय मिट्टी ज्यादातर असम, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल, झारखंड, ओडिशा, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र और तमिलनाडु राज्यों में पाई जाती है। झारखंड में भौगोलिक क्षेत्र के 7.9 मिलियन हेक्टेयर में से लगभग 6.7 मिलियन हेक्टेयर (85 प्रतिशत) अम्लीय मिट्टी से आच्छादित है, जिसमें से 1.0 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र गंभीर अम्लीयता की समस्याओं (पी.एच. <5.5) को दर्शाता है जबकि 5.7 मिलियन हेक्टेयर 5.5 और 6.5 के बीच पी.एच. के साथ अल्प अम्लीयता को दर्शाता है।

**अम्लीय मृदा के निर्माण के कारण :** अम्लीय मृदा का निर्माण मुख्य रूप से गर्म व नमीयुक्त जलवायु और अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में होता है। भारी वर्षा के कारण मिट्टी की मूल सामग्री का तीव्र अपक्षरण होता है, जिससे कैल्शियम और मैग्नीशियम जैसे आवश्यक क्षारीय तत्वों का रिसाव बढ़ जाता है। भौगोलिक दृष्टि से ये मृदाएं अवसादी प्रकृति की होती हैं, जिनमें लेटेराइट, लौहमय लाल और अन्य लाल मृदा समूह शामिल हैं, जिनका विकास भू-आकृति, अम्लीय मूल सामग्री और नमी के प्रभाव से होता है। इसके अलावा, मिट्टी में समय के साथ अपघटित होने वाले खनिज और कार्बनिक पदार्थ भी अपनी अम्लीय प्रकृति के कारण मिट्टी को अम्लीय बना देते हैं।

कृषि पद्धतियों की बात करें तो, अम्लीयता को बढ़ाने वाले नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों (जैसे अमोनियम सल्फेट और अमोनियम नाइट्रेट) का



भारत में अम्लीय मृदा का क्षेत्र

## भारत के विभिन्न राज्यों में अम्लीय मृदा क्षेत्र का विस्तार

| राज्य का नाम    | अम्लीय मृदा के अंतर्गत क्षेत्र % | राज्य का नाम | अम्लीय मृदा के अंतर्गत क्षेत्र % | राज्य का नाम | अम्लीय मृदा के अंतर्गत क्षेत्र % |
|-----------------|----------------------------------|--------------|----------------------------------|--------------|----------------------------------|
| आंध्र प्रदेश    | 10.3                             | झारखंड       | 84.9                             | मंगलूर       | 100.0                            |
| अरुणाचल प्रदेश  | 81.1                             | कर्नाटक      | 17.3                             | उत्तर प्रदेश | 1.4                              |
| असम             | 59.8                             | केरल         | 94.7                             | सिक्किम      | 85.3                             |
| बिहार           | 25.1                             | मध्य प्रदेश  | 38.0                             | तमिलनाडु     | 37.7                             |
| छत्तीसगढ़       | 77.7                             | महाराष्ट्र   | 14.9                             | त्रिपुरा     | 99.5                             |
| गोवा            | 83.3                             | मणिपुर       | 98.1                             | ओडिशा        | 55.7                             |
| हिमाचल प्रदेश   | 31.9                             | मेघालय       | 99.9                             | उत्तराखंड    | 65.3                             |
| जम्मू और कश्मीर | 7.1                              | मिजोरम       | 97.0                             | पश्चिम बंगाल | 53.6                             |

अत्यधिक उपयोग, खेत में जैविक पदार्थों को न मिलाना, और लगातार फसल अवशेषों को हटाना मिट्टी की अम्लीयता को बढ़ाता है। साथ ही, पानी के अत्यधिक उपयोग, अनुचित जल निकासी व्यवस्था या लंबे समय तक खेत के जलमग्न रहने से भी अम्लीयता विकसित होती है। औद्योगिक क्षेत्रों में यह समस्या और गंभीर हो जाती है क्योंकि वहाँ हवा में मौजूद सल्फर और नाइट्रोजन जैसी गैसों वर्षा के जल के साथ मिलकर (अम्लीय वर्षा या एसिड रेन के रूप में) भूमि में प्रवेश कर जाती है।

**अम्लीय भूमि की समस्याएँ :** अम्लीय भूमि फसलों और मिट्टी के स्वास्थ्य पर बेहद प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इस प्रकार की मिट्टी में हाइड्रोजन और एल्युमिनियम की अधिकता हो जाती है, जो पौधों की जड़ों की सामान्य वृद्धि को रोक देती है, जिससे जड़ें छोटी, मोटी और

एक जगह एकत्रित हो जाती हैं। इसके विपरीत, मिट्टी में मैंगनीज और लोहे की मात्रा अत्यधिक बढ़ जाती है, जिससे पौधे कई तरह की बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। अम्लीयता के कारण पौधों के लिए जरूरी पोषक तत्व जैसे फॉस्फोरस और मोलिब्डेनम की उपलब्धता कम हो जाती है, और साथ ही कैल्शियम, मैग्नीशियम व पोटैश की भारी कमी हो जाती है। इस पोषक तत्व असंतुलन का सीधा असर फसलों की वृद्धि और उनकी पैदावार पर पड़ता है, जिससे उत्पादन में भारी गिरावट आती है। इसके अतिरिक्त, मिट्टी की अम्लीय प्रकृति के कारण इसमें रहने वाले लाभदायक सूक्ष्मजीवों की संख्या और उनकी सक्रियता कम हो जाती है। परिणामस्वरूप, मिट्टी में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण और कार्बनिक पदार्थों का टूटना (विघटन) धीमा पड़ जाता है, जो भूमि की प्राकृतिक उपजाऊ क्षमता को और कमजोर कर देता है।

### मिट्टी की अम्लीयता के कारण उत्पादकता में अपेक्षित कमी

| श्रेणी         | पीएच    | परिमाण       | उत्पादकता में कमी |
|----------------|---------|--------------|-------------------|
| उदासीन         | 7-6.5   | कुछ नहीं     | कुछ नहीं          |
| कम अम्लीय      | 5.5-6.5 | अल्प / थोड़ा | 10 तक             |
| मध्यम अम्लीय   | 4.5-5.5 | मध्यम        | 10-20             |
| अधिक अम्लीय    | 3.5-4.5 | अधिक         | 25-50             |
| अत्यधिक अम्लीय | 3.5     | बहुत अधिक    | >30               |

**अम्लीय मृदाओं का प्रबंधन :** अम्लीय मृदाओं के प्रबंधन का उद्देश्य यह होना चाहिए कि उत्पादन की संभावना बढ़े। इसके लिए अम्लीयता को दूर करने के लिए मिट्टी की असामान्यताओं का सुधार और खेती की पद्धतियों में बदलाव किया जाना चाहिए ताकि मृदा की अम्लीय स्थितियों में फसल की इष्टतम उपज प्राप्त की जा सके। अम्लीय भूमि से पैदावार लेने के लिए अम्लीयता को उदासीन करना तथा विभिन्न

पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाना आवश्यक होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मृदा में चूने का प्रयोग किया जाता है जो पैदावार वृद्धि में भी सहायक होता है।

#### 1) चूना का उपयोग:

चूना (कैल्शियम कार्बोनेट) और अन्य चूना सामग्री मिट्टी में एसिड प्रतिक्रिया को उदासीन करके अम्लीयता को कम करते हैं। हमें ऐसे

चूना या चूना सामग्री का उपयोग करना चाहिए जिसमें उच्च शुद्धता और उच्च न्यूट्रलाइजिंग कैल्शियम (एनवी) हो और साथ ही वह महीन हो तो उसका असर अधिक और त्वरित होता है। चूना मिलाने से मिट्टी की अम्लीयता को बेअसर करने में मदद मिलती है, साथ ही सूक्ष्मजीवी गतिविधि और पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है तथा मिट्टी की भौतिक स्थिति में सुधार होता है। प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले चूने के स्रोतों में कैल्साइट और डोलोमाइट महत्वपूर्ण हैं। कैल्शियम और मैग्नीशियम के कार्बोनेट, ऑक्साइड और हाइड्रॉक्साइड को चूना सामग्री के रूप में उपयोग किए जाता है। इसके अलावा बेसिक स्लेग, ब्लास्ट फर्नेस स्लेग, पेंपर मिल से प्राप्त लाइम स्लेज, चीनी के प्लांट से प्राप्त प्रेस मड और चूना पत्थर जैसे औद्योगिक अवशिष्ट पदार्थों का प्रयोग भी अम्लीय मिट्टी के सुधार में लाभकर सिद्ध होता है।

**चूने के अनुप्रयोग की दर:** अम्लीय भूमि से उत्पादन की पूर्ण क्षमता दोहन करने के लिए चूने का प्रयोग एक सरल व उपयोगी उपाय है। चूने का प्रयोग तब किया जाता है जब मिट्टी का पी.एच. 5.5 से कम हो। चूना की उचित मात्रा मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में चूने की आवश्यकता पर निर्धारित कर उसका 1/10 भाग हर साल बुआई के समय पत्तियों में डालने से कृषि उत्पादन में बढोत्तरी की जा सकती है साथ ही भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखा जा सकता है। द्वारखण्ड में अम्लीय मिट्टी



अम्लीय मृदा के प्रबंधन हेतु पत्तिकाबद्ध रूप से चूना का अनुप्रयोग

में उत्पादकता बढ़ाने के लिए 3 से 4 किंटला/हेक्टेयर की दर से चूना डालने की अनुशंसा की जाती है, जो अम्लीयता की मात्रा के साथ-साथ उगाई जाने वाली फसलों के प्रकार पर निर्भर करता है।

## 2) जैविक पदार्थ:

जैविक पदार्थ जैसे फसल अवशेष, जैविक खाद और हरी खाद फसलों का उपयोग अम्लीय मिट्टी में फसल प्रबंधन प्रणाली एक प्रमुख घटकों के रूप में कार्य करता है। जैविक पदार्थों का नियमित अनुप्रयोग मिट्टी के पी.एच. का अचानक उतार-चढ़ाव को रोकने के लिए आवश्यक है क्योंकि यह मिट्टी की बफर क्षमता में सुधार करता है। इसके अलावा, यह फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाता है और अम्लीय मिट्टी में लोहा और एल्युमीनियम की विघातता को कम करता है।

## 3) फसल का चुनाव:

अम्लीय मिट्टी से ग्रस्त क्षेत्रों में अम्लीयता के प्रति सहनशील फसलों का चयन एक प्रभावी उपाय है। उच्च उत्पादकता प्राप्त करने के लिए हमें फसलों की ऐसी किस्मों के प्रजनन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। चावल और चाय सबसे अधिक अम्ल सहनशील फसलें हैं और अम्लीय मिट्टी से पीड़ित क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। फसलों को विभिन्न मिट्टी पी.एच. सीमा में उनके प्रदर्शन के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे:

- क) अत्यधिक अम्ल सहिष्णु फसलें: चावल, आलू, शकरकंद, जई, अरंडी आदि।
- ख) मध्यम अम्ल सहिष्णु फसलें: जौ, गेहूँ, लोबिया, मूंग, अरहर, मूंगफली आदि।
- ग) अल्प अम्लीय सहिष्णु फसलें: टमाटर, गाजर, मक्का, मटर, सोयाबीन, बैंगन आदि।
- घ) अम्ल असहिष्णु फसलें: ल्यूसर्न, ज्वार, बरसीम, प्याज, गोभी, फूलगोभी आदि।

मिट्टी की अम्लीयता के लिए फसलों की सापेक्ष सहनशीलता

| फसल                                 | पी.एच. सीमा |
|-------------------------------------|-------------|
| <b>अनाज</b>                         |             |
| मक्का, ज्वार, गेहूँ, जौ             | 6.0-7.5     |
| बाजरा                               | 5.0-6.5     |
| चावल                                | 4.0-6.0     |
| जई                                  | 5.0-7.7     |
| <b>दलहन</b>                         |             |
| फील्ड बीन्स, सोयाबीन, मटर, मसूर आदि | 5.5-7.5     |
| बरसीम                               | 6.0-7.5     |
| मूंगफली                             | 5.3-6.6     |

| फसल               | पी.एच. सीमा |
|-------------------|-------------|
| <b>नकदी फसलें</b> |             |
| गन्ना             | 6.0-7.5     |
| कपास              | 5.0-6.5     |
| आलू               | 5.0-5.5     |
| चाय               | 4.0-6.0     |

**मृदा अम्लीयता के प्रति सहिष्णु किस्मों का चयन:** मिट्टी की अम्लीयता के प्रति सहनशील फसल जीनोटाइप किस्मों का चयन अम्लीय मिट्टी में उत्पादकता बढ़ाने की एक और रणनीति है।

**मिट्टी की अम्लीयता को सहन करने वाली फसल की किस्में**

| अम्लीय मृदा क्षेत्र/राज्य | फसल                | किस्में                  |
|---------------------------|--------------------|--------------------------|
| असम                       | राई                | वरुणा, सोनमुखी           |
|                           | ग्रीष्मकालीन मूंग, | K851, सोनमुखी            |
| हिमाचल प्रदेश             | सोयाबीन            | ड्रेग, Ph1, हरसोया       |
|                           | गोभी सरसों         | ओएनके1, होयाला, एचपीएन-3 |
| झारखंड                    | उरद                | केयू-301                 |
| केरल                      | लोबिया की सब्जी    | भाम्यलक्ष्मी             |
|                           | लोबिया (झाड़ीदार)  | वी -16                   |
| मैघालय                    | फ्रांसीसी सेम      | एच यू आर-15              |
| ओडिशा                     | मूंगफली            | स्मृति                   |
|                           | अरहर               | यूपीए एस-120             |
| पश्चिम बंगाल              | सरसों              | संजुक्ता, पूसा बोल्लड    |
|                           | गेहूं              | के9107, पीबीडब्लू 343    |

**पोषक तत्व प्रबंधन :** अम्लीय मृदाओं की उर्वरता और उत्पादकता बढ़ाने के लिए पोषक तत्व प्रबंधन एक अत्यंत महत्वपूर्ण रणनीति है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, जैविक खाद और चूने का एकीकृत उपयोग अत्यधिक प्रभावी सिद्ध होता है। इस प्रकार के समन्वित पोषण प्रबंधन से मृदा की अम्लीयता को नियंत्रित करने के साथ-साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता में सुधार होता है। अम्लीय मृदा में अमोनियम आधारित उर्वरकों का उपयोग करने से बचना चाहिए, क्योंकि ये मिट्टी में अम्लीयता को और अधिक बढ़ाते हैं। इसके स्थान पर, नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग विभाजित खुराकों में करना चाहिए ताकि पौधों को निरंतर और संतुलित मात्रा में नाइट्रोजन प्राप्त हो सके, और इससे नाइट्रोजन का अपव्यय भी कम होता है। विशेष रूप से नीम-लेपित, लाख-लेपित या अन्य नियंत्रित-मुक्ति दूरिया का प्रयोग अम्लीय मृदाओं में अधिक उपयुक्त होता है, क्योंकि ये नाइट्रोजन के नियंत्रित अवशोषण में सहायक होते हैं। फास्फोरस की उपलब्धता अम्लीय मृदाओं में कम हो जाती है क्योंकि यह आयरन और एल्युमिनियम के साथ मिलकर अधुलनशील यौगिक बना लेता है, जिसे फास्फोरस निषारण कहा जाता है। इस समस्या से बचने के लिए फॉस्फेटिक उर्वरकों को पौधों की जड़ों के पास पंक्ति में उचित गहराई पर देना चाहिए, जिससे उनका अधिकतम उपयोग सुनिश्चित किया जा सके। साथ ही, जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट या हरी

खाद के प्रयोग से न केवल पोषक तत्वों की आपूर्ति होती है, बल्कि यह मिट्टी की कार्बनिक सामग्री, सूक्ष्मजीव गतिविधि और जलधारण क्षमता को भी बढ़ाती है। अतः पोषक तत्वों का यह समेकित और संतुलित प्रबंधन अम्लीय मृदाओं के सुधार एवं स्थायी कृषि के लिए एक उत्कृष्ट उपाय है।

**उत्तम जल विकास:** अम्लीय मृदा अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं, जहाँ अत्यधिक जलभराव के कारण मृदा का अम्लीकरण होता है और फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जलभराव की स्थिति में मृदा में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे अवांछनीय रासायनिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं और हानिकारक घुलनशील तत्व जैसे एल्युमिनियम और लौह अधिक सक्रिय हो जाते हैं, जो पौधों के लिए विषैले होते हैं। अतः ऐसी मृदाओं में उत्तम जल निकासी व्यवस्था अत्यंत आवश्यक है, जिससे अतिरिक्त पानी खेत से शीघ्र बाहर निकाला जा सके। इसके लिए खुली नालियाँ, अंतःस्थलीय पाइप ड्रेनेज, ऊँची क्यारी-नाली पद्धति तथा नियंत्रित सिंचाई जैसे उपाय अपनाए जा सकते हैं। उचित जल निकासी से मृदा की वायुसंचार क्षमता में वृद्धि होती है, लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ती है, मृदा का पीएच संतुलित रहता है और फसलों की जड़ वृद्धि, पोषक तत्वों का अवशोषण तथा कुल उत्पादकता में सुधार होता है। इस

प्रकार, अम्लीय मृदाओं के सुधार और कृषि उत्पादकता बढ़ाने हेतु जल निकासी की उचित व्यवस्था एक अनिवार्य रणनीति है।

**जल भराव:** निचली भूमि वाले क्षेत्रों में जल भराव एक पारंपरिक, किंतु प्रभावशाली तकनीक मानी जाती है, जिसका उपयोग अम्लीय मृदा की प्रकृति को सुधारने के लिए किया जा सकता है। इस विधि में खेत में कुछ समय के लिए पूर्ण रूप से पानी भर दिया जाता है, जिससे मिट्टी में उपस्थित हानिकारक अम्लीय तत्वों का निष्कासन होता है और कुछ रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण मिट्टी का पी.एच. स्तर धीरे-धीरे तटस्थता की ओर बढ़ने लगता है। जल भराव के दौरान मिट्टी में ऑक्सीजन की अनुपस्थिति उत्पन्न होती है, जिससे हाइड्रोजन आयन की सक्रियता कम हो जाती है और मिट्टी कम अम्लीय हो जाती है। इसके साथ ही, मिट्टी में उपस्थित कुछ हानिकारक धातुएँ जैसे एलुमिनियम और आयरन के घुलनशील रूप स्थायी योगिकों में बदल जाते हैं, जो पौधों के लिए कम विषाक्त होते हैं। हालाँकि, यह ध्यान देना आवश्यक है कि जल भराव का यह सकारात्मक प्रभाव केवल उतने समय तक ही रहता है जब तक खेत में पानी स्थायी रूप से भरा रहता है। जैसे ही जल निकाल दिया जाता है और मिट्टी पुनः सूखने लगती है, मिट्टी की अम्लीयता धीरे-धीरे लौट सकती है। अतः इस तकनीक का प्रभाव अल्पकालिक होता है, और इसे अन्य सुधारात्मक उपायों जैसे चूना या जैविक अवशेषों के प्रयोग के साथ संयोजन में प्रयोग करने पर अधिक स्थायी लाभ मिल सकता है।

**कृषि-वैज्ञानिकी प्रणाली :** अम्लीय मृदा वाले क्षेत्रों, विशेषतः पहाड़ी और ढलवाँ इलाकों में मृदा कटाव जैसी समस्याएँ अत्यंत गंभीर हैं, जो भूमि की उत्पादकता को लगातार घटा रही हैं। इन क्षेत्रों में कृषि-वैज्ञानिकी और कृषि-बागवानी प्रणालियाँ मृदा संरक्षण तथा सतत कृषि के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। कृषि-वैज्ञानिकी प्रणाली के अंतर्गत वृक्ष, झाड़ियाँ और फसलों का एक साथ मिश्रित रूप से रोपण किया जाता है, जिससे मृदा की सतह पर स्थायी पौध आवरण बना रहता है। इससे मृदा का कटाव कम होता है, वर्षा जल की अवशोषण

क्षमता बढ़ती है, और जैविक पदार्थों की मात्रा में भी वृद्धि होती है। वृक्षों की पत्तियाँ गिरकर मिट्टी में सड़ती हैं, जिससे कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्व बढ़ते हैं, और मिट्टी की भौतिक संरचना में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, नाइट्रोजन-स्थिरीकरण करने वाले वृक्ष जैसे अलिबजिया, गिलरिकीडिया, और टैफ्रोसिया मृदा की उर्वरता बढ़ाने में सहायक होते हैं। कृषि-बागवानी प्रणाली के अंतर्गत फसलों के साथ-साथ फलों के पौधे जैसे आम, अनरुद, लीची आदि लगाए जाते हैं, जो न केवल विविध उत्पादन के स्रोत होते हैं बल्कि लंबी अवधि में किसानों को आर्थिक स्थिरता भी प्रदान करते हैं। यह प्रणाली मृदा के पोषक तत्वों के चक्र को संतुलित बनाए रखने में सहायक होती है तथा खेत की उत्पादकता में दीर्घकालिक सुधार लाती है।

### निष्कर्ष

अम्लीय मृदाएँ भारतीय कृषि व्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती प्रस्तुत करती हैं, विशेषकर पूर्वी, उत्तर-पूर्वी और प्रायद्वीपीय भारत के अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में। इन मृदाओं की अम्लीय प्रकृति न केवल मृदा की भौतिक और रासायनिक संरचना को प्रभावित करती है, बल्कि पौधों की जड़ वृद्धि, पोषक तत्वों की उपलब्धता और सूक्ष्मजीवी क्रियाशीलता को भी बाधित करती है, जिससे फसल उत्पादकता में गंभीर गिरावट आती है। उपर्युक्त लेख में वर्णित प्रबंधन उपाय जैसे चूना का उचित उपयोग, जैविक पदार्थों का समावेश, पोषक तत्वों का संतुलित प्रबंधन, जल निकासी की समुचित व्यवस्था, जल भराव तकनीक का सीमित प्रयोग, फसल एवं किस्मों का उपयुक्त चयन, और कृषि-वैज्ञानिकी प्रणाली का कार्यान्वयन अम्लीय मृदाओं के सुधार एवं उनके सतत उपयोग हेतु अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं। इन वैज्ञानिक उपायों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अपनाकर अम्लीय भूमि की उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है, जिससे न केवल किसानों की आजीविका सुरक्षित होगी बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा एवं भूमि संसाधनों की दीर्घकालिक स्थिरता भी सुनिश्चित की जा सकेगी।



## जैविक खेती का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

हरप कुमार नामदेव<sup>1</sup> एवं सफीक अहमद<sup>1,2</sup>

<sup>1</sup>बुटेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी

<sup>2</sup>भाकूअनुप - भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ की अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर करती है। जैविक खेती वर्तमान समय में सतत कृषि विकास की आवश्यकता बन गई है। यह खेती की ऐसी प्रणाली है जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, मृदा की गुणवत्ता सुधारने तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने पर आधारित है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से जहाँ एक ओर भूमि की उत्पादकता धीरे-धीरे घटती गई, वहीं दूसरी ओर मानव स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ने लगा। ऐसे में जैविक खेती किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के लिए लाभकारी विकल्प के रूप में उभरी है। हरित क्रांति के बाद रसायनों के प्रयोग से प्रारम्भिक वर्षों में कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, जिससे किसानों को अधिक उपज प्राप्त हुई। लेकिन समय के साथ इनके अत्यधिक और असंतुलित उपयोग ने मृदा की उर्वरता, उसकी जैविक संरचना तथा पर्यावरणीय संतुलन को गंभीर रूप से प्रभावित किया।

जैविक खेती में प्राकृतिक खादों एवं जैविक पदार्थों का उपयोग किया जाता है, जिससे मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है और उसकी जलधारण क्षमता में सुधार होता है। इससे मृदा लंबे समय तक उपजाऊ बनी रहती है। इसके अतिरिक्त, जैविक खेती में फसल चक्र, मिश्रित खेती तथा हरी खाद जैसी तकनीकों का उपयोग करके भूमि की उर्वरता को प्राकृतिक रूप से बनाए रखा जाता है। यह पद्धति मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या को बढ़ाती है, जो पौधों की वृद्धि और पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी जैविक खेती अत्यंत महत्वपूर्ण है। रासायनिक खेती के कारण जल स्रोतों का प्रदूषण, वायु में विषैले तत्वों की वृद्धि तथा जैव विविधता का ह्रास देखने को मिलता है, जबकि जैविक खेती इन समस्याओं को कम करने में सहायक होती है। इससे प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग संभव होता है तथा पारिस्थितिकी तंत्र सुरक्षित रहता है। हालाँकि जैविक खेती को अपनाने में कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे प्रारम्भिक वर्षों में कम उत्पादन, जागरूकता की कमी तथा जैविक उत्पादों के विपणन की समस्याएँ। फिर भी सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों और प्रोत्साहनों के माध्यम से किसानों को जैविक खेती अपनाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। जैविक खेती में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के स्थान पर प्राकृतिक संसाधनों जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, वर्मी कम्पोस्ट तथा जैव उर्वरकों का उपयोग किया जाता है।

### मृदा स्वास्थ्य का अर्थ

मृदा स्वास्थ्य से आशय मृदा की उस क्षमता से है जिसके द्वारा वह पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराकर उनकी वृद्धि एवं विकास में सहायता करे तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखे। स्वस्थ मृदा में पर्याप्त मात्रा में जैविक पदार्थ, सूक्ष्मजीव, पोषक तत्व, उचित जलधारण क्षमता तथा संतुलित pH पाया जाता है।

### जैविक खेती के प्रमुख घटक

जैविक खेती में निम्नलिखित प्राकृतिक साधनों का उपयोग किया जाता है:

गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक, फसल चक्र, मिश्रित खेती, जैविक कीटनाशक, मल्लिचंग ये सभी तत्व मृदा को प्राकृतिक रूप से पोषण प्रदान करते हैं और उसकी गुणवत्ता बनाए रखते हैं।

### जैविक खेती का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

**मृदा में जैविक पदार्थ की वृद्धि:** जैविक पदार्थों के प्रयोग से मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है, जो मिट्टी की गुणवत्ता सुधारने में सहायक होती है। जैविक कार्बन मिट्टी को भुरभुरा और मुलायम बनाता है, जिससे उसमें वायु और जल का संचार बेहतर ढंग से हो पाता है। ऐसी मिट्टी में पौधों की जड़ें आसानी से फैलती हैं और उनका विकास अधिक प्रभावी होता है। जैविक पदार्थ मृदा में ह्यूमस का निर्माण करते हैं। ह्यूमस मिट्टी का वह महत्वपूर्ण घटक है जो पोषक तत्वों को संचित करके पौधों को धीरे-धीरे उपलब्ध कराता है। इससे मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है और फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त, ह्यूमस मिट्टी की जल धारण क्षमता को भी बढ़ाता है, जिससे सूखे की स्थिति में भी फसलों को पर्याप्त नमी मिलती रहती है। इस प्रकार जैविक खेती मृदा स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण तथा टिकाऊ कृषि विकास के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होती है।

**मृदा की जलधारण क्षमता में वृद्धि:** जैविक पदार्थ मृदा के कणों को जोड़कर उसकी संरचना को बेहतर बनाते हैं। इससे मृदा में पानी को रोकने की क्षमता बढ़ जाती है। विशेषकर रेतीली मिट्टी में जैविक खेती से जलधारण क्षमता में उल्लेखनीय सुधार होता है। जलधारण क्षमता बढ़ने से सिंचाई की आवश्यकता कम होती है, सूखे की स्थिति में फसलें अधिक समय तक जीवित रहती हैं, भूजल संरक्षण में सहायता मिलती है। इस प्रकार जैविक खेती जल संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

**सूक्ष्मजीवों की सक्रियता में वृद्धि:** स्वस्थ मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से ये सूक्ष्मजीव नष्ट हो जाते हैं। जैविक खेती में प्राकृतिक खादों का उपयोग होने से सूक्ष्मजीवों को अनुकूल वातावरण मिलता है। मुख्य लाभकारी सूक्ष्मजीव नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु, फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु, माइकोराइजा फफूंद, केंचुए ये सूक्ष्मजीव मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं तथा मृदा को जीवंत बनाए रखते हैं।

**मृदा की संरचना में सुधार:** जैविक खेती मृदा के भौतिक गुणों को सुधारती है। जैविक पदार्थ मृदा कणों को स्थिर बनाते हैं जिससे मिट्टी का कटाव कम होता है। मृदा की संरचना बेहतर होने से वायु संचार बढ़ता है, जड़ों का विकास अच्छा होता है, पौधों को पर्याप्त ऑक्सीजन मिलती है। मृदा का संतुलित संघटन होने से उसकी उत्पादकता लंबे समय तक बनी रहती है।

**पोषक तत्वों की उपलब्धता में संतुलन:** रासायनिक खेती में अक्सर एक या दो प्रमुख तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटैश का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है, जिससे मृदा में पोषक असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। जैविक खेती में विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक खादों का उपयोग होने से पोषक तत्व धीरे-धीरे और संतुलित मात्रा में उपलब्ध होते हैं। जैविक खेती से सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी कम होती है, पौधों को निरंतर पोषण मिलता है, मृदा की उर्वरता स्थायी बनी रहती है।

**मृदा प्रदूषण में कमी:** रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से मृदा प्रदूषित हो जाती है। इससे मृदा की गुणवत्ता घटती है तथा भोजन में विषले तत्व पहुँच जाते हैं। जैविक खेती में प्राकृतिक कीटनाशकों एवं जैव उर्वरकों का उपयोग किया जाता है, जिससे मृदा प्रदूषण कम होता है। इसके परिणामस्वरूप पर्यावरण सुरक्षित रहता है, जल स्रोत प्रदूषित नहीं होते, मानव स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव कम पड़ता है।

**मृदा अपरदन में कमी:** जैविक खेती में फसल चक्र, मल्लिच तथा मिश्रित खेती जैसी तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इससे मृदा की ऊपरी उपजाऊ परत सुरक्षित रहती है और जल तथा वायु द्वारा होने वाला कटाव कम होता है। विशेषकर पहाड़ी एवं वर्षा प्रभावित क्षेत्रों में जैविक खेती मृदा संरक्षण का प्रभावी माध्यम है।

**मृदा की पीएच संतुलन बनाए रखना:** रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से मृदा अम्लीय या क्षारीय हो सकती है। जैविक खेती मृदा के पीएच को संतुलित बनाए रखने में सहायता करती है। संतुलित pH होने से पौधों को पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध होते हैं।

**कार्बन संचयन एवं जलवायु परिवर्तन में योगदान:** जैविक खेती मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाकर कार्बन संचयन को बढ़ावा देती है। इससे वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा कम होती है और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में सहायता मिलती है। आज

विश्वभर में जैविक खेती को "जलवायु अनुकूल कृषि" के रूप में भी देखा जा रहा है। जलवायु अनुकूल कृषि के तीन मुख्य उद्देश्य होते हैं: कृषि उत्पादकता और किसानों की आय में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन क्षमता बढ़ाना, ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करना।

### जैविक खेती के सामाजिक एवं आर्थिक लाभ

**उत्पादन लागत में कमी:** जैविक खेती में स्थानीय संसाधनों जैसे गोबर, फसल अवशेष एवं जैविक खादों का उपयोग किया जाता है। इससे किसानों की बाहरी संसाधनों पर निर्भरता कम होती है और लागत घटती है।

**किसानों की आय में वृद्धि:** जैविक उत्पादों की बाजार में अधिक मांग होती है और इनके अच्छे मूल्य मिलते हैं। इससे किसानों की आय बढ़ सकती है।

**स्वास्थ्य सुरक्षा:** जैविक उत्पाद रसायन मुक्त होते हैं, इसलिए वे मानव स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित माने जाते हैं।

### जैविक खेती की चुनौतियाँ

हालाँकि जैविक खेती के अनेक लाभ हैं, लेकिन इसके सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं:

1. प्रारम्भिक वर्षों में उत्पादन कम हो सकता है।
2. जैविक खाद की पर्याप्त उपलब्धता नहीं होती।
3. किसानों में जागरूकता की कमी।
4. जैविक उत्पादों के विपणन की समस्या।
5. प्रमाणन प्रक्रिया जटिल एवं महंगी होना।

इन चुनौतियों को दूर करने के लिए सरकारी सहायता, प्रशिक्षण एवं अनुसंधान की आवश्यकता है।

### भारत में जैविक खेती को बढ़ावा देने के प्रयास

भारत सरकार द्वारा जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ चलाई जा रही हैं, जैसे—

**परम्परागत कृषि विकास योजना:** परम्परागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई), जिसे 2015 में शुरू किया गया था, भारत में केंद्र प्रायोजित योजना (सीएसएस) है जो क्लस्टर आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से जैविक खेती को बढ़ावा देती है। जैविक इनपुट, पीजीएस प्रमाणन और कृषि संबंधी बुनियादी ढाँचे के विकास के लिए सहायता प्रदान करती है। यह पारंपरिक, पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ कृषि को प्रोत्साहित करती है, जिससे रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है और मिट्टी की सेहत में सुधार होता है तथा किसानों की आय बढ़ती है। तीन वर्षों में 10 लाख हेक्टेयर भूमि को जैविक खेती के अंतर्गत परिवर्तित करने का लक्ष्य है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य रसायन-मुक्त, पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देना, मृदा की उर्वरता और स्थिरता बढ़ाना और किसानों में अपनी उपज और विपणन का प्रबंधन करने की क्षमता विकसित करना है।

**राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम:** भारत में जैविक खेती को बढ़ावा देने और उसके प्रमाणीकरण के लिए एक प्रमुख सरकारी पहल है। इस कार्यक्रम को एपीडा द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। इसे 2001 में वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय द्वारा लॉन्च किया गया था। यह कार्यक्रम मुख्य रूप से जैविक उत्पादों के निर्यात और अंतरराष्ट्रीय मानकों के साथ सामंजस्य स्थापित करने पर केंद्रित है। इस कार्यक्रम के मानकों को यूरोपीय संघ, स्विट्जरलैंड और अमेरिका जैसे देशों द्वारा मान्यता प्राप्त है, जिससे भारतीय जैविक उत्पादों का निर्यात आसान हो जाता है। यह एक 'थर्ड-पार्टी' प्रमाणन प्रणाली है, जहाँ मान्यता प्राप्त एजेंसियाँ खेतों और प्रसंस्करण इकाइयों का निरीक्षण कर उन्हें प्रमाणित करती हैं। सफलतापूर्वक प्रमाणित होने वाले उत्पादों को 'इंडिया ऑर्गेनिक' लोगो का उपयोग करने की अनुमति मिलती है, जो उनकी शुद्धता का प्रतीक है।

**मिशन ऑर्गेनिक वैल्यू चेन डेवलपमेंट:** यह योजना भारत के 8 उत्तर-पूर्वी राज्यों—अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा में लागू है। इसे 2015-16 में शुरू किया गया था, जिसका उद्देश्य किसानों को केवल उत्पादक नहीं, बल्कि 'उद्यमी' बनाना है। यह खेती से लेकर प्रसंस्करण और विपणन तक पूरी मूल्य श्रृंखला विकसित करती है। यह 'क्लस्टर' आधारित मॉडल पर काम करती है, जिसमें किसानों को किसान उत्पादक संगठनों या कंपनियों में संगठित किया जाता है। इसमें प्रमाणीकरण राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (थर्ड पार्टी) मानकों के तहत किया जाता है, ताकि उत्तर-पूर्वी उत्पादों को अंतरराष्ट्रीय निर्यात बाजारों तक पहुँचाया जा सके। किसानों को बीज, खाद और जैविक खेती के अन्य आदानों के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है। किसानों को संकलन केंद्र कोल्ड स्टोरेज, पैकेजिंग इकाइयाँ और कस्टम हायरिंग सेंटर बनाने के लिए सब्सिडी दी जाती है राज्यों को अपने स्वयं के जैविक ब्रांड विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

**जैविक खेती अनुसंधान परियोजनाएँ:** भारत में जैविक खेती को वैज्ञानिक आधार देने के लिए कई अनुसंधान परियोजनाएँ चलाई जा

रही हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा संचालित नेटवर्क प्रोजेक्ट हैं। प्रमुख अनुसंधान परियोजनाएँ और पहल:

**नेटवर्क प्रोजेक्ट ऑन ऑर्गेनिक फार्मिंग:** इसे 2004 में भाकृअनुप द्वारा भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम के नेतृत्व में शुरू किया गया था। जिसका उद्देश्य विभिन्न कृषि-पारिस्थितिकी क्षेत्रों के लिए जैविक खेती की 'पैकेज ऑफ प्रैक्टिस' (खेती की विधि) विकसित करना। वर्तमान में यह देश भर के 13 से अधिक केंद्रों (राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद संस्थानों) में चल रहा है।

**अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना:** यह परियोजना जैविक खेती को 'इटीग्रेटेड फार्मिंग सिस्टम' के एक हिस्से के रूप में देखती है। इसमें पशुधन, फसल और जैविक खाद के बीच आपसी समन्वय पर शोध किया जाता है।

**राष्ट्रीय जैविक और प्राकृतिक खेती केंद्र:** गाजियाबाद स्थित यह केंद्र जैविक और प्राकृतिक खेती के मानकों, परीक्षण और क्षमता निर्माण पर शोध और प्रशिक्षण प्रदान करता है।

## निष्कर्ष

जैविक खेती मृदा स्वास्थ्य को सुधारने का एक प्रभावी एवं टिकाऊ उपाय है। यह मृदा की उर्वरता, जलधारण क्षमता, जैविक पदार्थों की मात्रा तथा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाती है। साथ ही मृदा प्रदूषण एवं अपरदन को कम करके पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि किसान रासायनिक खेती पर पूर्ण निर्भरता कम करें और जैविक खेती की ओर बढ़ें। यदि वैज्ञानिक तकनीकों एवं सरकारी सहयोग के साथ जैविक खेती को अपनाया जाए तो भविष्य में स्वस्थ मृदा, सुरक्षित पर्यावरण तथा पोषणयुक्त खाद्यान्न सुनिश्चित किया जा सकता है।

इस प्रकार जैविक खेती केवल कृषि पद्धति नहीं, बल्कि सतत विकास एवं मानव कल्याण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।



## फल वृक्षों की उच्च सघनता रोपण प्रणाली

गायत्री सिन्हा, प्रीति सुधा नायक, शिप्रा प्रधान, पाणिग्राही प्रत्ययूषा भगवती एवं शिव मंगल प्रसाद

भाकृअनुप - केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक

फल बाग प्रबन्धन के अन्तर्गत प्रति इकाई क्षेत्र से ज्यादा उपज प्राप्त करने के लिए फल वृक्षों को निकट दूरियों पर रोपण की तकनीक को उच्च सघनता रोपण विधि कहते हैं। इसे पारम्परिक विधि की तुलना में ज्यादा उन्नत माना जाता है। उच्च सघनता रोपण विधि टिकाऊपन लिए हुए आर्थिक रूप से अपनायी जा सकने वाली उत्पादन रणनीति है। यह प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन को तीव्र गति से बढ़ाने वाली बहुत ही कारगर विधि है।

बहुवार्षिक फल वृक्षों के संदर्भ में उच्च सघनता रोपण विधि ज्यादा फायदेमंद है क्योंकि इसमें जमीन का सही उपयोग होता है, वृक्ष के उपरी भाग का प्रबन्धन सही तरीके से हो पाता है और उच्च गुणवत्ता वाले फलों की अधिक उपज प्राप्त होती है जिसका बाजार मूल्य अधिक होता है। इसमें फल वृक्षों की कटाई - छटाई की जाती है, टपक सिंचाई पद्धति से तरल उर्वरकों द्वारा पोषण दिया जाता है तथा पादप वृद्धि नियामकों का प्रयोग किया जाता है। इस रोपण प्रणाली का अनेक फल वृक्षों जैसे आम, सेव, अमरुद, केला और निम्बूवर्गीय फलों पर अभूतपूर्व सफलता देखी गयी है। इस प्रणाली के हिसाब से सर्वप्रथम यूरोप में 1960 के अन्त में हुआ था। इसका मुख्य उद्देश्य फलों के उत्पादन को बढ़ाना था। उत्पादकता के दो मुख्य अवयव उपज और गुणवत्ता हैं। उच्च सघनता रोपण विधि का मुख्य उद्देश्य फल वृक्षों को बिना कोई क्षति पहुँचाये उसके वानस्पतिक वृद्धि और उत्पादन के बीच संतुलन बनाये रखना है। भूमि की सीमित उपलब्धता, पारम्परिक उद्यानों की कम उत्पादकता और फलों के बाजार में इसके मूल्य वृद्धि के लिए इस रोपण प्रणाली को अपनाया गया। भारतवर्ष में फलों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता अन्य बहुत से विकसित देशों की तुलना में बहुत ही कम है जो कि उच्च सघनता रोपण विधि की जरूरत को उजागर करता है। पारम्परिक फल उद्यानों में फलदार पौधे अधिक दूरी पर लगाये जाते हैं जिसमें प्राकृतिक तौर पर क्षत्रक को विस्तार मिलता है जबकि उच्च सघनता रोपण विधि में दूरी कम रखी जाती है और ड्रिप सिंचाई, समेकित कीट-व्याधि प्रबंधन, खाद-उर्वरक प्रबंधन और समय - समय पर पौधों की सही तरीके से कटाई - छटाई की जाती है जिससे प्रति पौधे या हेक्टेयर से ज्यादा गुणवत्तायुक्त उपज और अधिक आमदनी प्राप्त होती है। यह छोटे और सीमांत बागवानों के आजीविका को सुधार कर ज्यादा मजबूती प्रदान करता है।

### उच्च सघनता रोपण विधि के मूल सिद्धांत -

- सूर्य की रोशनी के अधिकतम उपयोग के लिए उच्च सघनता रोपण विधि आधारित होती है ताकि प्रकाश संश्लेषण अच्छी प्रकार से हो और इस तरह ज्यादा उपज की प्राप्ति हो।
- फल वृक्षों की बढ़वार को इस विधि में बीने प्रजातियों के चयन से, बीने प्रकारों से तथा सम-समय पर कटाई - छटाई से नियंत्रण में रखा जाता है ताकि प्रबन्धन ठीक ढंग से की जा सके।
- फल वृक्ष के क्षत्रक को सही तरीकों से प्रबन्धन द्वारा नियंत्रण में रखना सूर्य की किरणों को अच्छी तरह से प्रवेश करने देता है तथा वृक्षों को आपस में भिड़ने नहीं देता जिससे कीट - व्याधि का प्रकोप नहीं होता।
- उचित पौध जनसंख्या रखी जाती है जिससे भूमि, जल और पोषक तत्वों का बिना किसी प्रतिस्पर्धा के सही तरह से उपयोग हो।
- ड्रिप सिंचाई पद्धति से लगातार जल और पोषक तत्व उपलब्ध कराये जाते हैं ताकि सतत उच्च उत्पादन प्राप्त होता रहे।
- इस पद्धति में शीघ्र फलन पर ध्यान केन्द्रित होता है और देर से फलन को कम करने की सोची जाती है।
- वायु के आवा - गमन के प्रवाह ठीक तरह से होने के कारण कीट - व्याधि का प्रबन्धन खुद हो जाता है।
- इसमें कटाई - छटाई और अन्य अन्तःसस्य क्रियाएं आसानी से की जा सकती हैं।



## विभिन्न फल वृक्षों में उच्च सघनता रोपण विधि

**आम:** उच्च सघनता रोपण विधि से आम के पौधों को 5 मी. X 5 मी. (400 पौधे प्रति हेक्टेयर) की दूरी पर लगाना सघन रोपण प्रणाली है। यदि यही दूरी 2.5 मी. X 2.5 मी. (1600 पौधे प्रति हेक्टेयर) रखी जाये तो यह अल्ट्रा सघन रोपण प्रणाली हो जायेगी। इन प्रणालियों से पारम्परिक उद्यानों की तुलना में 200% से अधिक फलों की प्राप्ति होती है। फल वृक्ष के क्षत्रक को नियंत्रित करने के लिए इसमें प्रति वर्ष 10 से 15 प्रतिशत टहनियों (शाखाओं) की कटाई-छटाई की जाती है। मुख्य शाखाओं को उपर से और फल दे चुके प्रशाखाओं को हटाया जाता है जिससे द्वितीयक और तृतीयक शाखाओं की वृद्धि होती है। ड्रिप सिंचाई पद्धति से लगातार जल और पोषक तत्व उपलब्ध कराये जाते हैं। इस विधि में बीने और संकर प्रजातियों जैसे आम्रपाली और दशहरी के चयन को प्राथमिकता दी जाती है। पारम्परिक उद्यानों (2.0 टन प्रति हेक्टेयर) की तुलना में इसमें 9.6 टन प्रति हेक्टेयर गुणवत्ता वाले फलों की उपज मिलती है। शीघ्र फलन देने वाले पौधों की प्रजातियों से उच्च सघनता रोपण विधि से 2 - 3 वर्षों में ही फलों की प्राप्ति होने लगती है।

**सेव:** सेव के बागों में उच्च सघनता रोपण विधि को हम चार श्रेणियों में बाँट सकते हैं-कम सघन (250 से कम पौधे प्रति हेक्टेयर), मध्यम सघन (250 से 500 पौधे प्रति हेक्टेयर), उच्च सघन (500 - 1250 पौधे प्रति हेक्टेयर) और अल्ट्रा उच्च सघन (1250 से अधिक पौधे प्रति हेक्टेयर)। सबसे अधिक बीने और अर्ध बीने रूटस्टॉक जैसे एम 9, एम 26, एम एम 106 और एम 27 का चयन किया जाता है। फल वृक्ष के क्षत्रक को नियंत्रित करने के लिए कटाई - छटाई की पद्धतियों में स्पिन्दल बुश, इवाफे पिरामिड, पालमेट, इसपेलियर और काडॉन विधियों का पालन किया जाता है। पौधों को नियंत्रित करने का काम पौध के स्थापन के बाद से उसके जीवन पर्यन्त किया जाता है तथा इस काम के लिए कटाई - छटाई के अलावा अनेक मादप नियामक रसायनों जैसे - पैक्लोलोब्यूट्राजोल, प्रोमालिन, एन ए ए, कारबाइल, इथेफोन और डायामिनोजाईड का उपयोग सेव के बागों में किया जाता है। इससे पौधे नियंत्रण में रहते हैं तथा फलों की गुणवत्ता और उपज बढ़ जाती है। इस प्रणाली से लगभग 140 टन प्रति हेक्टेयर सेव फल का उत्पादन प्राप्त होता है जबकि पारम्परिक विधि के बागानों से सिर्फ 5 टन प्रति हेक्टेयर। उच्च सघनता रोपण विधि का प्रयोग भारतवर्ष के जम्मू - कश्मीर और हिमाचल प्रदेश जैसे राज्यों में सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है।

## उच्च सघनता रोपण विधि की विशेषताएँ

- भूमि और अन्य संसाधनों का दक्षतापूर्ण उपयोग - जल का उचित उपयोग। इस प्रणाली में ड्रिप सिंचाई के प्रयोग से 30 - 40 % पानी की बचत होती है।
- फल वृक्षों पर शीघ्र फलन और जल्द आर्थिक वापसी को बढ़ावा देता है।

- फलों के गुणवत्ता में इजाफा - सूर्य की रोशनी का पौधों के सभी भागों में एकसार मिलना फलों के आकार, रंग और गुणवत्ता को बढ़ाता है।
- उच्च उत्पादन और शीघ्र लाभ - प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पौधों की संख्या और अच्छे प्रबंधन के कारण उत्पादन और लाभ में बढ़ोत्तरी।
- प्रबंधन में आसानी और यांत्रिकीकरण - बीने और नियंत्रित पौधों के कारण प्रबंधन में आसानी और यांत्रिकीकरण में भी।
- मजदूरों के उपर कम खर्च - छोटे और एक समान क्षत्रक होने के कारण सभी कार्य (कटाई - छटाई, रसायनों का छिड़काव एवं फलों की तुड़ाई) आसानी से और कम मजदूरों के श्रम से पूर्ण हो जाता है।
- पर्यावरण अनुकूल एवं टिकाऊ - रसायनों का कम छिड़काव, कम सिंचाई जल का उपयोग और कम भूमि का अधिग्रहण करके ज्यादा उपज के साथ ज्यादा लाभ, अतः पर्यावरण अनुकूल एवं टिकाऊ।
- फल की गुणवत्ता और बाजार में माँग में वृद्धि जो कि छोटे और सीमांत किसानों की आजीविका में सुधार लाता है।



## सारांश

फल उत्पादन प्रणाली में उच्च सघनता रोपण विधि एक सक्षम और अति कारगर तकनीक के रूप में उभर कर आया है। यह वैज्ञानिक विधि से उद्यान प्रबंधन की तकनीक है जिसमें प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन के साथ गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसमें सिद्धांतों का अनुपालन जैसे कम दूरी पर पौधों का रोपण, बीने प्रजातियों का चयन, क्षत्रक प्रबंधन, ड्रिप विधि से सिंचाई, समन्वित पोषक तत्व एवं कीट - रोग प्रबंधन इत्यादि फलों का उत्पादन कई गुणा बढ़ा ही देते हैं साथ ही उनका आकार और गुणवत्ता भी एक समान एवं अच्छी हो जाती है जिससे उत्पादकों को उच्च बाजार मूल्य भी प्राप्त होता है। यह विधि छोटे और सीमान्त किसानों के लिए बहुत ही कारगर है क्योंकि उन्हें कम समय में आय की प्राप्ति होने लगती है। समुचित तकनीकी ज्ञान और वैज्ञानिक विधियों का अनुपालन करके फल उत्पादन प्रणाली में क्रांति लाई जा सकती है। आधुनिक उद्यानिकी के लिए यह उत्तरोत्तर उँचाईयों छूनेवाली प्रणाली है।

## सरसों की खेती में उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनीक का उपयोग

अमित नामदेव<sup>1</sup>, रूपल जैन<sup>2</sup> एवं विनोद कुमार भार्गव<sup>1</sup>

<sup>1</sup>भाकृअनुप - केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल

<sup>2</sup>ओडिशा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर

### परिचय

भारत में सरसों (ब्रैसिका एसपीपी.) और राई एक प्रमुख तिलहन फसल है, जिसका उपयोग खाद्य तेल उत्पादन, चारे और हरी खाद के रूप में किया जाता है। बढ़ती जनसंख्या और खाद्य सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए, कृषि अभियांत्रिकी का उपयोग करके सरसों की खेती को अधिक कुशल, उत्पादक और टिकाऊ बनाया जा सकता है। आधुनिक मशीनरी, उन्नत सिंचाई प्रणाली, मृदा संरक्षण तकनीकों और कटाई उपरांत प्रबंधन में कृषि अभियांत्रिकी की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

### भूमि तैयारी में कृषि अभियांत्रिकी का योगदान

सरसों की अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए भूमि की उचित तैयारी आवश्यक होती है। कृषि अभियांत्रिकी निम्नलिखित उन्नत तकनीकों के माध्यम से भूमि की गुणवत्ता में सुधार करता है:

#### गहरी जुताई हेतु रिवर्सिबल मोल्डबोर्ड हल:

यह एक उन्नत कृषि यंत्र है, जिसका उपयोग खेत की गहरी जुताई के लिए किया जाता है। यह हल विशेष रूप से कठोर और अधिक अवरोध वाली मिट्टी को पलटने, खरपतवार और फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाने और जल संचयन क्षमता बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। इसके रिवर्सिबल डिजाइन के कारण इसे दोनों दिशाओं में घुमाया जा सकता है, जिससे ईंधन और समय की बचत होती है। यह हल मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने और फसल उत्पादन में वृद्धि करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिससे किसानों को बेहतर और अधिक प्रभावी जुताई का लाभ मिलता है।



#### लेजर लैंड लेवेलर:

लेजर लैंड लेवेलर एक आधुनिक कृषि तकनीक है, जिसमें खेत की सतह को समतल करने के लिए लेजर गाइडेड उपकरणों का उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में लेजर ट्रांसमीटर, रिसीवर और



स्क्रेपर की मदद से भूमि को समान ऊँचाई पर समतल किया जाता है, जिससे सिंचाई जल की समान वितरण, जल बचत, फसल उत्पादन में वृद्धि और खरपतवार नियंत्रण में सहायता मिलती है। यह तकनीक पारंपरिक समतलीकरण विधियों की तुलना में अधिक सटीक, समय की बचत करने वाली और लागत प्रभावी होती है, जिससे किसानों को अधिक उपज और बेहतर मृदा संरक्षण का लाभ मिलता है।

#### रोटावेटर:

रोटावेटर एक उपयोगी कृषि उपकरण है, जिसका उपयोग मिट्टी की तैयारी के लिए किया जाता है। यह एक शक्तिशाली मशीनरी है, जो खेत में कठोर मिट्टी को तोड़ने, जुताई करने और हवा प्रदान करने के लिए इस्तेमाल की जाती है, विशेष रूप से बीज लगाने से पहले। रोटोवेटर में धूर्णन करने वाले ब्लेड होते हैं, जो मिट्टी को प्रभावी रूप से तोड़कर उसकी संरचना को सुधारते हैं।



#### बीज बुवाई में आधुनिक यंत्रों की भूमिका

सही समय पर उचित बीज मात्रा और कतार से बुवाई सरसों की उपज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके लिए कृषि अभियांत्रिकी द्वारा विकसित मशीनें उपयोगी सिद्ध होती हैं:

#### सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल:

सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल सरसों की बुवाई में अत्यंत उपयोगी उपकरण है, जो बीज और उर्वरक को एक साथ उचित गहराई पर समान रूप से डालने में मदद करता है। यह तकनीक पारंपरिक विधियों की तुलना में अधिक सटीक, समय व श्रम की बचत करने वाली और उत्पादकता बढ़ाने वाली होती है। इसके उपयोग से सरसों के पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रारंभिक अवस्था से ही मिलते हैं, जिससे अंकुरण बेहतर होता है, फसल की वृद्धि तेज होती है और पैदावार अधिक होती है। साथ ही, यह मशीन उर्वरकों की सही मात्रा डालकर उनकी बर्बादी को कम करती है, जिससे उत्पादन लागत भी घटती है।



**जरीरो टिल फर्टी सीड ड्रिल:** जरीरो टिल फर्टी सीड ड्रिल एक उन्नत कृषि यंत्र है, जो बिना किसी पूर्व मृदा तैयारी या जुताई के सीधे धान की कटाई के बाद फसल की बुवाई करने में सक्षम है। इस मशीन के उपयोग से डीजल, समय और श्रम की बचत होती है। यह बीज और उर्वरक को एक साथ उचित गहराई पर डालती है, जिससे फसल का अंकुरण तेज और समान होता है। इसके अलावा, यह मशीन फसल की समय से बुवाई करने में मदद करती है, जिससे उत्पादन क्षमता बढ़ती है। विशेष रूप से, यह धान-गेहूँ फसल प्रणाली में बड़े पैमाने पर उपयोग की जाती है, जिससे किसानों को कम लागत में अधिक लाभ मिलता है।



**इनब्रॉडिड प्लेट प्लांटर:** सरसों की बुवाई के लिए एक प्रभावी कृषि उपकरण है, जो बीजों को समान दूरी और गहराई पर डालने में सहायता करता है। इसकी मुकी हुई प्लेट प्रणाली बीजों को नियंत्रित मात्रा में गिराने में मदद करती है, जिससे बीज दर में बचत होती है और पौधों का उचित विकास सुनिश्चित होता है। यह प्लांटर सरसों की फसल के लिए सटीक और एकसमान कतारों में बुवाई करता है, जिससे पौधों को पोषक तत्व, सूर्य प्रकाश और स्थान पर्याप्त मात्रा में मिलता है। इसके उपयोग से अंकुरण दर में सुधार, फसल उत्पादन में वृद्धि और श्रम एवं समय की बचत होती है, जिससे किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है।



## सिंचाई और जल प्रबंधन में कृषि अभियांत्रिकी का महत्व

सरसों की सिंचाई और जल प्रबंधन में कृषि अभियांत्रिकी का महत्वपूर्ण योगदान है, जिससे जल की बचत, फसल उत्पादकता में वृद्धि और लागत में कमी संभव होती है। स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली जैसी आधुनिक तकनीकों के उपयोग से जल का कुशल प्रबंधन किया जाता है, जिससे नमी की सही मात्रा बनाए रखी जाती है और पानी की बर्बादी कम होती है। लेजर लैंड लेवलिंग से खेत की सतह को समतल कर जल वितरण को समान किया जाता है, जिससे सरसों की फसल को आवश्यक नमी मिलती है। साथ ही, मृदा नमी सेंसर और स्मार्ट सिंचाई



प्रणाली के माध्यम से मिट्टी की नमी की निगरानी कर सिंचाई की उचित योजना बनाई जा सकती है। इन तकनीकों के उपयोग से पानी की कम उपलब्धता में भी उच्च उत्पादन संभव होता है, जिससे किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है।

## खाद एवं कीटनाशक प्रबंधन में कृषि अभियांत्रिकी

सरसों की अच्छी वृद्धि के लिए उर्वरकों और कीटनाशकों का संतुलित उपयोग आवश्यक होता है।

### ड्रोन स्प्रेडिंग टेक्नोलॉजी:

कीटनाशकों और नैनो-फर्टिलाइजर के छिड़काव के लिए ड्रोन स्प्रेडिंग सिस्टम का उपयोग किया जाता है, जिससे कम मात्रा में अधिक क्षेत्र कवर किया जाता है और फसल उत्पादन लागत घटती है।



**नेपसेक स्प्रेयर:** सरसों की खेती में नेपसेक स्प्रेयर का उपयोग कीटनाशक और फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए किया जाता है, जिससे फसल को रोगों और कीटों से बचाया जा सके। यह खरपतवार नियंत्रण में भी सहायक होता है, क्योंकि इससे हर्बिसाइड्स का समान रूप से छिड़काव किया जा सकता है। इसके अलावा, सूक्ष्म पोषक तत्वों और फोलियर स्प्रे खादों के छिड़काव में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान होता है। नेपसेक स्प्रेयर की मदद से दवाओं का सटीक और समान वितरण किया जाता है, जिससे फसल पर अधिक प्रभाव पड़ता है। यह उपकरण हल्का, किफायती और उपयोग में आसान होता है, जिससे किसान कम श्रम में अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

## कटाई और कटाई उपरांत प्रबंधन

सरसों की फसल की समय पर और प्रभावी कटाई उत्पादन और गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए आवश्यक होती है।

**कंबाइन हार्वेस्टर:** स्मार्ट सेंसर युक्त मिनी कंबाइन हार्वेस्टर सरसों की कटाई को अधिक तेज और सटीक बनाता है।

**ग्रेसिंग और क्लीनिंग मशीन:** सरसों के दानों को अलग करने और सफाई के लिए सरसों ग्रेसर व एयर क्लीनर मशीनों का उपयोग किया जाता है, जिससे गुणवत्तापूर्ण उपज प्राप्त होती है।

**भंडारण तकनीक:** आधुनिक साइलो स्टोरेज सिस्टम और एयर-टाइट स्टोरेज बैग का उपयोग करके सरसों के बीजों को नमी और कीट संक्रमण से बचाया जाता है।

## जैव ऊर्जा और मूल्य संवर्धन में कृषि अभियांत्रिकी का योगदान

सरसों की खेती के अवशेषों का सही उपयोग कर अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है।

**बायोडीजल उत्पादन:** सरसों के तेल से जैव ईंधन (बायोडीजल) तैयार किया जा सकता है, जिससे ऊर्जा आत्मनिर्भरता बढ़ती है।

**बायोचार और बायोगैस उत्पादन:** सरसों के अवशेषों से बायोचार और बायोगैस उत्पादन किया जा सकता है, जो पर्यावरण अनुकूल ऊर्जा स्रोत हैं।

**प्रसंस्करण तकनीक:** सरसों के तेल के परिष्करण, पैकेजिंग और मूल्य संवर्धन के लिए उन्नत तेल निष्कर्षण मशीनें और कोल्ड प्रेस टेक्नोलॉजी का उपयोग किया जाता है।

## निष्कर्ष

सरसों और राई की खेती में कृषि अभियांत्रिकी का समावेश उत्पादन, गुणवत्ता और स्थायित्व को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आधुनिक यंत्रीकृत खेती, सिंचाई प्रबंधन, स्मार्ट कृषि तकनीकों और कटाई उपरांत प्रबंधन से न केवल किसानों की आय में वृद्धि होती है, बल्कि पर्यावरण संतुलन और जैविक कृषि को भी बढ़ावा मिलता है। यदि कृषि अभियांत्रिकी तकनीकों को प्रभावी रूप से अपनाया जाए, तो भारत सरसों उत्पादन में नए आयाम स्थापित कर सकता है और खाद्य तेल आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर हो सकता है।



## धान परती क्षेत्रों में दलहनी फसलों की खेती: खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की नई दिशा

आशीष कुमार राउत<sup>1</sup>, अनूप चंद्र<sup>2</sup>, जी. के. सुजयानंद<sup>3</sup>, ऋषिकेश कुमार<sup>4</sup> एवं नरेंद्र कुमार<sup>5</sup>

<sup>1</sup>भाकृअनुप - भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, खुर्दा

<sup>2</sup>भाकृअनुप - भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर

### प्रस्तावना

भारत विश्व के प्रमुख धान उत्पादक देशों में से एक है। वर्ष 2024-25 में देश में लगभग 47 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में धान की खेती की गई, जिससे 149 मिलियन टन से अधिक धान उत्पादन का अनुमान है। धान की कटाई के बाद रबी मौसम में बड़ी मात्रा में कृषि भूमि बिना किसी दूसरी फसल के खाली रह जाती है। इस भूमि को धान परती कहा जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर के अनुसार भारत में लगभग 11.7-12.0 मिलियन हेक्टेयर धान परती क्षेत्र उपलब्ध है। इनमें लगभग 82 प्रतिशत क्षेत्र पूर्वी भारत के राज्यों - ओडिशा, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड तथा असम में स्थित है। यह क्षेत्र देश में दलहन उत्पादन बढ़ाने की सबसे बड़ी अप्रयुक्त संभावनाओं में से एक माना जाता है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा दलहन उपभोक्ता होने के साथ-साथ सबसे बड़ा उत्पादक भी है, फिर भी बढ़ती जनसंख्या और पोषण संबंधी आवश्यकताओं के कारण दलहन की मांग निरंतर बढ़ रही है। ऐसे में धान परती क्षेत्रों में दलहनी फसलों का विस्तार खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ-साथ किसानों की आय बढ़ाने का प्रभावी माध्यम बन सकता है।

### धान परती क्षेत्र: कृषि विकास का अप्रयुक्त संसाधन

धान की कटाई के बाद खेतों में पर्याप्त अवशिष्ट नमी उपलब्ध रहती है, किंतु सिंचाई सुविधाओं का अभाव, देर से कटाई, गुणवत्तायुक्त बीजों की कमी, कृषि यंत्रीकरण का सीमित उपयोग तथा वैज्ञानिक तकनीकों की अपर्याप्त जानकारी के कारण किसान दूसरी फसल नहीं ले पाते। परिणामस्वरूप लाखों हेक्टेयर भूमि लगभग चार से पाँच महीने तक अनुपयोगी पड़ी रहती है।

अनुमानतः ओडिशा में लगभग 2.96 मिलियन हेक्टेयर, छत्तीसगढ़ में 2.86 मिलियन हेक्टेयर, पश्चिम बंगाल में 1.16 मिलियन हेक्टेयर, असम में 1.04 मिलियन हेक्टेयर तथा झारखंड में लगभग 0.48 मिलियन हेक्टेयर धान परती क्षेत्र उपलब्ध है। केवल इन राज्यों में ही देश के अधिकांश धान परती क्षेत्र केंद्रित हैं। यदि इन क्षेत्रों में वैज्ञानिक तकनीकों के माध्यम से दलहनी फसलों का विस्तार किया जाए तो राष्ट्रीय दलहन उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि संभव है।

### दलहनी फसलें क्यों हैं सर्वोत्तम विकल्प?

धान परती क्षेत्रों में उपलब्ध अवशिष्ट नमी का सबसे प्रभावी उपयोग दलहनी फसलें कर सकती हैं। इनकी जल आवश्यकता अपेक्षाकृत कम होती है तथा अधिकांश फसलें 70-110 दिनों में तैयार हो जाती हैं। इन पौधों की जड़ों में रहने वाले राइजोबियम जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार दलहनी फसलें 30-100 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर तक जैविक रूप से स्थिर कर सकती हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है और अगली फसल के लिए नाइट्रोजन की उपलब्धता में भी सुधार होता है।

दलहन प्रोटीन, आयरन, जिंक, फोलिक अम्ल तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों के उत्कृष्ट स्रोत हैं। भारत में कुपोषण और प्रोटीन की कमी की समस्या को देखते हुए धान परती क्षेत्रों में दलहन उत्पादन बढ़ाना केवल कृषि ही नहीं, बल्कि सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

### कौन-सी फसलें सबसे अधिक उपयुक्त हैं?

भाकृअनुप-भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान तथा भाकृअनुप-राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान (एनआरआई), कटक द्वारा किए गए अनुसंधानों से स्पष्ट हुआ है कि धान परती क्षेत्रों में मसूर, उड़द, मूंग, चना, मटर तथा खेसारी (जहाँ इसकी खेती अनुमत हो) जैसी फसलें सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। इन फसलों में मसूर, उड़द और मूंग कम अवधि, सीमित नमी तथा कम लागत में बेहतर उत्पादन देने के कारण विशेष रूप से उपयुक्त मानी जाती हैं। पूर्वी भारत के अनेक क्षेत्रों में धान कटाई के तुरंत बाद बिना जुताई के उड़द एवं मूंग की बुवाई से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं।

### वैज्ञानिक तकनीकें: सफलता की कुंजी

धान परती क्षेत्रों में सफलता का सबसे महत्वपूर्ण आधार समय पर बुवाई है। वैज्ञानिकों की सलाह है कि धान की कटाई के तीन से सात दिनों के भीतर बुवाई कर देनी चाहिए ताकि खेत में उपलब्ध अवशिष्ट नमी का अधिकतम उपयोग हो सके। बुवाई में विलंब होने पर मिट्टी की नमी तेजी से कम हो जाती है, जिससे अंकुरण और पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।

जीरो टिलेज अथवा न्यूनतम जुताई तकनीक धान परती क्षेत्रों के लिए अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुई है। इस तकनीक से खेत की नमी संरक्षित रहती है, उत्पादन लागत कम होती है, श्रम की बचत होती है तथा बुवाई समय पर संभव हो पाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न परीक्षणों में पाया गया है कि जीरो टिलेज तकनीक अपनाने से लागत में कमी आने के साथ-साथ समय पर बुवाई के कारण उत्पादकता में भी सुधार होता है।

राइजोबियम तथा फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु (पीएसबी) से बीजोपचार करने पर जड़ों में अधिक गांठें बनती हैं तथा पौधों द्वारा पोषक तत्वों का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से होता है। इसके साथ ही मृदा परीक्षण के आधार पर फॉस्फोरस, सल्फर, जिंक तथा बोरॉन जैसे पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग दलहन फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

### ओडिशा और छत्तीसगढ़ से प्रेरक अनुभव

पूर्वी भारत में धान परती क्षेत्रों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए पिछले कुछ वर्षों में अनेक कार्यक्रम संचालित किए गए हैं। ओडिशा में भाकृअनुप, कृषि विश्वविद्यालयों तथा राज्य कृषि विभाग के सहयोग से धान परती क्षेत्रों में दलहन एवं तिलहन विस्तार कार्यक्रम चलाए गए। इन कार्यक्रमों के अंतर्गत किसानों को उन्नत बीज, तकनीकी प्रशिक्षण तथा जीरो टिलेज आधारित बुवाई की जानकारी उपलब्ध कराई गई। हाल के वर्षों में लगभग 71 हजार हेक्टेयर धान परती क्षेत्र में दलहन एवं तिलहन फसलों का विस्तार किया गया, जिससे एक लाख से अधिक किसानों को प्रत्यक्ष लाभ मिला।



धान परती क्षेत्रों में मृग की खेती

इसी प्रकार छत्तीसगढ़ में भी धान कटाई के बाद उड़द, चना तथा मसूर की खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रदर्शन कार्यक्रम आयोजित किए गए। इन प्रयासों से अनेक जिलों में फसल विविधीकरण को प्रोत्साहन मिला तथा किसानों की आय में वृद्धि दर्ज की गई। इन सफलताओं ने यह सिद्ध किया है कि यदि उपयुक्त तकनीक, गुणवत्तायुक्त बीज और समय

पर मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाए तो धान परती क्षेत्रों को लाभकारी कृषि प्रणाली में बदला जा सकता है।

### उत्पादन एवं आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यदि धान परती क्षेत्रों के केवल 2-3 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में भी दलहनी फसलों का सफल विस्तार किया जाए तो देश में लाखों टन अतिरिक्त दलहन का उत्पादन संभव है। इससे न केवल किसानों की आय में वृद्धि होगी, बल्कि दलहन के आयात पर निर्भरता भी घटेगी। साथ ही मिट्टी की उर्वरता में सुधार, रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की बचत तथा कृषि प्रणाली की स्थिरता में भी उल्लेखनीय योगदान मिलेगा।

### चुनौतियाँ और आगे की राह

धान परती क्षेत्रों में दलहनी खेती के विस्तार के लिए अभी भी अनेक चुनौतियाँ मौजूद हैं। सिंचाई सुविधाओं का अभाव, धान की ढेर से पकने वाली किस्में, गुणवत्तायुक्त बीजों की सीमित उपलब्धता, छोटे एवं बिखरे हुए खेत, कृषि यंत्रीकरण की कमी तथा किसानों तक वैज्ञानिक तकनीकों का सीमित प्रसार प्रमुख बाधाएँ हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए शीघ्र पकने वाली धान किस्मों का विस्तार, जीरो टिलेज सीड ड्रिल जैसी मशीनों की उपलब्धता, बीज ग्रामों का विकास, किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) की भागीदारी तथा कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता है। इसके साथ ही राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (दलहन) तथा राज्य सरकारों की फसल विविधीकरण योजनाओं को धान परती क्षेत्रों से प्रभावी रूप से जोड़ना समय की मांग है।

### निष्कर्ष

भारत के लगभग 12 मिलियन हेक्टेयर धान परती क्षेत्र कृषि विकास का एक अनमोल संसाधन हैं, जिनका अभी तक पूर्ण उपयोग नहीं हो पाया है। इन क्षेत्रों में दलहनी फसलों की वैज्ञानिक खेती न केवल किसानों की आय बढ़ा सकती है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता, जल उपयोग दक्षता, जलवायु अनुकूल कृषि तथा राष्ट्रीय पोषण सुरक्षा को भी नई दिशा दे सकती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केंद्रों, राज्य कृषि विभागों और किसानों के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित कर धान परती क्षेत्रों को उत्पादक बनाया जाए। यदि ऐसा किया गया तो आने वाले वर्षों में यही क्षेत्र भारत की दलहन आत्मनिर्भरता और टिकाऊ कृषि विकास के सबसे मजबूत आधारों में से एक सिद्ध होगा।



## पर्यावरण के अनुकूल उभरती ग्रीन इंजीनियरिंग तकनीकी द्वारा मृदा शुद्धि के साथ बहुमूल्य धातुओं की प्राप्ति का विस्तृत विश्लेषण

प्रदीप कुमार<sup>1</sup>, गौरव शर्मा<sup>2</sup>, साफीक अहमद<sup>3</sup> एवं विजय कुमार यादव<sup>4</sup>

<sup>1</sup>भाकूअनुप - भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

<sup>2</sup>सरदार बल्लभ भाई पटेल कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय, मेरठ

पौधे हमारे जीवन के लिए अपरिहार्य हैं क्योंकि वे हमें भोजन, ऑक्सीजन प्रदान करते हैं और पर्यावरण के संरक्षण में भी मदद करते हैं। मिट्टी सभी कृषि संसाधनों, खाद्य सुरक्षा, वैश्विक अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय गुणवत्ता का आधार है। मानवीय गतिविधियाँ जिनमें कृषि के द्वारा दोहन या फिर कृषि की सघनता का अभ्यास, तेजी से बढ़ता शहरीकरण और जलसंधरण को पूरा करती तेजी से बढ़ती हुई औद्योगिक इकाइयाँ आदि के द्वारा भारी धातुओं और उपधातुओं, रेडियोन्यूक्लाइड्स अणु, कार्बनिक - अकार्बनिक यौगिक, कृषि रसायनों और तेल रिसाव के द्वारा पर्यावरण में प्रदूषकों का एकत्रित होना एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। शहरीकरण और औद्योगीकरण के विकास के साथ, मिट्टी और भूजल भारी धातुओं कोपर, लेड, जिंक, निकल, कैडमियम, क्रोमियम, आयर्न, मैंगनीज और कार्बनिक प्रदूषकों हाइड्रोकार्बन, सुगंधित यौगिक, फिनोल, ऑर्गेनो-क्लोरीनयुक्त यौगिक, कीटनाशक आदि से तेजी से प्रदूषित हुई है, जो भूजल, खाद्य सुरक्षा और मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करती है। इसलिए, दूषित मिट्टी के स्थायी प्रबंधन और उपचार के लिए प्रभावी तकनीक विकसित करने की बड़ी आवश्यकता है।

फाइटोरेमिडिएशन (फाइटो का अर्थ है पौधा और रेमेडियम का अर्थ है सतुलन बहाल करना) पर्यावरण को साफ करने के लिए पौधों का उपयोग है। फाइटोरेमिडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधों का उपयोग मिट्टी और तलछट से प्रदूषकों को हटाने, स्थानांतरित करने, स्थिर करने और उन्हें नष्ट करने के लिए किया जाता है। भारत में पर्यावरणीय भार और स्वास्थ्य प्रभावों के संदर्भ में मुख्य खतरनाक धातुएँ कोपर, लेड, जिंक, निकल, कैडमियम, क्रोमियम, आयर्न, मैंगनीज और पारा हैं। इनका स्रोत ज्यादातर मानवजनित औद्योगिक गतिविधियाँ वाहन आदि। कुछ पारंपरिक भौतिक-रासायनिक मृदा उपचार तकनीकों जैसे कि भस्मीकरण, ठोसकरण, मृदा-धुलाई, वाष्प निष्कर्षण और थर्मल डिऑक्सीकरण का उपयोग किया जाता है। लेकिन ये विधियाँ आमतौर पर द्वितीयक बायु या भूजल प्रदूषण का कारण बनती हैं, जो अंततः मिट्टी की उत्पादकता को कम करती हैं। इसके अलावा, ये सभी विधियाँ महंगी हैं और विकासशील देशों में कृषि भूमि के उपचार के लिए इनका सीमित उपयोग होता है। जिससे पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, इन प्रदूषकों से पर्यावरण के

अनुकूल तरीके से निपटने के लिए दुनिया भर में बड़ी संख्या में ऐसे पौधों की पहचान की गई है जो विभिन्न भारी धातुओं के उच्च संचायक हैं। अपनी लागत प्रभावशीलता और पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण फाइटोरेमिडिएशन का महत्व दुनिया भर में बढ़ रहा है।

### भारी धातु प्रदूषकों के स्रोत और पर्यावरण पर प्रभाव

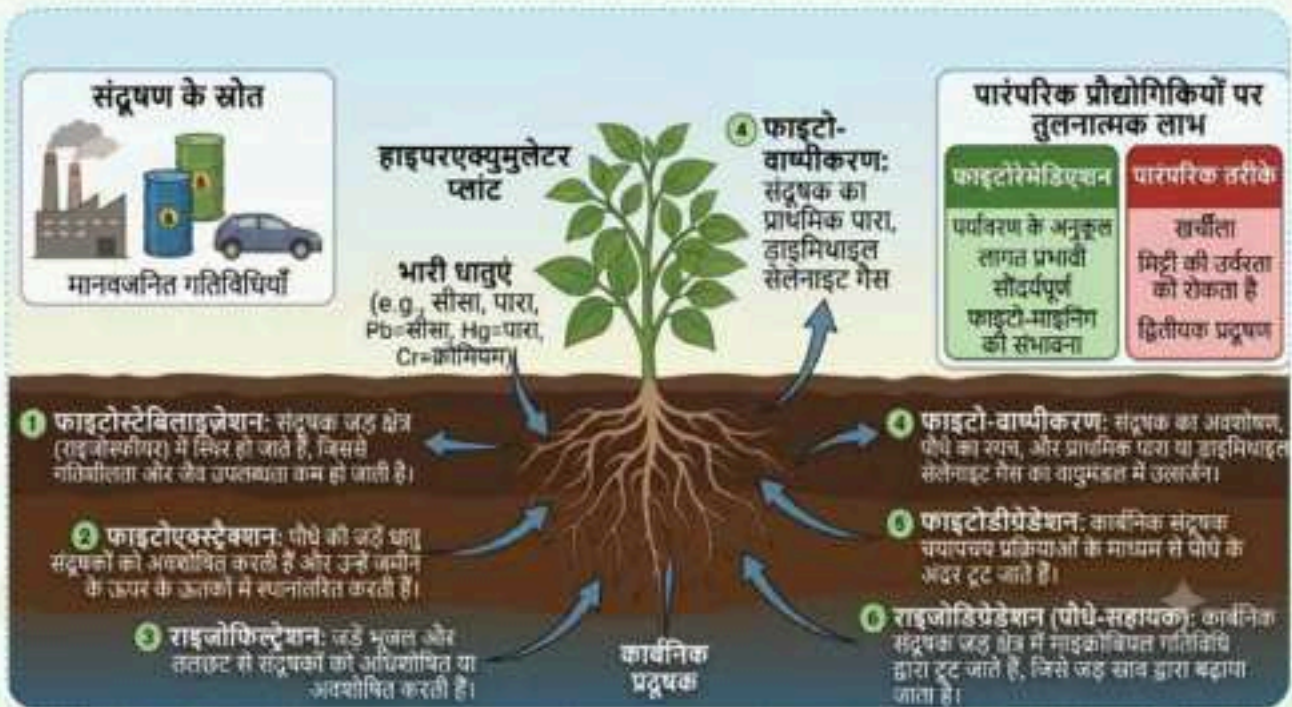
मानवीय गतिविधियाँ, कृषि औद्योगिकीकरण, तीव्र शहरीकरण और तेजी से बढ़ती हुई औद्योगिक इकाइयाँ आज के समय में पर्यावरणीय प्रदूषण का कारण बन रही हैं, जो एक वैश्विक समस्या बन चुका है। जिसमें शामिल भारी धातुओं और उपधातुओं, रेडियोन्यूक्लाइड्स, कार्बनिक यौगिकों, कृषि रसायनों और तेल रिसाव द्वारा गंभीर प्रदूषण, मिट्टी और पानी में मिलकर उन्हें जहरीला बना देती हैं। इनके स्रोत को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। प्राकृतिक और मानवजनित।

### प्राकृतिक स्रोत: प्रकृति चक्र

प्रकृति में भारी धातुएँ हमेशा से मौजूद रही हैं। चट्टानों के अपक्षय, ज्वालामुखी गतिविधियाँ, धूल भरी आधियों हवा के कटाव, और जंगल की आग के कारण भारी धातुएँ पर्यावरण में मुक्त होती हैं। लेकिन प्राकृतिक रूप से निकलने वाली इन धातुओं की मात्रा इतनी कम होती है कि प्रकृति का अपना पारिस्थितिकी तंत्र इन्हें अपनी गतिविधियों में उपयोग कर लेता है। ये आमतौर पर ज्यादा हानिकारक नहीं होते जब तक कि कोई बड़ी प्राकृतिक आपदा न आए।

### मानवजनित स्रोत: आधुनिकता की कीमत

वैश्विक जनसंख्या में तीव्र वृद्धि और उसके परिमाण स्वरूप भोजन पानी ऊर्जा लकड़ी और अन्य परिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की बढ़ती मांग से प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण पर गंभीर दबाव पैदा हो गए हैं। बढ़ती जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करने के लिए औद्योगिक क्रांति, खनन गतिविधियाँ, उद्योगों और आवासीय क्षेत्रों से अपशिष्टों के निपटान, उर्वरकों, कीटनाशकों और शहरीकरण ने भारी धातुओं और उपधातुओं, रेडियोन्यूक्लाइड्स, की मात्रा को खतरनाक स्तर तक पहुँचा दिया है। खदानों से निकलने वाला कचरा, धातुओं को पिघलाने वाली भट्टियाँ से निकलने वाला कचरा, और इलेक्ट्रोप्लेटिंग जैसे उद्योग



सीधे तौर पर जहरीले रसायनों को नदियों और जमीन में छोड़ देते हैं। जिससे पानी और मृदा दोनों ही भारी धातुओं से दूषित हो रहे हैं। कोयले से चलने वाले बिजली संयंत्र हवा में भारी मात्रा में पारा और कैडमियम जैसी भारी धातुओं को उत्सर्जित करते हैं। दूषित पानी से सिंचाई, आवासीय क्षेत्रों से अपशिष्टों के निपटान, उर्वरकों और कीटनाशकों के भारी उपयोग के कारण मिट्टी दूषित हो गई है। जो मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए एक गंभीर खतरा बना हुआ है।

### भारी धातु प्रदूषक एक वैश्विक चिंता

भारी धातु प्रदूषक अपनी गैर-विनाशकारी क्षमता और गैर-बायोडिग्रेडेबिलिटी के कारण वैश्विक चिंता का विषय बने हुए हैं। खनन के परिणामस्वरूप भारी धातुओं से दूषित मिट्टी के कई गुणों में बदलाव होते हैं, जैसे चम्पू विद्युत चालकता और उद्घरण विनिमय क्षमता आदि शामिल हैं। भारी धातु आयन बहुत कम सांद्रता में भी कैंसरकारी और उत्प्रेरककारी होते हैं। लगभग सभी भारी धातुएं उच्च सांद्रता में जहरीली होती हैं। लेड, मरकरी, आर्सेनिक और कैडमियम जैसी धातुएं मानव अंगों, विशेषकर किडनी, लीवर और तंत्रिका तंत्र को स्थायी रूप से खराब कर सकती हैं।

### फाइटोरेमिडिएशन की कार्यप्रणाली

फाइटोरेमिडिएशन एक उभरती हुई और पर्यावरण के अनुकूल ग्रीन इंजीनियरिंग तकनीक है। इस प्रक्रिया में, पौधों का उपयोग पर्यावरण से खतरनाक रसायनों को हटाने, नष्ट करने या अलग करने के लिए किया जाता है। मुख्य रूप से प्रदूषकों को हटाने के लिए छह तंत्रों फाइटोएक्स्ट्रैक्शन, फाइटोस्टेबिलाइजेशन, राइजोफिल्ट्रेशन,

फाइटोवोलैटाइजेशन, फाइटोडिग्रेडेशन और फाइटोसेलिनेशन का उपयोग किया जाता है।

पादप स्थिरीकरण तंत्र में जड़ों या राइजोस्फीयर का उपयोग विषाक्त पदार्थों और धातु प्रदूषकों को निष्क्रिय या स्थिर करने के लिए किया जाता है ताकि वे भूजल और हवा में न मिलें। यह प्रदूषकों की जैव-उपलब्धता को सीमित करती है, जिसके परिणामस्वरूप विषाक्त प्रभाव कम हो जाते हैं। विषाक्त पदार्थों और धातु प्रदूषकों को फाइटोकेमिकल सावों की सहायता से जड़ों या राइजोस्फीयर में स्थिर किया जा सकता है, या परिवहन प्रोटीन की सहायता से जड़ की सतह पर फंसाया जा सकता है, या कोशिकीय प्रक्रियाओं के माध्यम से जड़ कोशिका के रिकिका के अंदर अलग किया जा सकता है। भारी धातुओं और कुछ कार्बनिक संदूषकों को शर्करा, प्रोटीन और अमीनो अम्लों के व्युत्पन्नों के साथ संयुग्मन द्वारा या राइजोस्फीयर में जटिल यौगिक बनाकर गैर-विषाक्त यौगिकों में परिवर्तित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, आर्सेनिक को पौधे की जड़ों की एमिडमिस रिकिकाओं के भीतर फेरिक सल्फेट के साथ जोड़कर ट्रांस-थायोलेट का एक त्रिसंयोजक कॉम्प्लेक्स बनाकर उसे स्थिर कर देती है। पौधे के एंजाइम ग्लूटाथियोन सिंथेस द्वारा सावित ग्लूटाथियोन, कार्बनिक प्रदूषकों के साथ संयुग्मित उनके प्रभाव को विषमृत करने में सहायक पाया गया है। हेलियथस एसपीपीएस की जड़ों से सावित एंजाइम या कार्बनिक रसायन टेट्रासाइक्लिन और ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन जैसे यौगिकों के विघटन और निष्कासन को उत्प्रेरित करते हैं। कुछ एंजाइम या कार्बनिक रसायन जो मिट्टी और मिट्टी में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवी से सावित होते हैं और पौधे की जड़ के संपर्क या प्रदूषकों की उपस्थिति

के कारण निकलते हैं, वे जहरीले रसायनों के स्थिरीकरण में मदद करते

हैं। विभिन्न जैव संचय वर्धक संदूषक स्थिरीकरण की दक्षता में सुधार कर सकते हैं।

## भारी धातुएं, उनके स्रोत और दुष्प्रभाव

| भारी धातु आयन | स्रोत                                | जहरीला प्रभाव                                             | पौधों का उपयोग                                                                                                             |
|---------------|--------------------------------------|-----------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| क्रोमियम      | लकड़ी का उपचार, चमड़ा कमाना, कीटनाशक | अल्सर, उल्टी, दस्त, बुखार, आनुवंशिक क्षति, कोमा           | —                                                                                                                          |
| कैडमियम       | इलेक्ट्रोप्लेटिंग, बैटरी और उर्वरक   | नर्वस सिस्टम को नुकसान, डीएनए क्षति, फेफड़ों का कैंसर     | जेन्थियम स्ट्रुमेरियम, पेलागोनियम हॉटॉरम, अरेबिडोथिसस हेलेरी                                                               |
| तांबा         | कवकनाशी, बिजली के तार, रंजक          | आंखों और मुंह में जलन, सिरदर्द, चक्कर आना, मस्तिष्क क्षति | आइड्रोनिफा क्रैसिपस, टाइफा एंगस्टिफोलिया                                                                                   |
| पारा          | खनन, प्लास्टिक, बैटरी, उर्वरक        | मस्तिष्क क्षति, जन्म दोष, गर्भपात, सुनने की शक्ति खोना    | —                                                                                                                          |
| सीसा          | बैटरी, धातु उत्पाद                   | हीमोग्लोबिन संश्लेषण में बाधा, गुर्दे पर प्रभाव           | सेसबानिया ड्रमडिए, ब्रासिका जुनसिया, मेसेम्ब्रायन्थेमम क्रिनिफोरम, पेलागोनियम, हॉटॉरम सौलनम नाइग्रम, जेन्थियम स्ट्रुमेरियम |
| आर्सेनिक      | पेंट, कीटनाशक, लकड़ी का उपचार        | पेट दर्द, डीएनए क्षति, बांझपन, महिलाओं में गर्भपात        | टेरिस विटेए, अजोला कैरोलिनियाना, ब्रूटिया कैलीट्रिच                                                                        |

**फाइटोएक्सट्रैक्शन या फाइटोएक्युमुलेशन :** एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधे की जड़ें मिट्टी से भारी धातुओं के आयनों को सोखती हैं और उन्हें अपने ऊपरी हिस्सों (तनों और पत्तियों) में जमा कर लेती हैं। इसके बाद, ये धातुएं पौधों के कोशिका भित्ति, कोशिका झिल्ली और रिक्तिका के भीतर धातु-फाइटोकेलेटिन या धातु-लिगेंड कॉम्प्लेक्स रूप स्थानांतरित कर संग्रहित कर दिया जाता है। और चयापचय रूप से निष्क्रिय भागों में जमा हो जाती हैं। यह उन जगहों के लिए महत्वपूर्ण है जो एक से अधिक धातुओं से प्रदूषित हैं। हाइपरएक्युमुलेटर पौधे वे होते हैं जो अपनी जड़ों और तनों में भारी धातुओं की उच्च सांद्रता को जमा करने की क्षमता रखते हैं। कुछ पौधे की वृद्धि बढ़ाने वाले बैक्टीरिया भारी धातुओं के सोखने की क्षमता को कई गुना बढ़ा देते हैं। शोध के अनुसार, ये बैक्टीरिया तनदक्क कवद के पौधों में आर्सेनिक के संचय करने की क्षमता को 2 से 5 गुना बढ़ा देते हैं।

**राइजोफिल्ट्रेशन :** सतृप्त क्षेत्र में पौधों की जड़ों का उपयोग करके दूषित भूजल से धातुओं और विषाक्त पदार्थों को सोखने के लिए किया जाता है। यह प्रक्रिया अपशिष्ट जल, भूजल या सतही जल से धातु-सहिष्णु जलीय पौधों की जड़ों या अन्य जलमग्न अंगों पर अधिशोषण, सांद्रण और अवक्षेपण के माध्यम से विषाक्त पदार्थों को दूर करती है बाद में पूरे पौधे की कटाई करके प्रदूषकों को हटा दिया जाता है। यह विधि नाइट्रोजन जड़ों के पास मौजूद बैक्टीरिया अमोनिया को नाइट्रोजन गैस में बदलकर हवा में मुक्त कर देते हैं और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों से दूषित मिट्टी और जल के उपचार में अत्यधिक प्रभावी है उदाहरण के लिए, सूरजमुखी और सरसों अपनी जड़ों में लेड-

फॉस्फेट के अवक्षेपण द्वारा लेड से दूषित पानी को फिल्टर कर सकते हैं राइजोफिल्ट्रेशन अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त जलीय पौधों द्वारा कई धातुओं के लिए जैव सांद्रता कारक पौधे के शुष्क भार का 0.001948 जितना उच्च था। कुछ बैक्टीरिया जैसे स्यूडोमोनास और ओक्रोबैक्टीरियम राइजोफिल्ट्रेशन प्रक्रिया में सहायक हो सकते हैं। ये बैक्टीरिया विशिष्ट उपभेद हेक्सावैलेंट क्रोमियम को ट्राइवैलेंट क्रोमियम में परिवर्तित करते हैं, परिवर्तित क्रोमियम फिर पौधे की जड़ के अंदर आसानी से अवक्षेपित हो जाता है, जिससे पानी क्रोमियम के प्रदूषण से साफ हो जाता है।

**पादप-वाष्पीकरण :** पादप-उपचार की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और वैज्ञानिक रूप से उन्नत प्रक्रिया है, जिसमें पौधे प्रदूषकों को पर्यावरण से सोखते हैं और उन्हें हानिरहित रूप में रूपांतरित करके वायुमंडल में छोड़ देते हैं। पादप वाष्पीकरण की जटिल प्रक्रिया में कई महत्वपूर्ण चरण शामिल होते हैं। सबसे पहले, पौधे मिट्टी से कार्बनिक प्रदूषकों और रसायनों को अवशोषित करती हैं और कम वाष्पशील रसायनों को अधिक वाष्पशील रूप में परिवर्तित करते हैं और वाष्पीकरण प्रक्रिया के माध्यम से प्रदूषकों को वायुमंडल में छोड़ दिया जाता है। वाष्पीकरण प्रक्रिया के दौरान, कुछ यौगिक पौधों के तनों और पत्तियों से वाष्पित हो जाते हैं, जबकि कुछ अन्य यौगिकों का वाष्पीकरण जड़ों और मिट्टी के बीच होने वाली सूक्ष्म जैविक और रासायनिक क्रियाओं के परिणामस्वरूप होता है। इसके अतिरिक्त, कुछ यौगिक वाष्पोत्सर्जन की प्रक्रिया के साथ पौधे के ऊपरी हिस्सों तक पहुँचते हैं और वाष्पोत्सर्जन के दौरान ही वायुमंडल में विलीन हो जाते हैं। उदाहरण

ट्राइफ्लुरालिन जैसे कार्बनिक यौगिकों को राईग्रास द्वारा पत्तियों के माध्यम से सफलतापूर्वक वाष्पित किया जाता है। पादप-वाष्पीकरण भविष्य के एक सुरक्षित और प्राकृतिक शोधन तकनीक है जो भविष्य के कृषि और पर्यावरणीय सुधारों के लिए अत्यंत आशाजनक है।

**फाइटो-डिग्रेडेशन :** इसमें पौधे अपनी पादप अपघटन नामक प्रक्रिया के माध्यम से पादप ऊतकों के भीतर कार्बनिक प्रदूषकों को मेटाबोलाइज प्रक्रियाओं द्वारा तोड़कर छोटे इकाइयों में बदल देते हैं। पादप अपघटन में, पादप भाग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। प्रत्यक्ष प्रक्रिया में, पौधा प्रदूषकों को अवशोषित करता है और उनका चयापचय करता है या उन्हें छोटे, कम हानिकारक यौगिकों में तोड़ता है और उन्हें पादप ऊतकों में वितरित करता है। चूंकि पौधों में सक्रिय परिवहन नहीं होते हैं, इसलिए ये कार्बनिक प्रदूषक निष्क्रिय अवशोषण द्वारा अवशोषित होते हैं। जब प्रदूषकों का अपघटन राइजोस्फीयर में होता है, तो इस प्रक्रिया को राइजोस्फीयर अपघटन कहा जाता है। पौधे कीटनाशकों जैसे कार्बनिक प्रदूषकों को सोखकर उन्हें छोटे और कम हानिकारक यौगिकों में तोड़ देते हैं। क्लोरीनीकृत हाइड्रोकार्बन को टेंगेट्स पटुला, इपोमिया बाल्सामिना और मिराबिलिस जलपा जैसे पौधों द्वारा क्लोरीनीकृत करके गैर-विषाक्त रसायनों में परिवर्तित किया जा सकता है। जलीय पौधे एलोडेआ और स्थलीय पौधे कुडजू में डीडीटी का अपचयक डीहैलोजनीकरण करने में सक्षम पाए गए हैं। सतृप्त हाइड्रोकार्बन अपघटन प्रक्रिया से गुजरते हैं क्योंकि वे राइजोस्फीयर बैक्टीरिया के लिए कार्बन के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं राइजोडीग्रेडेशन प्रक्रिया में जड़ों से निकलने वाले एंजाइम और सूक्ष्मजीव मिलकर काम करते हैं। ये सूक्ष्मजीव पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन और अन्य जटिल रसायनों को नष्ट करने का कार्य करते हैं। सरसों की जड़ों में मौजूद पेरोक्सीडेज जैसे एंजाइम खतरनाक रसायनों को अपघटित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः, पौधों और सूक्ष्मजीवों की यह सहजीवी कार्यप्रणाली मिट्टी और जल को शुद्ध करने के लिए एक अत्यंत प्रभावी साबित होती है।

**फाइटोडिसेलिनेशन :** लवणीय मृदा के सुधार हेतु फाइटोडिसेलिनेशन एक अत्यंत प्रभावी और संधारणीय वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। कुछ लवण-सहिष्णु पौधे मिट्टी से काफी मात्रा में लवण निकालकर लवणीय मिट्टी को उपजाऊ बनाकर उत्पादकता बढ़ा सकते हैं। अत्यधिक लवणता मृदा के अपचयन क्षमता (रिडक्शन पोटेंशियल) को कम कर देती है, जिससे पौधों में निर्जलीकरण और शारीरिक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं लवणीय पौधे या हैलोफाइट्स अपने विकास के वातावरण, यानी मिट्टी या भूजल में उच्च हैलोजन स्तर को सहन कर सकते हैं, क्योंकि उनमें शारीरिक और आनुवंशिक अनुकूलन होता है। यह पौधे आयनों को ग्रहण करते हैं और इन लवणीय आयनों को पौधों की जड़ों और तनों में जमा करते हैं। इसके अलावा, पौधे अपनी विस्तृत जड़ों द्वारा मिट्टी से लवणों के रिसाव को बढ़ाकर मृदा की संरचना और रासायनिक संरचना में सुधार करते हैं। यह 'ग्रीन टेक्नोलॉजी' रसायनों के बिना लवणीय

बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए एक उत्कृष्ट बायो-रेमेडिएशन तकनीक है।

### लाभ और सीमाएँ

पारंपरिक अपशिष्ट प्रबंधन विधियों की तुलना में इसके कई लाभ हैं। यह दूषित मिट्टी और पानी को सुधारने के लिए पौधों के प्राकृतिक गुणों का उपयोग करता है। यह एक किफायती तरीका है, दिखने में सुंदर है और लंबे समय तक लागू किया जा सकता है। इसके माध्यम से मूल्यवान धातुओं की वसूली और पुनः उपयोग की संभावना भी होती है। फाइटोरेमेडिएशन को विकासशील देशों में मानव स्वास्थ्य के सुधार के लिए शीर्ष दस तकनीकों में से एक माना गया है। इसकी सीमाओं में प्रदूषकों का खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करने का जोखिम शामिल है। साथ ही, यह केवल जड़ों के कब्जे वाले क्षेत्र और गहराई तक ही सीमित है। कभी-कभी पौधों की धीमी वृद्धि के कारण इसमें लंबा समय लगता है।

### निष्कर्ष

संक्षेप में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि फाइटोरेमेडिएशन अपनी लागत-प्रभावशीलता (8-10 गुना अधिक किफायती अन्य प्रदूषक उपचार तकनीकों की तुलना में), और पर्यावरण के अनुकूल तरीकों के कारण मिट्टी, पानी और हवा में प्रदूषण को ठीक करने की एक स्थायी तकनीक है। यह तकनीक विभिन्न तंत्रों जैसे फाइटोएक्सट्रैक्शन, फाइटोस्टेबलाइजेशन, राइजोफिल्ट्रेशन, फाइटोबोलेटिलाइजेशन, फाइटोडिग्रेडेशन और फाइटोडिसेलिनेशन के माध्यम से पर्यावरण प्रदूषकों को ठीक करने के लिए पौधों का उपयोग करती है। इसका उपयोग भारी धातुओं, जैविक प्रदूषकों, रेडियोन्यूक्लाइड्स, कीटनाशकों, पेट्रोलियम कचरे और एंटीबायोटिक दवाओं जैसे विविध प्रदूषकों के उपचार के लिए व्यापक रूप से किया जाता है। हालांकि, लक्षित प्रदूषकों के आधार पर पौधों की उपचार क्षमता अलग-अलग होती है। इसलिए, प्रदूषकों और साइट की स्थितियों के अनुसार पौधों का चयन महत्वपूर्ण है। सही प्रजातियों के चयन और उचित डिजाइनिंग से लंबे समय के विकास, फाइटोरेमेडिएशन की कम दक्षता जलवायु और पौधों की वृद्धि पर निर्भरता जैसी कई सीमाओं को दूर किया जा सकता है। पानी और पोषक तत्वों के मैनेजमेंट से पौधों की वृद्धि में सुधार किया जा सकता है। संशोधनों के समावेश से फाइटोरेमेडिएशन की कम दक्षता को बढ़ाया जा सकता है, इसके अलावा, आनुवंशिक रूप से तैयार पौधे उच्च विकास दर और उनमें जीनों की अधिक अभिव्यक्ति के माध्यम से फाइटोरेमेडिएशन की क्षमता अधिक होती है जो धातु के अवशोषण और स्थानांतरण (ट्रांसलोकेशन) को नियंत्रित करते हैं। इसकी शक्तियों और कमियों को दूर करने की क्षमता को देखते हुए, फाइटोरेमेडिएशन तकनीक की प्रभावशीलता प्रदर्शित करने और इसके अनुप्रयोग को और अधिक बढ़ाने के लिए और अधिक अध्ययन किए जाने चाहिए।

## मधुमक्खी पालन : ग्रामीण आजीविका का एक सफल विकल्प

प्रीति प्रिया, पी. के. सिंह एवं विनय कुमार  
कीट विज्ञान विभाग, बिस्सा कृषि विश्वविद्यालय, रौंछी

झारखण्ड प्राकृतिक संसाधनों एवं जैव विविधता से समृद्ध राज्य है, जहाँ कृषि एवं वन्यजीवों के विकास की व्यापक संभावनाएँ मौजूद हैं। राज्य के वनों में करंज, जामुन, नीम, सखुआ, सागवान, शीशम, सेमल, यूक्लिप्टस, इमली, बकैन आदि अनेक वृक्ष प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो मधुमक्खियों को वर्ष के विभिन्न समयों में पराग एवं मकरंद उपलब्ध कराते हैं। इसके अतिरिक्त, यहाँ की जलवायु एवं मिट्टी लीची, अमरुद, केला, पपीता, सहजन तथा विभिन्न सब्जी फसलों की खेती के लिए अत्यंत अनुकूल है। इन वृक्षों एवं फसलों की उपलब्धता मधुमक्खियों के लिए पर्याप्त भोजन स्रोत प्रदान करती है, जिससे शहद उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। यही कारण है कि झारखण्ड को मधुमक्खी पालन की दृष्टि से एक आदर्श क्षेत्र माना जाता है। यह व्यवसाय कम लागत में प्रारम्भ किया जा सकता है तथा किसानों के लिए अतिरिक्त आय का एक महत्वपूर्ण एवं लाभकारी स्रोत सिद्ध हो सकता है।

एक बॉक्स में मधुमक्खी पालन करने की लागत लगभग 2000 से 2500 रु. हो सकती है, जिससे प्रतिवर्ष लगभग 1200 से 1500 रु. का फायदा मिल सकता है और कई वर्षों तक लाभ उठाया जा सकता है। कोई भी व्यक्ति इस क्षेत्र में काम कर सकता है। झारखण्ड सरकार, खादी ग्रामोद्योग संस्थान के माध्यम से मीन पालकों को कई तरह की सहायता प्रदान करती है। थोड़ी सी मीन-पालन जानकारी इस क्षेत्र को लाभ पहुंचा सकती है। मधुमक्खी कृषि, मीन उत्पादन और शहद उत्पादन में बहुत मदद करते हैं। यही कारण है कि कहा जाता है कि मीन मानव का सबसे अच्छा प्राकृतिक दोस्त है। शहद को धरती का अमृत कहते हैं, और सही है कि सुबह गुनगुने पानी में दो चम्मच मधु मिलाकर पीने से बीमारी दूर हो सकती है। इसे सबसे अच्छा पेय कहा जाता है। शुद्ध शहद में 20% पानी, 33% ग्लूकोज, 38% फ्रुक्टोज और 9% अतिरिक्त पोषक तत्व हैं।

मधुमक्खी पालन की शुरुआत कम से कम दो बक्सों से करनी चाहिए। मधुमक्खियाँ प्रशिक्षित मधुमक्खी पालकों से खरीदी जा सकती हैं अथवा प्राकृतिक रूप से पेड़ों, झाड़ियों, दीवारों, मेड़ों तथा अन्य स्थानों पर बने छत्तों से प्राप्त की जा सकती हैं। मधुमक्खियों की सभी प्रजातियाँ पालन के लिए उपयुक्त नहीं होती हैं। छोटी मधुमक्खी (एपिस फ्लोरिया) तथा बड़ी जंगली मधुमक्खी (एपिस डोरसाटा) को सामान्यतः नहीं पाला जाता है। बक्सों में मुख्य रूप से भारतीय मधुमक्खी (एपिस सेराना इंडिका) तथा विदेशी या इटालियन मधुमक्खी (एपिस मेलिफेरा) का पालन किया जाता है। वर्तमान समय में अधिक

शहद उत्पादन और बेहतर प्रबंधन के कारण इटालियन मधुमक्खी का पालन किसानों के बीच अधिक लोकप्रिय हो गया है। विदेशी (इटालियन) मधुमक्खी की शहद उत्पादन क्षमता भारतीय मधुमक्खी की तुलना में अधिक होती है। इसके पालन एवं स्थापना के लिए बसंत ऋतु (फरवरी-मार्च) सबसे उपयुक्त समय माना जाता है, क्योंकि इस अवधि में विभिन्न प्रकार के फूल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं, जिससे मधुमक्खियों को पर्याप्त मकरंद और पराग प्राप्त होता है। मधुमक्खी कालोनियों का नियमित निरीक्षण भी आवश्यक है। बक्सों की लगभग प्रत्येक 10 दिन के अंतराल पर जाँच करनी चाहिए, ताकि रानी, कामगार एवं नर मधुमक्खियों की स्थिति तथा उनके कार्यकलापों की जानकारी प्राप्त हो सके। साथ ही मधुमक्खियों के शत्रुओं, रोगों एवं अन्य समस्याओं का समय रहते पता लगाकर उनका उचित प्रबंधन किया जा सके।



### मधुमक्खी पालन हेतु आवश्यक उपकरण

मधुमक्खी पालन के सफल संचालन के लिए निम्नलिखित उपकरणों की आवश्यकता होती है

**मधुमक्खी बक्से:** मधुमक्खी पालन की शुरुआत कम से कम दो बक्सों से करनी चाहिए। प्रत्येक बक्से में 4-5 फ्रेम (छत्ते) होने चाहिए, जो मधुमक्खियों से अच्छी तरह आच्छादित हों। प्रत्येक कॉलोनी में एक स्वस्थ एवं सक्रिय रानी मधुमक्खी का होना आवश्यक है।

**मौनी परदा:** यह एक सुरक्षा उपकरण है, जिसका उपयोग चेहरे और गर्दन को मधुमक्खियों के डंक से बचाने के लिए किया जाता है।

**दस्ताने:** दस्तानों का प्रयोग हाथों को मधुमक्खियों के डंक से सुरक्षित रखने के लिए किया जाता है, जिससे निरीक्षण और अन्य कार्य आसानी से किए जा सकें।

**घाकू एवं मधु निष्कासन यंत्र:** शहद निकालने के दौरान इन उपकरणों का उपयोग किया जाता है। इनके प्रयोग से छत्तों को क्षति पहुँचाए बिना शहद निकाला जा सकता है तथा छत्ते पुनः उपयोग के लिए सुरक्षित रहते हैं। मधु निष्कासन यंत्र अपेक्षाकृत महंगा होता है, इसलिए 5-7 मधुमक्खी पालक मिलकर इसका सामूहिक उपयोग कर सकते हैं।

### अन्य महत्वपूर्ण सावधानियाँ एवं प्रबंधन संबंधी सुझाव

मधुमक्खी पालन को अधिक लाभकारी एवं सफल बनाने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए

- मधुमक्खी कॉलोनी में हमेशा स्वस्थ, युवा एवं उच्च उत्पादन क्षमता वाली रानी मधुमक्खी रखें। बेहतर उत्पादन के लिए रानी को 1-2 वर्ष के अंतराल पर बदल देना चाहिए।
- मधुमक्खी बक्सों का निरीक्षण खुले एवं शांत मौसम में करें। बादल, अत्यधिक गर्मी या अंधेरे में निरीक्षण करने से मधुमक्खियाँ उत्तेजित होकर डंक मार सकती हैं।
- विशेषकर वर्षा ऋतु में यदि शिशु कक्ष (ब्रूड चेम्बर) में पर्याप्त शहद या ताजे अंडे न हों, तो मधुमक्खियाँ को 50 प्रतिशत चीनी या शहद का घोल पूरक आहार के रूप में देना चाहिए।
- बक्सों की जाँच करते समय प्रवेश द्वार के सामने खड़े न हों, क्योंकि इससे मधुमक्खियों की सामान्य गतिविधियों में बाधा उत्पन्न होती है। पूरक आहार देते समय यह भी ध्यान रखें कि घोल बाहर न गिरे, अन्यथा विभिन्न कॉलोनियों के बीच लूटपाट और प्रतिस्पर्धा की स्थिति बन सकती है।
- बक्सों की स्टैंड या बैठकी को पानी से धिरे रखें, जिससे दीमक, चींटियाँ तथा अन्य हानिकारक कीट बक्सों तक न पहुँच सकें।
- मधुमक्खी पालन स्थल के आसपास धुआँ, धूम्रपान, मद्यपान या तेज गंध वाली वस्तुओं का उपयोग न करें, क्योंकि इससे मधुमक्खियाँ उत्तेजित हो जाती हैं।
- बक्सों को अत्यधिक ठंड, गर्मी और वर्षा से बचाने के लिए उचित छायादार व्यवस्था (छज्जा) करें, जिससे मधुमक्खियों को अनुकूल वातावरण मिल सके और बक्सों की सुरक्षा बनी रहे।
- मधुमक्खी बक्सों को स्वच्छ, सुरक्षित एवं ऊँचे स्थान पर स्थापित करें, जहाँ बाग-बगीचे, फूलों वाले पौधे तथा पराग एवं मकरंद के पर्याप्त स्रोत उपलब्ध हों।
- शहद का निष्कर्षण केवल उन्हीं छत्तों से करें जिनके लगभग 80 प्रतिशत भाग पर मोम का ढक्कन (कैपिंग) लगा हो। इससे शहद पूर्णतः परिपक्व होता है और उसके खराब होने की संभावना कम रहती है।

- फूल आने की अवस्था में कीटनाशकों का प्रयोग यथासंभव टालें। यदि छिड़काव आवश्यक हो, तो घोल बनाकर शाम के समय ही करें, जब मधुमक्खियों की गतिविधियाँ कम होती हैं।
- आधुनिक मधुमक्खी पालन का मूल सिद्धांत यह है कि मुख्य शहद उत्पादन अवधि से पहले कॉलोनी में युवा एवं कार्यशील मधुमक्खियों की संख्या अधिकतम हो, ताकि अधिक मात्रा में शहद का उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

### मधु प्रसंस्करण

मधु (शहद) एक मीठा एवं गाढ़ा प्राकृतिक पदार्थ है, जिसे मधुमक्खियाँ विभिन्न फूलों से मकरंद (नेक्टर) एकत्रित करके अपने छत्तों में संग्रहित करती हैं। मधुमक्खियाँ इस मकरंद को अपने शरीर में विशेष जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं से परिवर्तित कर छत्ते के कोष्ठों में जमा करती हैं, जहाँ यह परिपक्व होकर शहद का रूप ले लेता है।

### शहद निष्कर्षण की विधियाँ

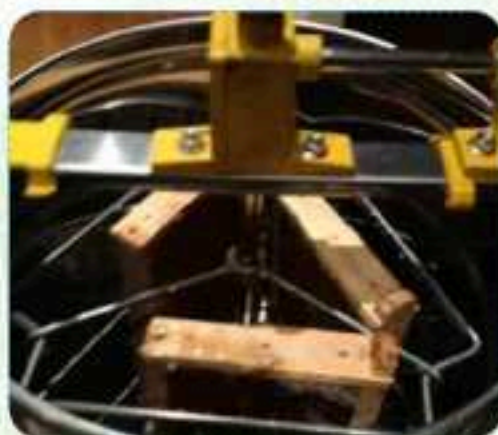
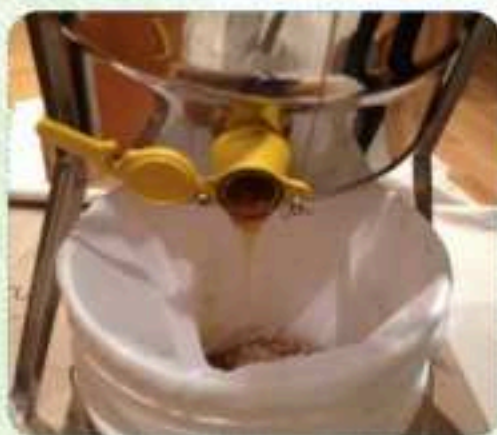
शहद का निष्कर्षण मुख्य रूप से दो तरीकों से किया जाता है

1. मधु निष्कर्षण यंत्र द्वारा
2. छत्तों को निचोड़कर अथवा हाथ से दबाकर

पारंपरिक विधि में छत्तों को दबाकर या निचोड़कर शहद निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में छत्तों के भीतर मौजूद अंडे, लार्वा तथा अन्य विकासशील अवस्थाएँ भी नष्ट हो जाती हैं और उनके अवशेष शहद में मिल सकते हैं। परिणामस्वरूप ऐसा शहद अपेक्षाकृत कम गुणवत्ता का होता है तथा उसमें किण्वन और शीघ्र खराब होने की संभावना अधिक रहती है।

वर्तमान में आधुनिक मधुमक्खी पालन विशेष प्रकार के लकड़ी के बक्सों में किया जाता है, जिनमें चलायमान फ्रेम लगे होते हैं। मधुमक्खियाँ इन्हीं फ्रेमों पर छत्तों का निर्माण करती हैं। शहद निकालने के समय इन फ्रेमों को मधु निष्कर्षण यंत्र में घुमाया जाता है, जिससे छत्तों को क्षति पहुँचाए बिना शहद बाहर निकल आता है। इस विधि से प्राप्त शहद स्वच्छ, शुद्ध एवं उच्च गुणवत्ता का होता है। साथ ही इसमें नमी की मात्रा नियंत्रित रहती है, जिससे इसे लंबे समय तक सुरक्षित रूप से संग्रहित किया जा सकता है।

मधु का प्रशोधन घरेलू विधि से या मधु प्रशोधन संयंत्र से किया जाता है। घरेलू विधि में मधु को घूप में रखकर या वाटरबाथ सिस्टम से प्रशोधित किया जाता है। इस विधि में किसी बड़े बर्तन या पतीला में पानी रखकर गर्म करते हैं। छोटे बर्तन में मधु को मलमल के कपड़े से छानकर रखा जाता है। अब बड़े बर्तन के पेंदी में लकड़ी का गुटका रखकर छोटे बर्तन को रख देते हैं। तत्पश्चात् इसे (बड़े बर्तन को) चूल्हे पर रखकर 60°C पर आधे घंटे तक गर्म करते हैं। ऐसा करने पर मधु अप्रत्यक्ष रूप से गर्म हो जाता है क्योंकि वह आंच के सीधे संपर्क में नहीं आता है। इस



प्रक्रिया में मधु को अधिक देर तक गर्म करना और अधिक तापक्रम पर रखना मधु के रंग, सुगंध (एरोमा) और स्वाद को प्रभावित करेगा।

## मधु का प्रसंस्करण (शहद का वैज्ञानिक शोधन)

उच्च गुणवत्ता वाले शहद की प्राप्ति के लिए उसका प्रसंस्करण आधुनिक उपकरणों एवं संयंत्रों द्वारा किया जाना चाहिए। पूर्णतः स्वचालित मधु प्रसंस्करण इकाई में विभिन्न चरणों के माध्यम से शहद को शुद्ध एवं सुरक्षित बनाया जाता है।

सबसे पहले कच्चे शहद को प्री-हीटिंग टैंक में डाला जाता है, जहाँ तापमान लगभग 40°C रखा जाता है। इस तापमान पर शहद अपेक्षाकृत पतला हो जाता है, जिससे उसमें उपस्थित मोम एवं अन्य अशुद्धियाँ आसानी से अलग की जा सकती हैं।

इसके बाद शहद को मोटर की सहायता से माइक्रो-फिल्टर चैम्बर में भेजा जाता है। यहाँ मोम के कण, परागकण तथा अन्य अवांछित पदार्थों को छानकर अलग कर दिया जाता है। इसके पश्चात शहद प्रोसेसिंग टैंक से होकर गुजरता है, जहाँ तापमान लगभग 55-60°C बनाए रखा जाता है। इस अवस्था में शहद को 10-15 मिनट तक रखा जाता है, जिससे उसमें उपस्थित खमीर (यीस्ट) नष्ट हो जाते हैं और किण्वन की संभावना कम हो जाती है।

प्रसंस्कृत शहद को आगे कूलिंग टैंक से गुजारकर सेटलिंग टैंक में संग्रहित किया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान शहद में मौजूद अतिरिक्त नमी को वाष्पित कर दिया जाता है तथा वैक्यूम पंप की सहायता से बाहर निकाल दिया जाता है। परिणामस्वरूप शहद की गुणवत्ता, शुद्धता एवं भंडारण क्षमता में वृद्धि होती है और इसे लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।



## सटीक खेती के लिए मिट्टी की नमी मापने की तकनीकें

प्रदुस्मिता देवनाथ

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसस्करण संस्थान, रांची

मिट्टी की नमी फसल की पैदावार, बीज के विकास, पोषक तत्वों के अवशोषण और तनाव से लड़ने की क्षमता तय करने में अहम भूमिका निभाती है। इसके अलावा, पौधों की बढ़त में भी इसकी बड़ी भूमिका होती है। खेती के क्षेत्र में, मिट्टी-नमी-पौधे के परिवेश के आधार पर सिंचाई के लिए सही समय पर और सही मात्रा में नमी देना फसल उत्पादन के लिए जरूरी है। मिट्टी में नमी की मात्रा कई चीजों पर निर्भर करती है, जैसे मिट्टी के कणों का आकार, मिट्टी की बनावट, सरंधता, विशिष्ट सतह क्षेत्र, मिट्टी की गहराई, खनिजों की संरचना, खारापन, छिद्रों में मौजूद तरल की विशेषताएं, मिट्टी के दबने की डिग्री, अशुद्धियों की मौजूदगी, कार्बनिक पदार्थ, तापमान और आर्द्रता। मिट्टी की नमी तीन रूपों में होती है: गुरुत्वाकर्षण नमी, कैपिलरी नमी और हाइड्रोस्कोपिक नमी। गुरुत्वाकर्षण नमी वह मुक्त नमी है जो गुरुत्वाकर्षण बल के कारण मिट्टी से होकर बहती है। यह बड़े छिद्रों में पाई जाती है और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी में इसकी गति काफी तेज होती है, इसलिए इसे उपलब्ध नमी नहीं माना जाता है। आमतौर पर, बारिश के 2-3 दिन बाद गुरुत्वाकर्षण नमी मिट्टी से निकल जाती है। कैपिलरी नमी वह नमी है जो मिट्टी के सूक्ष्म छिद्रों में मौजूद होती है और गुरुत्वाकर्षण बल के विपरीत कोहेसन और अधेसन के कारण मिट्टी में बनी रहती है। हाइड्रोस्कोपिक नमी मिट्टी के कणों की सतह के चारों ओर एक बहुत पतली परत बनाती है।

मिट्टी में नमी की निगरानी से यह पता चलता है कि फसल की बढ़त के लिए जड़ वाले हिस्से में कितना पानी उपलब्ध है। इससे किसान सही समय पर सिंचाई की योजना बना सकते हैं और जरूरत के हिसाब से पानी दे सकते हैं। सही निगरानी से जरूरत से ज्यादा या कम सिंचाई से बचा जा सकता है, जिससे पानी के इस्तेमाल की क्षमता बेहतर होती है। इससे गहरे रिसाव, बहते पानी और वाष्पीकरण से होने वाले पानी के क्षति को कम किया जा सकता है। मिट्टी की नमी को मापने के कई तरीके हैं, जिनमें मिट्टी को छूकर देखने से लेकर जटिल इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का इस्तेमाल शामिल है। उपकरणों का विकास मुख्य रूप से ऐसे यंत्रों पर केंद्रित रहा है जो एक ही सेंसिंग पॉइंट पर नमी की मात्रा में होने वाले बदलावों को लगातार मापते हैं। लगातार निगरानी से जल संसाधनों को बचाने और पंपिंग से जुड़ी ऊर्जा लागत को कम करने में मदद मिलती है। यह सूखे के प्रबंधन, जलवायु के अनुकूल ढलने और टिकाऊ खेती के तरीकों के लिए जरूरी जानकारी देता है। मिट्टी में नमी का सही स्तर बनाए रखने से जड़ों का विकास अच्छा होता है और पोषक तत्वों का अवशोषण बेहतर होता है। यह पानी की कमी से होने वाले तनाव को कम करके फसल की बढ़त, पैदावार और उत्पाद की

गुणवत्ता को बेहतर बनाता है। मिट्टी की नमी का डेटा साईट-स्पेसीफिक सिंचाई प्रबंधन को संभव बनाकर सटीक खेती में मदद करता है। इससे पौधों को केवल तभी पानी दिया जाता है जब उन्हें इसकी जरूरत होती है और उतनी ही मात्रा का इस्तेमाल किया जाता है जितनी जरूरी हो।

मिट्टी की नमी मापने वाले उपकरणों को अलग-अलग तरीकों और सिद्धांतों के आधार पर बांटा गया है, जैसे ओवन-ड्राइंग, मेट्रिक पोटेन्शियल, इलेक्ट्रिकल रेजिस्टेंस, डाइइलेक्ट्रिक परमिटिविटी, इलेक्ट्रोमैग्नेटिक वेव ट्रांसमिशन, न्यूट्रॉन स्कैटरिंग, थर्मल कंडक्टिविटी, रिमोट सेंसिंग वगैरह। ग्रेविमेट्रिक या ओवन-ड्राइंग तरीके में मिट्टी का सैंपल इकट्ठा किया जाता है, उसे सुखाने से पहले और बाद में उसका वजन किया जाता है, और फिर उसमें मौजूद नमी की मात्रा का हिसाब लगाया जाता है। ग्रेविमेट्रिक तरीका सबसे पुराना है (मिट्टी को छूकर पता लगाने वाले पुराने तरीके को छोड़कर), लेकिन मिट्टी की नमी का डेटा पाने के लिए आज भी सबसे ज्यादा इस्तेमाल किया जाने वाला तरीका यही है। क्योंकि यह मिट्टी की नमी मापने का एकमात्र सीधा तरीका है, इसलिए दूसरे तरीकों में इस्तेमाल होने वाले उपकरणों को कैलिब्रेट करने के लिए इसकी जरूरत पड़ती है। मिट्टी की नमी की निगरानी का तरीका ज्यादा मेहनत वाले तरीकों से बदलकर आईओटी-आधारित सिस्टम तक पहुंच गया है, जिससे सटीक खेती मुमकिन हो पाई है। नीचे दिए गए पैराग्राफ में मिट्टी की नमी मापने वाले विभिन्न प्रकार के उपकरणों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

### मिट्टी की नमी मापने के तरीके

रेजिस्टेंस तरीके में, अभी दो तरह के ब्लॉक इस्तेमाल हो रहे हैं: फाइबरग्लास यूनिट और प्लास्टर-ऑफ-पेरिस या जिप्सम-ब्लॉक यूनिट। मिट्टी की नमी मापने वाले ब्लॉक आम तौर पर कम नमी वाली रेंज में, यानी फील्ड कैपेसिटी से कम नमी होने पर, सबसे भरोसेमंद माने जाते हैं। ऐसी स्थितियों में, फाइबरग्लास ब्लॉक की काम करने की रेंज आम तौर पर जिप्सम ब्लॉक से ज्यादा होती है। ज्यादा नमी होने पर, यानी फील्ड कैपेसिटी और सैचुरेशन के बीच, नमी की मात्रा में हर यूनिट बदलाव के साथ रेजिस्टेंस में बदलाव बहुत कम होता है, जिससे यूनिट की सेंसिटिविटी कम हो जाती है। इसके अलावा, हीट-डिफ्यूजन का तरीका इस सिद्धांत पर आधारित है कि मिट्टी की हीट कंडक्टिविटी (गर्मी पहुंचाने की क्षमता) उसमें मौजूद नमी के साथ बदलती रहती है। मिट्टी में लगे बिजली से चलने वाले हीट सोर्स से तापमान में होने वाली बढ़ोतरी को एक सेंसिटिव तापमान मापने वाले उपकरण से मापा जाता है और इसे नमी की मात्रा से जोड़ा जाता है। गीली मिट्टी सेल में मौजूद

हीट सोर्स से तेजी से गर्मी दूर ले जाएगी और इसलिए सूखी मिट्टी की तुलना में इसमें तापमान कम बढ़ेगा। टेंसियोमीटर में, एक छिद्रयुक्त सिरा या कप (आमतौर पर सिरमिक का) होता है जो एक ट्यूब के जरिए दबाव मापने वाले उपकरण से जुड़ा होता है। इस सिस्टम में पानी भरा होता है और सिरा या कप का पानी आस-पास की मिट्टी की नमी के साथ संतुलन बनाता है; जैसे-जैसे मिट्टी सूखती है और तनाव बढ़ता है, पानी सिरा से बाहर निकलता है, या जब मिट्टी गीली होती है और तनाव कम होता है, तो पानी वापस सिरा में चला जाता है। दबाव या तनाव में होने वाले इन बदलावों को मापने वाले उपकरण पर दिखाया जाता है, जो आमतौर पर बॉर्डन-ट्यूब वैक्यूम गेज या मरकरी मैनोमीटर होता है। तनाव में होने वाले बदलावों का लगातार रिकॉर्ड रखने के लिए टेंसियोमीटर को प्रेशर रिकॉर्डर या इलेक्ट्रॉनिक प्रेशर ट्रांसड्यूसर से भी जोड़ा जा सकता है। पारंपरिक तरीकों में ग्रेविमेट्रिक संपलिंग और टेंसियोमीटर शामिल हैं। न्यूट्रॉन स्कैटरिंग विधि में, तेज़-न्यूट्रॉन स्रोत से मिट्टी में छोड़े गए न्यूट्रॉन की गति धीमी होने को मापा जाता है। कम परमाणु भार वाले परमाणुओं के साथ न्यूट्रॉन के टकराने में ऊर्जा का नुकसान बहुत ज्यादा होता है और यह मिट्टी में मौजूद ऐसे परमाणुओं की संख्या के समानुपाती होता है। ऐसी टक्करों का असर तेज़ न्यूट्रॉन को धीमे न्यूट्रॉन में बदलना होता है। हाइड्रोजन, जो मिट्टी में पाया जाने वाला कम परमाणु भार वाला मुख्य तत्व है, मुख्य रूप से मिट्टी में मौजूद पानी के अणुओं में पाया जाता है। रेडियोएक्टिव स्रोत ट्यूब से तेज़ न्यूट्रॉन निकलने के बाद काउंटर ट्यूब द्वारा पता लगाए गए धीमे न्यूट्रॉन की संख्या को इलेक्ट्रॉनिक रूप से स्कैलर पर दिखाया जाता है।

ग्रेविमेट्रिक तरीके से सटीक माप तो मिलते थे, लेकिन ये तरीके 'इनवेसिव' (जांच के लिए संपल लेने या छेड़छाड़ करने वाले) और ज्यादा समय लेने वाले थे, इसलिए रिपल-टाइम मॉनिटरिंग के लिए ये

सही नहीं थे। न्यूट्रॉन प्रोब सटीक तो थे, लेकिन सुरक्षा और लागत से जुड़ी बड़ी चुनौतियों के कारण इनका बड़े पैमाने पर इस्तेमाल नहीं हो पाया। इसके बाद पोर्टेबल और 'इन-सिटू' (भौके पर ही इस्तेमाल होने वाले) इलेक्ट्रॉनिक प्रोब, जैसे एनालॉग मल्टी-पैरामीटर मीटर आए, जो सीधे फील्ड में माप लेने के लिए ज्यादा आसान विकल्प थे; हालांकि, इनमें अक्सर रिपल-टाइम डेटा लॉगिंग और कनेक्टिविटी जैसी खूबियां नहीं होती थीं, जो आज के स्मार्ट सिस्टम की खासियत हैं। आधुनिक सेंसिंग टेक्नोलॉजी के आने से कैपेसिटेंस सेंसर, टाइम डोमेन रिफ्लेक्टोमेट्री (टीडीआर) और फ्रीक्वेंसी डोमेन रिफ्लेक्टोमेट्री (एफडीआर) जैसे तरीके आए, जिनसे ऑटोमेशन और बिना छेड़छाड़ के जांच करने की क्षमता में काफी सुधार हुआ। दूसरे ठोस पदार्थों की तुलना में पानी का डाइइलेक्ट्रिक कॉन्स्टेंट ज्यादा होता है और मिट्टी में पानी की मात्रा मापने के लिए इसी गुण का फायदा उठाया जाता है। टाइम डोमेन रिफ्लेक्टोमेट्री और फ्रीक्वेंसी डोमेन रिफ्लेक्टोमेट्री जैसी डाइइलेक्ट्रिक तकनीकों में, रिफ्लेक्टोमीटर तेजी से बढ़ने वाले माइक्रोवेव पल्स बनाता है। ये पल्स मिट्टी में दबी पैरेलल ट्रांसमिशन लाइनों (वेव गाइड्स) से होकर गुजरते हैं और वापस लौट आते हैं। यह सिस्टम एक निश्चित लंबाई वाले वेव-गाइड से माइक्रोवेव पल्स के गुजरने में लगने वाले समय को मापता है। यह लगने वाला समय सीधे डाइइलेक्ट्रिक कॉन्स्टेंट से जुड़ा होता है। हालांकि, इन तकनीकों को अपनाने में अभी भी काफी बाधाएं थीं, खासकर कैलिब्रेशन की समस्याओं और इन्हें लागू करने की अधिक लागत से जुड़ी बाधाएं। हाल के विकास में वायरलेस सेंसर नेटवर्क को इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) क्षमताओं के साथ जोड़ा गया है।

मिट्टी में नमी की निगरानी करने वाली तकनीकों के विकास पर हुई रिसर्च को तीन समूहों में बांटा गया है: सेंसर-केंद्रित (आईओटी,



प्रेशर ट्रांसड्यूसर के साथ टेंसियोमीटर

डब्ल्यूएसएन, निगरानी), एनालिटिक्स-केंद्रित (मशीन लर्निंग, अनुमान, ऑप्टिमाइजेशन) और एप्लीकेशन-केंद्रित (सिंचाई, फसल की पैदावार, सस्टेनेबिलिटी)। उदाहरण के लिए हाइब्रिड ऑप्टिमाइजेशन-आधारित सेंसर नोड एक्टिवेशन (एचओएसएनए) मॉडल जैसे सिस्टम हैं। यह मिट्टी और फसल की रियल-टाइम निगरानी करता है। एचओएसएनए सेंसर नोड के कामकाज को बेहतर बनाने के लिए क्लस्टरिंग, हाइब्रिड ऑप्टिमाइजेशन एल्गोरिदम और मशीन लर्निंग को एक साथ लाता है, साथ ही सटीक और रियल-टाइम एनवायरनमेंटल मॉनिटरिंग भी सुनिश्चित करता है। यह मॉडल सेंसर को एक्टिवेट करने का सबसे अच्छा शेड्यूल तय करने के लिए जेनेटिक एल्गोरिदम और पार्टिकल स्वाम ऑप्टिमाइजेशन का इस्तेमाल करता है, जिससे ऊर्जा की खपत कम होती है और नेटवर्क की उम्र बढ़ती है। आईओटी-आधारित ये सिस्टम स्केलेबल और रियल-टाइम निगरानी की सुविधा देते हैं, जो पहले संभव नहीं थी। यह तकनीकी प्रगति डेटा-आधारित खेती के तरीकों की ओर एक बड़ा बदलाव दिखाती है, जहाँ आधुनिक आईओटी सिस्टम बदलते मौसम के हालात के अनुसार संसाधनों के डायनामिक मैनेजमेंट में मदद करते हैं।

### मशीन लर्निंग तकनीकें

मशीन लर्निंग मिट्टी में नमी का अनुमान लगाने की क्षमता को बेहतर बनाती है, जिससे सिंचाई और फसल प्रबंधन को बेहतर बनाने में मदद मिलती है। खेती से जुड़े कामों में कई खास मॉडल बहुत असरदार साबित हुए हैं, जिनमें लॉन्ग शॉर्ट-टर्म मेमोरी (एलएसटीएम), रैंडम फॉरैस्ट, सपोर्ट वेक्टर मशीन (एसवीएम) और कई तरह के हाइब्रिड तरीके प्रमुख हैं। जेनेटिक एल्गोरिदम विद बैक प्रोपेगेशन (जीए-बीपी) मॉडल मल्टीस्केलर डेटा को प्रोसेस करके सटीक अनुमान देता है। एलएसटीएम-आधारित मॉडल टाइम-सीरीज अनुमानों के लिए बहुत असरदार साबित हुए हैं, जो मिट्टी में नमी के उतार-चढ़ाव में समय के साथ होने वाले बदलावों को ध्यान में रखते हैं। वहीं, रैंडम फॉरैस्ट और एसवीएम तरीके उन क्लासिफिकेशन कामों में बहुत अच्छे हैं जहाँ अलग-अलग फसले लेने की सीमाओं की जरूरत होती है। इन तकनीकी

के बावजूद, खेती के डेटा में स्वाभाविक बदलावों के कारण अलग-अलग तरह की मिट्टी और मौसम की स्थितियों में मॉडल को हर जगह लागू करने में बड़ी चुनौतियाँ बनी हुई हैं, जिससे इन तरीकों को और बेहतर बनाने की जरूरत का पता चलता है।

### ग्रीनहाउस में मिट्टी की नमी मापने के तरीके

इलाके की मिट्टी में नमी की निगरानी करने से ग्रीनहाउस में पानी के प्रबंधन से जुड़े फैसले लेने में मदद मिलती है। बेहतर सटीकता के लिए मल्टी-सेंसर प्रयुजन तकनीकें सैटेलाइट और ज़मीनी जानकारी को मिलाती हैं। ग्रीनहाउस सिस्टम में कई सेंसर इंटरनेट से जुड़े होते हैं। ये सेंसर सूरज की रोशनी, मिट्टी की नमी, ग्रीनहाउस के अंदर का तापमान और हवा में नमी को मापते हैं। वे पूरी बिल्डिंग में लाइटिंग, हवा के बहाव और पानी के बहाव की भी जाँच करते हैं। सभी सेंसर ईएसपी32 माइक्रोकंट्रोलर नाम के एक छोटे कंप्यूटर से जुड़े होते हैं। इस डिवाइस में वाई-फाई होता है, इसलिए किसान अपने फोन या कंप्यूटर का इस्तेमाल करके कहीं से भी अपने ग्रीनहाउस को कंट्रोल और मॉनिटर कर सकते हैं। वे खेत पर न होने पर भी अपनी फसलों की स्थिति देख सकते हैं।

हालांकि, छोटे किसान अक्सर ज्यादा लागत, लागू करने में मुश्किलों और सेंसर के खराब होने की चिंताओं के कारण इन तकनीकों को अपनाने से हिचकिचाते हैं। कनेक्टिविटी की समस्याएँ और डेटा सुरक्षा की चिंताएँ बड़ी रुकावटें बनी हुई हैं, खासकर दूर-दराज के खेती वाले इलाकों में, हालाँकि ब्लॉकचेन तकनीक डेटा सुरक्षा के लिए अच्छे समाधान देती है। आईओटी डिवाइस से इकट्ठा किया गया बहुत सारा डेटा प्राइवैसी से जुड़े जोखिम भी पैदा करता है, जबकि इस्तेमाल में आसान न होने वाले इंटरफ़ेस की वजह से कम तकनीकी जानकारी वाले किसानों के लिए इन तकनीकों का मुश्किल हो जाता है। टेक्नोलॉजी रेडीनेस लेवल बहुत कम है, जो बताता है कि ये तकनीकें अभी भी डेवलपमेंट के चरण में हैं, न कि कमर्शियल इस्तेमाल के लिए तैयार हैं।



## जलवायु अनुकूल कृषि प्रणाली

विद्यापति विद्याकर, ज्योतिर्मय घोष, नवलेश कुमार सिन्हा एवं वैभव डी. लोहोट

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची, झारखंड

जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय की सबसे जटिल और गंभीर वैश्विक समस्याओं में से एक है। यह समस्या न केवल पर्यावरण को प्रभावित कर रही है, बल्कि खेती-किसानी, खाद्य सुरक्षा, जल संसाधन और मानव जीवन के अनेक पहलुओं पर भी गंभीर प्रभाव डाल रही है। विशेषकर भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए यह चुनौती और भी विकराल है, जहाँ लाखों किसान आजीविका के लिए मौसम और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर हैं।

### भारत में जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभाव

अत्यधिक सूखा और बाढ़ की घटनाएँ: मध्य प्रदेश, कर्नाटक, पश्चिमी राजस्थान, आंध्र प्रदेश, दक्षिणी गुजरात, हरियाणा, और दक्षिणी बिहार जैसे राज्य लगातार सूखे की मार झेल रहे हैं। ये क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। वहीं, बिहार में 2008 की बाढ़ ने लाखों लोगों को विस्थापित कर दिया। इसी प्रकार, 2005 में मुंबई में भारी वर्षा से 20 मिलियन लोग जल-जमाव से प्रभावित हुए। 2018 में केरल में आई विनाशकारी बाढ़ ने इतिहास रच दिया।



चक्रवात और तूफानों की तीव्रता में वृद्धि: 1999 में उड़ीसा में आया सुपर साइक्लोन 10 लाख से अधिक लोगों की जान ले ली, जबकि 2014 में आंध्र प्रदेश में आए 'हुद-हुद' चक्रवात ने भी भारी तबाही मचाई। चक्रवातों की बढ़ती तीव्रता और आवृत्ति तटीय कृषि और आजीविका पर विपरीत प्रभाव डाल रही है।

तापमान में असमान वृद्धि: 2016 में राजस्थान के चिरु में 50.8 डिग्री सेल्सियस तापमान दर्ज किया गया। यह भारत में अब तक का एक रिकॉर्ड था। लगातार बढ़ते तापमान से रबी फसलों की उत्पादकता में गिरावट देखी जा रही है और पशुपालन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

समुद्र-स्तर में वृद्धि और लवणता: गर्म महासागरों के थर्मल विस्तार के कारण समुद्र का स्तर 0.3-0.8 मीटर तक बढ़ चुका है। इससे तटीय क्षेत्रों में खारेपन की समस्या गंभीर हो रही है, जिससे मिट्टी की उर्वरता घट रही है और कृषि उत्पादकता पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। यह

प्रवृत्ति भविष्य में अंतर्देशीय जल स्रोतों की गुणवत्ता को भी प्रभावित कर सकती है।

### जलवायु अनुकूल कृषि प्रणाली

जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय की सबसे बड़ी वैश्विक चुनौतियों में से एक बन चुका है। इसकी प्रत्यक्ष मार सबसे पहले और सबसे अधिक कृषि क्षेत्र पर पड़ती है, विशेषकर उन किसानों पर जो वर्षा आधारित खेती पर निर्भर हैं। असामान्य मानसून, बढ़ता तापमान, बेमौसम वर्षा, लंबे सूखे और अधिक समय तक चलने वाले जलभराव जैसी स्थितियाँ न केवल उत्पादन को प्रभावित करती हैं बल्कि खाद्य सुरक्षा और किसानों की आजीविका को भी खतरे में डालती हैं।

ऐसे समय में जलवायु अनुकूल कृषि प्रणाली ही वह मार्ग है जिससे कृषि को टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सकता है। यह प्रणाली केवल तकनीक तक ही सीमित नहीं है, बल्कि एक समग्र दृष्टिकोण है जो फसल, मृदा, जल, पशु, वानिकी, बाजार और किसानों की भूमिका को भी समन्वयित करता है।

फसल विविधीकरण और मिश्रित कृषि प्रणाली: जलवायु परिवर्तन के जोखिमों को कम करने के लिए फसल विविधीकरण एक प्रभावी रणनीति है। उदाहरणस्वरूप, धान के साथ दलहन फसलें (जैसे अरहर या उड़द) मिलाकर बोने से भूमि की उर्वरता भी बनी रहती है और सूखे या कीट हमले की स्थिति में आय की संभावना बनी रहती है। मिश्रित कृषि प्रणाली जैसे फसल + पशुपालन + मुरगी पालन + मत्स्य पालन + मधुमक्खी पालन + कृषि वानिकी एक ही खेत में अपनाकर किसान आय के कई स्रोत प्राप्त कर सकता है। इससे न केवल जोखिम कम होता है बल्कि पोषण सुरक्षा भी सुनिश्चित होती है।

जल संरक्षण एवं सिंचाई दक्षता: जलवायु परिवर्तन के कारण जल संकट एक गंभीर समस्या बनता जा रहा है। इसके समाधान हेतु निम्न उपाय प्रभावी हैं:

वर्षा जल संचयन: खेत तालाब, चेक डैम, मेढबंदी, सूक्ष्म जलग्रहण संरचनाएँ।

ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई: जल की 40-50% तक बचत होती है।

मलिन्या: मिट्टी की नमी बनाए रखने के लिए कारगर है।

सिंचाई दक्षता: सिंचाई का समय, गहराई और फसल की आवश्यकता के अनुसार योजना बनाना आवश्यक है।



जलवायु अनुकूल फसल किस्मों का विकास और उपयोग : वैज्ञानिक संस्थानों द्वारा जलवायु-सहनशील किस्मों का विकास किया गया है जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बेहतर उत्पादन देती हैं। इन किस्मों का उपयोग जलवायु जोखिम को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

| फसल     | किस्म                                                    | विशेषता                                             |
|---------|----------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------|
| धान     | सहभागी, वंदना, सी.आर.धान 305                             | सूखा सहनशील                                         |
|         | स्वर्णा-सब 1, सावित्री-सब 1                              | जलममता सहनशील                                       |
|         | लूना सुवर्णा, लूना बेरियल,<br>बीआरआरआई धान -11, 22 और 29 | लवण सहनशील                                          |
|         | साम्बा महसूरी                                            | जल-जमाव सहनशील (बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के लिए)     |
| गेहूं   | डीबीडब्लू 187, डीबीडब्लू 122                             | उच्च तापमान सहनशील                                  |
|         | डब्ल्यूएचआई 270, पीबीडब्लू 872                           | अगेली बुवाई सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त         |
| मक्का   | आरसीआरएमएच2                                              | उच्च तापमान सहनशील                                  |
|         | सीएम हाइब्रिड                                            | सूखा सहनशील                                         |
| सरसों   | पुसा मस्टर्ड 25                                          | उच्च तापमान सहनशील                                  |
|         | बिरसा भभा मस्टर्ड-1                                      | सूखा सहनशील                                         |
|         | सीएस -58, सीएस-60, सीएस-61, सीएस-62                      | लवण सहनशील                                          |
| चना     | आईपीसी एल4-14, बीजीएम-4005                               | सूखा सहनशील                                         |
|         | पुसा चना- 10216, पुसा चना- 20211                         | सूखा प्रतिरोधी                                      |
| अरहर    | आईसीपीवी 25444                                           | सूखा सहनशील                                         |
|         | आईसीपीएच-8                                               | सूखा प्रतिरोधी                                      |
| सोयाबीन | एमएसीएस-1281,                                            | सूखा प्रतिरोधी, फली काटने के प्रति प्रतिरोधक क्षमता |
|         | ईसी538828, जेएस-97-52                                    | सूखा सहनशील                                         |
| ज्वार   | पीवाईपीएस-2, पीवाईपीएस-8                                 | शुष्क क्षेत्र के लिए उपयुक्त, सूखा सहनशील           |
| बाजरा   | शुलखनिया बाजरा                                           | सूखा सहनशील                                         |
| मूंगफली | कादिरी, हरिधन्द्रा विशिष्ट, लिपाक्षी, के-6               | सूखा सहनशील                                         |
| गन्ना   | करण -17(सीओ-17018),                                      | लवण सहनशील                                          |
|         | इक्षु-16 (सीओएलके-16202)                                 | सूखा सहनशील                                         |

## जैविक एवं प्राकृतिक खेती

जलवायु अनुकूल कृषि में रासायनिक इनपुट्स पर निर्भरता कम करना आवश्यक है।

**जैविक खाद:** जैविक खाद मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने, सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ाने और दीर्घकालिक उत्पादकता सुनिश्चित करने में सहायक होती है। इसके मुख्य प्रकार हैं:

- गोबर खाद: पारंपरिक रूप से उपयोग की जाने वाली खाद। यह मिट्टी की संरचना सुधारती है और पौधों को आवश्यक पोषक तत्व धीरे-धीरे प्रदान करती है।
- वर्मी कम्पोस्ट: केंचुओं द्वारा अपघटित जैविक अवशेष। यह सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर और पौधों द्वारा शीघ्र ग्रहणीय।
- हरी खाद: ढेंचा, सन, मूँग जैसी फसलों को खेत में उगाकर जुताई कर देना। यह मृदा में जैविक पदार्थ और नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाता है।

**प्राकृतिक कीटनाशक:** रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प के रूप में पारंपरिक, सस्ते और पर्यावरण हितैषी विकल्प:

- नीम अर्क: 5% नीम की पत्ती या बीज से बना घोल कीटों को रोकने में प्रभावी।
- लहसुन-मिर्च घोल: लहसुन, मिर्च, और साबुन के मिश्रण से बना स्प्रे कीटों को भगाने में मददगार।
- गोमूत्र आधारित स्प्रे: गोमूत्र, नीम और लहसुन के संयोजन से जैविक कीटनाशक तैयार किया जाता है। यह रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है और पत्तियों को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों से बचाव करता है।

**बीज उपचार:** फसल की नींव मजबूत करने के लिए जैविक बीज उपचार आवश्यक है:

- राइजोबियम: दलहनी फसलों के लिए उपयुक्त। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण में मदद करता है।
- फॉस्फेट सॉल्यूबिलाइजिंग बैक्टीरिया: मृदा में मौजूद स्थिर फॉस्फेट को घुलनशील रूप में परिवर्तित करता है। यह फसलों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाता है।
- ट्राइकोडर्मा: बीज को फफूंद जनित रोगों से बचाता है।

**प्राकृतिक कृषि:** प्राकृतिक कृषि एक व्यापक कृषि मॉडल है, जो कम लागत में अधिक उत्पादन के साथ-साथ मिट्टी, जल और पर्यावरण के संरक्षण को बढ़ावा देता है। इसके प्रमुख घटक हैं:

- जीवामृत: देसी गाय के गोबर, गोमूत्र, गुड़, बेसन और मिट्टी से तैयार किया गया तरल। यह मृदा में सूक्ष्मजीवों की संख्या को कई गुना बढ़ा देता है।
- बीजामृत: गोमूत्र, नीम, तुलसी और मिट्टी से बना बीज उपचार घोल।
- अच्छादन: खेत में फसल अवशेष, पत्तियाँ आदि बिछाकर नमी संरक्षण और खरपतवार नियंत्रण।
- वाफासा खेती: मिट्टी में हवा और नमी के संतुलन को बनाए रखना, जिससे पौधों की जड़ें स्वस्थ रहती हैं।
- रासायन मुक्त खेती: पूरी प्रक्रिया में किसी भी रासायनिक उर्वरक या कीटनाशक का उपयोग नहीं किया जाता।

## जलवायु पूर्वानुमान आधारित कृषि योजना

मौसम पूर्वानुमान आधारित खेती आज के दौर की अनिवार्यता बन चुकी है:

- बुवाई समय में बदलाव: मानसून में देरी या अत्यधिक वर्षा के अनुसार फसल और किस्म का चयन।
- अल्पकालीन फसलों का चयन: मोंग, कोदो, बाजरा जैसी फसलें कम जल में तैयार होती हैं।
- पूर्व सूचना आधारित तैयारी: बाढ़ या सूखे की चेतावनी मिलने पर फसल बचाव के उपाय।

## मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन के प्रभावी उपाय

**मृदा परीक्षण और मृदा स्वास्थ्य कार्ड:** खेत की मिट्टी का वैज्ञानिक परीक्षण करवाएं और मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनवाएं। इससे मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की स्थिति की जानकारी मिलती है। उसी के आधार पर उर्वरकों और सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित मात्रा में तत्वों का प्रयोग संभव होता है। इससे लागत घटती है, उत्पादन बढ़ता है और मृदा की दीर्घकालिक उर्वरता बनी रहती है।

**हरी खाद और जैव उर्वरकों का प्रयोग:** हरी खाद (जैसे ढेंचा, सन, मूँग आदि): यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण में सहायक एवं मृदा में जैविक कार्बन और सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है। जैव उर्वरक जैसे राइजोबियम: दलहनी फसलों के लिए उपयुक्त। फॉस्फेट घोलक बैक्टीरिया: फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाता है। एजोटोबैक्टर, एजोस्फिरिलम: अनाज एवं वाणिज्यिक फसलों के लिए। ट्राइकोडर्मा और माइकोराइजा: पौधों को रोगों से बचाते हैं और पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं।

**मलिन्य का प्रयोग :** खेत में पौधों के चारों ओर जैविक (पुआल, घास, पत्तियाँ) या अजैविक सामग्री (प्लास्टिक) की परत बिछाना मलिन्य कहलाता है। इससे मिट्टी की नमी बनाए रखता है, तापमान नियंत्रण में मदद करता है, खरपतवार नियंत्रण और मृदा क्षरण में कमी करता है एवं जैविक मलच धीरे-धीरे विघटित होकर मृदा में पोषक तत्व बढ़ाता है।

**कृषि बानिनी:** यह फसल, पशुपालन और वृक्षों का समेकित उत्पादन तंत्र। यह पेड़ों की छाया और पत्तियाँ मृदा की नमी और तापमान को संतुलित रखती हैं, मृदा क्षरण रोकती हैं, गहरी जड़ें मिट्टी की संरचना में सुधार करती हैं एवं लकड़ी, चारा और ईंधन के साथ अतिरिक्त आय का स्रोत बनती हैं।

### सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग: स्मार्ट कृषि की ओर एक कदम

आज के डिजिटल युग में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव लाया है। अब किसान न केवल वैज्ञानिक जानकारी तक आसानी से पहुंच पा रहे हैं, बल्कि समय पर सही निर्णय लेने में भी सक्षम हो रहे हैं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने पारंपरिक खेती को स्मार्ट, डेटा-संचालित और पूर्वानुमान आधारित बना दिया है।

#### मोबाइल एप्लिकेशन और एसएमएस सेवाएँ

**मेघदूत एप्लिकेशन:** भारत मौसम विज्ञान विभाग और भाकृअनुप-केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित। यह किसानों को स्थान-विशिष्ट मौसम पूर्वानुमान, कृषि परामर्श, वर्षा की संभावना, तापमान और हवा की जानकारी देता है।

**किसान सुविधा ऐप:** यह कृषि मंत्रालय द्वारा विकसित ऐप है। इसमें बीज, उर्वरक, कीटनाशक, मंडी भाव, मौसम जानकारी, कृषि विशेषज्ञ से संपर्क आदि सेवाएँ शामिल हैं।

**एमकिसान एसएमएस पोर्टल:** यह किसानों को स्थानीय भाषा में कृषि संबंधित सलाह, मौसम सूचना और सरकारी योजनाओं की जानकारी एसएमएस के माध्यम से मिलती है।

#### इंटरैक्टिव वॉइस रिस्पॉन्स सिस्टम- आईवीआरएस और सामुदायिक रेडियो

**आईवीआरएस प्रणाली:** किसान टोल फ्री नंबर पर कॉल करके अपनी भाषा में कृषि संबंधी सलाह ले सकते हैं। यह सरल, कम तकनीकी ज्ञान वाले किसानों के लिए भी उपयोगी है।

**सामुदायिक रेडियो:** ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय बोली में कृषि कार्यक्रम, मौसम सूचना, रोग प्रबंधन, और सफलता की कहानियाँ प्रसारित की जाती हैं। यह सीमांत और अशिक्षित किसानों तक पहुंच का प्रभावी माध्यम है।

#### डिजिटल मंडी और ई-व्यापार

**ई-एनएम(राष्ट्रीय कृषि बाजार):** यह एक राष्ट्रीय ऑनलाइन व्यापार मंच, जो एपीएमसी मंडियों को जोड़ता है। इससे किसान, व्यापारी और खरीददार सीधे जुड़े रहते हैं। यह मारदर्शिता, प्रतिस्पर्धा और बेहतर मूल्य सुनिश्चित करता है।

भविष्य में संभावनाएँ: मोबाइल से फसल की ऑनलाइन बिक्री, ट्रैकिंग सिस्टम से आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन एवं थर्ड पार्टी मूल्यांकन और भुगतान गेटवे संभव हो पाता है।

#### डिजिटल समाधान और स्मार्ट कृषि उपकरण

**ड्रोन आधारित कृषि निगरानी:** यह फसलों की स्थिति, रोग, नमी आदि का निरीक्षण करता है एवं लक्षित छिड़काव से कीटनाशकों की खपत में कमी करता है।

**भौगोलिक सूचना प्रणाली और सैटेलाइट डेटा:** यह फसल बीमा मूल्यांकन, कटाई पूर्व उपज अनुमान, सूखा निगरानी आदि के लिए उपयुक्त।

**कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग आधारित परामर्श:** यह मिट्टी, जलवायु और बाजार डेटा का विश्लेषण कर व्यक्तिगत कृषि योजना की सलाह।



#### सरकारी योजनाएँ और संस्थागत प्रयास

भारत सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ जलवायु अनुकूल कृषि को प्रोत्साहित करने हेतु चलाई जा रही हैं।

**जलवायु-अनुकूल कृषि पर राष्ट्रीय नवाचार :** इस परियोजना का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को कम करना है। इसके अंतर्गत उन जिलों की पहचान की जाती है जो सूखा, बाढ़, तापमान में अत्यधिक वृद्धि, ओलावृष्टि या अन्य जलवायु संकटों से बार-बार प्रभावित होते हैं। इन क्षेत्रों में सूखा एवं बाढ़ सहनशील किस्मों का प्रयोग, वर्षा जल संचयन व सूक्ष्म सिंचाई, फसल विविधीकरण, पशुपालन एवं मछली पालन जैसे वैकल्पिक आजीविका साधनों का विकास एवं मौसम पूर्वानुमान और फसल सलाह उपायों का प्रदर्शन किया जाता है।

**परंपरागत कृषि विकास योजना :** इस योजना के माध्यम से किसानों को रासायनिक खेती से हटकर पारंपरिक जैविक खेती अपनाने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह योजना जैविक खाद, हरी खाद और जैविक कीटनाशकों के प्रयोग को बढ़ावा देती है, किसानों को 50 एकड़ के समूहों में संगठित कर क्लस्टर आधारित खेती सिखाई जाती है। फसल को जैविक प्रमाणन प्रदान कर बेहतर बाजार उपलब्ध कराना एवं पर्यावरण एवं मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखना है।

**प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना :** इस योजना का उद्देश्य किसानों को प्राकृतिक आपदाओं, कीट प्रकोप और अन्य जोखिमों से वित्तीय सुरक्षा देना है। इस योजना में न्यूनतम प्रीमियम दरें (2% खरीफ, 1.5% रबी, 5% वार्षिक फसलों के लिए), फसल नुकसान का वैज्ञानिक आकलन (क्रॉप कटिंग प्रयोगों के माध्यम से), मोबाइल ऐप द्वारा बीमा दावा ट्रैकिंग, जोखिम बहन की जिम्मेदारी सरकार व बीमा कंपनियों की होती है एवं बुवाई से कटाई तक पूर्ण बीमा कवरेज करता है।

**मृदा स्वास्थ्य योजना :** इस योजना के तहत किसानों को उनके खेत की मिट्टी की गुणवत्ता, पोषक तत्वों की उपलब्धता और आवश्यक सुधार के सुझावों के साथ एक कार्ड प्रदान किया जाता है। इसमें मृदा के 12 मानकों पीएच, ईसी, जैविक कार्बन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सल्फर, जिंक, आयरण, कॉपर, मैग्नीज, बोरेन का विश्लेषण, फसलवार उर्वरक सिफारिशें, पोषक तत्वों का संतुलित

उपयोग, मृदा स्वास्थ्य में सुधार व उर्वरक लागत में कमी एवं दीर्घकालिक उत्पादकता बनाए रखता है।

## स्थानीय नवाचार और पारंपरिक ज्ञान का समावेश

स्थानीय अनुभव और पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जोड़ना आवश्यक है। इसके लिए झारखंड के आदिवासी समुदायों की फसल चक्र प्रणाली, बंजर भूमि पर सहजन, कैक्टस, ग्वारपाठा आधारित कृषि-वैज्ञानिकी मॉडल एवं बायोगैस, गोमूत्र आधारित कीटनाशक, देशी बीज संरक्षण अपनाना होगा।

## निष्कर्ष

जलवायु अनुकूल कृषि प्रणाली केवल उत्पादन आधारित नहीं बल्कि समग्र आजीविका सुरक्षा मॉडल है। इसमें पर्यावरण संतुलन, आय वृद्धि, पोषण सुरक्षा और जैव विविधता संरक्षण सभी शामिल हैं। इसकी सफलता के लिए जरूरी है कि वैज्ञानिकों, नीति निर्माताओं और किसानों के बीच सहयोग स्थापित करना होगा, प्रशिक्षण एवं विस्तार सेवाओं का सशक्तिकरण किया करना होगा एवं स्थानिक जरूरतों के अनुसार तकनीकों का स्थानीयकरण करना होगा। इस प्रणाली को अपनाकर ही हम जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से लड़ सकते हैं और खेती को सतत एवं समृद्ध बना सकते हैं।



## बायोमास : सतत विकास का एक प्रमुख ऊर्जा स्रोत

प्रमोद शेलके<sup>1</sup>, निशा मुलाखे<sup>2</sup>, रोहित नलवडे<sup>3</sup>, मीसुमि साबत<sup>4</sup>, नवीन जोस<sup>5</sup> एवं मनोज महावर<sup>6</sup>

<sup>1</sup>भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान केन्द्र, तिरुचिरापल्ली

<sup>2</sup>भाकृअनुप - केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

<sup>3</sup>भाकृअनुप - भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम

<sup>4</sup>भाकृअनुप - केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल

<sup>5</sup>भाकृअनुप - राष्ट्रीय प्राकृतिक रेशा अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, कोलकाता

<sup>6</sup>भाकृअनुप - केन्द्रीय कपास प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मुंबई

जैसे-जैसे विश्व जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा संकट तथा पर्यावरणीय अवक्रमण के समाधान की दिशा में अग्रसर हो रहा है, नवीकरणीय ऊर्जा सतत विकास की चर्चाओं का केन्द्रबिन्दु बन चुकी है। सौर पैनल तथा पवन चक्कियों को प्रायः हरित ऊर्जा संक्रमण के प्रतीकों के रूप में चित्रित किया जाता है। तथापि एक अन्य संसाधन जो कहीं अधिक प्राचीन है और मानव सभ्यता से गहरे रूप से जुड़ा है अब भी पार्श्वभूमि में बना रहता है, और वह है बायोमास। बायोमास से तात्पर्य उन जीव पदार्थों से है जो पादप, जन्तु तथा जैविक अपशिष्ट से प्राप्त होते हैं और जिन्हें ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। शताब्दियों से मानव जाति बायोमास का उपयोग ईंधन, काष्ठ, फसल एवं रसोई अवशेष तथा पशु अपशिष्ट के रूप में करती आई है। किन्तु आज आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ बायोमास को विद्युत, बायोफ्यूल तथा स्वच्छ ऊर्जा में रूपांतरित कर रही हैं। भारत में प्रतिवर्ष 600 मिलियन टन से अधिक बायोमास का उत्पादन होता है, जिसमें से लगभग 285 मिलियन टन ऊर्जा उत्पादन हेतु उपलब्ध है।

बायोमास की विशेष महत्ता इस तथ्य में निहित है कि यह पर्यावरण संरक्षण को आर्थिक एवं सामाजिक विकास से जोड़ता है। यह केवल नवीकरणीय ऊर्जा का एक स्रोत नहीं है; अपितु यह अपशिष्ट, कृषि तथा ग्रामीण आजीविका के पुनर्चिंतन का एक मार्ग प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से बायोमास वास्तव में सतत विकास की प्राप्ति में एक अनुपस्थित कड़ी हो सकती है।

बायोमास को प्रायः केवल काष्ठ या कृषि अवशेष के दहन के रूप में आमक रूप से समझा जाता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि आधुनिक बायोमास प्रणालियाँ कहीं अधिक विकसित एवं विविधीकृत हैं। फसल अपशिष्ट, वन अवशेष, खाद्य अपशिष्ट तथा पशु गोबर जैसे जीव पदार्थों को वैज्ञानिक विधियों द्वारा संसाधित कर ऊष्मा, विद्युत अथवा ईंधन उत्पन्न किया जा सकता है। जीवाश्म ईंधनों के विपरीत, बायोमास एक नवीकरणीय चक्र का अंग है, जिसका अभिप्राय है कि वृद्धि के दौरान पादप प्रकाश-संश्लेषण के माध्यम से वायुमण्डल से कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं। जब इस बायोमास को ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है, तब वह कार्बन काफी हद तक पुनः वायुमण्डल

में निरुक्त हो जाता है, जिससे जीवाश्म ईंधनों की तुलना में एक अपेक्षाकृत संतुलित चक्र निर्मित होता है। यह विशेषता बायोमास को सैद्धांतिक रूप से जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध संघर्ष में अधिक आकर्षक बनाती है। यह भूगर्भीय निष्कर्षण के बजाय जैविक पुनरुत्जीवन पर आधारित एक ऊर्जा प्रणाली का प्रतिनिधित्व करता है। सलमन चित्र बायोमास आधारित सतत विकास प्रणाली का योजनात्मक निरूपण प्रस्तुत करता है, जिसमें बायोमास के विभिन्न स्रोतों, ऊर्जा रूपांतरण प्रक्रियाओं तथा उनसे प्राप्त सतत विकास संबंधी लाभों को दर्शाया गया है।



बायोमास आधारित सतत विकास प्रणाली का योजनात्मक चित्रण

### बायोमास: एक सम्भावित एवं संतुलित समाधान

सतत विकास की अवधारणा आर्थिक प्रगति, पर्यावरण संरक्षण तथा सामाजिक कल्याण के मध्य संतुलन पर आधारित है। औद्योगिक विकास के इस नवीन युग ने अनेक विकासशील देशों में जीवन स्तर में सुधार तो किया है, किन्तु साथ ही कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि, संसाधनों की रिकृता तथा पारिस्थितिकीय असंतुलन भी उत्पन्न किया है। मानव के समक्ष आज की प्राथमिक चुनौती केवल अधिक ऊर्जा उत्पादन की नहीं है, अपितु इसे ऐसे तरीकों से उत्पन्न करना है जो पर्यावरणीय दृष्टि से सतत और सामाजिक दृष्टि से समावेशी हों।

इस परिदृश्य में बायोमास एक अद्वितीय संसाधन है, क्योंकि यह कई आयामों पर एक साथ कार्य करता है। यह नवीकरणीय ऊर्जा की

आवश्यकता को पूरा करने के साथ-साथ अपशिष्ट प्रबंधन, ग्रामीण रोजगार तथा कृषि सततता का भी समाधान करने की क्षमता रखता है। सैद्धांतिक रूप से, बायोमास विकास के एक चक्रीय दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। जिन पदार्थों को परम्परागत रूप से अपशिष्ट माना जाता था, उन्हें त्यागने के बजाय उत्पादक प्रणालियों में पुनः समाहित किया जाता है। यह चक्रीयता सतत विकास के उन सिद्धान्तों से घनिष्ठ रूप से मेल खाती है, जो अपशिष्ट को न्यूनतम कर संसाधन दक्षता को अधिकतम करना चाहते हैं।

## बायोमास: पर्यावरण अनुकूलनीय विकल्प

बायोमास के पक्ष में सर्वाधिक सशक्त तर्कों में से एक इसकी पर्यावरणीय सम्भाव्यता है। विकसित तथा विकासशील दोनों ही राष्ट्रों की नवीन अर्थव्यवस्थाएँ अत्यधिक मात्रा में जैविक अपशिष्ट उत्पन्न करती हैं। कृषि अवशेष को प्रायः खुले में जलाया जाता है, जबकि खाद्य अपशिष्ट लैण्डफिल में संचित होकर मीथेन उत्सर्जन करते हैं। बायोमास प्रौद्योगिकियों का उद्देश्य इन पर्यावरणीय समस्याओं को उपयोगी ऊर्जा संसाधनों में रूपांतरित करना है। प्रकृति से नये संसाधनों का दोहन करने के बजाय, बायोमास जैविक चक्र के भीतर पहले से उपलब्ध पदार्थों का उपयोग करता है।

तथापि बायोमास का पर्यावरणीय मूल्य पूर्णतः इसके प्रबंधन के तरीके पर निर्भर करता है। सतत बायोमास प्रणालियाँ उत्तरदायी सग्रहण, कुशल प्रौद्योगिकी तथा पारिस्थितिकीय संतुलन पर आधारित हैं। यदि ईंधन के लिए वनों की अत्यधिक कटाई हो अथवा बायोमास का दहन अकुशल तरीके से हो, तो पर्यावरणीय लाभ तीव्रता से घट जाते हैं। बायोमास की यह द्विपक्षीय प्रकृति सततता के विषय में एक महत्वपूर्ण सत्य को उजागर करती है, कोई भी ऊर्जा स्रोत स्वतः सतत नहीं होता। सततता न केवल संसाधन पर, अपितु उसके चतुर्दिक् प्रबंधन, प्रौद्योगिकी तथा नीति की प्रणालियों पर भी निर्भर करती है।

## अपशिष्ट को संसाधन के रूप में

आधुनिक जगत में मुख्यतः एक आर्थिक मॉडल का अनुसरण किया है, उत्पन्न करो, उपभोग करो और त्याग दो। बायोमास का उपयोग इस मॉडल को इस तर्क से चुनौती देता है कि अपशिष्ट स्वयं उत्पादक बन सकता है। कृषि अवशेष, खाद्य अपशिष्ट तथा जैव अपशिष्ट को अब केवल अनचाहे अवशेष के रूप में नहीं देखा जाता। इसके बजाय, ये ऊर्जा उत्पादन एवं आर्थिक गतिविधि के लिए आदान बन जाते हैं।

ऐसा दृष्टिकोण चक्रीय अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण का समर्थन करता है, जहाँ प्राकृतिक एवं मानवीय प्रणालियाँ संसाधनों को पुनर्चक्रित तथा पुनर्जनन करने के लिए अभिकल्पित की जाती हैं न कि उन्हें समाप्त करने के लिए। अनेक दृष्टियों से, बायोमास चक्रीय विकास के सर्वाधिक स्पष्ट व्यावहारिक उदाहरणों में से एक है। यह प्रदर्शित करता है कि पर्यावरणीय उत्तरदायित्व एवं आर्थिक उपयोगिता परस्पर विरोधी नहीं, अपितु सह-अस्तित्व में रह सकते हैं।

## बायोमास का औद्योगिक आयाम

बायोमास को प्रायः ग्रामीण परिवेश से जोड़ा जाता है, किन्तु इसकी प्रासंगिकता औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं तक भी विस्तृत है। आधुनिक उद्योगों को स्थिर, सतत ऊर्जा स्रोतों की आवश्यकता होती है, और बायोमास एक नवीकरणीय विकल्प प्रदान कर सकता है जो ऊष्मा एवं विद्युत की आपूर्ति करे। बायोमास को अन्य नवीकरणीय स्रोतों से विभेदित करने वाला प्रमुख कारक इसकी भंडारण-क्षमता है। सौर तथा पवन ऊर्जा जैसे अन्य नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत मौसमी परिस्थितियों पर भारी निर्भरता रखते हैं, जबकि बायोमास को संचित किया जा सकता है और आवश्यकतानुसार उपयोग किया जा सकता है। यह इसे नवीकरणीय-आधारित प्रणालियों में ऊर्जा स्थिरता बनाए रखने के लिए सैद्धांतिक रूप से मूल्यवान बनाता है।

औद्योगिक सन्दर्भों में, बायोमास 'हरित संक्रमण' की अवधारणा में भी योगदान देता है। कार्बन उत्सर्जन को कम करने के इच्छुक उद्योग व्यापक डीकार्बनाइजेशन रणनीतियों के भाग के रूप में बायोमास को अपनी ऊर्जा प्रणालियों में समाहित कर सकते हैं। भावी ऊर्जा अर्थव्यवस्था सम्भवतः किसी एकल नवीकरणीय स्रोत पर नहीं, अपितु अनेक प्रणालियों के समन्वय पर निर्भर होगी। अतः बायोमास सौर अथवा पवन ऊर्जा का प्रतिस्पर्धी कम और एक विविधीकृत सतत ढाँचे के भीतर एक पूरक घटक अधिक है।

## बायोमास की चुनौतियाँ

अपनी सम्भाव्यता के बावजूद, बायोमास महत्वपूर्ण आलोचनाओं एवं चिन्ताओं को भी उत्पन्न करता है। एक प्रमुख समस्या पर्यावरणीय दुरुपयोग की सम्भावना है। यदि वनों की अनुत्तरदायी कटाई हो अथवा ऊर्जा फसलें खाद्य फसलों की जगह ले लें, तो बायोमास सततता के बजाय पारिस्थितिकीय अवक्रमण में योगदान कर सकता है।

एक अन्य चुनौती पारम्परिक बायोमास की तकनीकी दक्षता से सम्बन्धित है। पारम्परिक बायोमास दहन प्रायः गम्भीर धरेलू एवं बाह्य वायु प्रदूषण का कारण बनता है। अतः आधुनिक, स्वच्छतर बायोमास प्रौद्योगिकियों की ओर संक्रमण अनिवार्य है।

बायोमास विकास के भीतर एक गहनतर सैद्धांतिक अन्तर्विरोध भी विद्यमान है। यद्यपि बायोमास नवीकरणीय ऊर्जा को प्रोत्साहित करता है, तथापि इसका बड़े पैमाने पर व्यावसायीकरण कभी-कभी जीवाश्म ईंधन अर्थव्यवस्थाओं से जुड़े औद्योगिक दोहन के उन्हीं प्रतिमानों को पुनः उत्पन्न कर सकता है। यह अन्तर्विरोध हमें स्मरण कराता है कि सतत विकास केवल एक ऊर्जा स्रोत को दूसरे से प्रतिस्थापित करने के बारे में नहीं है। यह पारिस्थितिकीय सीमाओं एवं मानव कल्याण का सम्मान करने वाले तरीकों से आर्थिक एवं सामाजिक प्रणालियों के रूपान्तरण के बारे में है।

## विकासशील देशों के सन्दर्भ में बायोमास

कृषि प्रधान देशों के लिए बायोमास एक अवसर तथा एक चुनौती दोनों का प्रतिनिधित्व करता है। भारत जैसे देश प्रतिवर्ष अत्यधिक मात्रा में जैव अवशेष उत्पन्न करते हैं, जिनका अधिकांश भाग उपयोग से वंचित रहता है अथवा खुले में जलाया जाता है। सतत विकास पर सैद्धांतिक विमर्श में प्रायः स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों के उपयोग के महत्त्व पर बल दिया जाता है। इस परिदृश्य में बायोमास स्वाभाविक रूप से उपयुक्त सिद्ध होता है, क्योंकि यह विद्यमान कृषि एवं जैविक प्रणालियों से प्राप्त पदार्थों का उपयोग करता है। विकासशील देशों में बायोमास स्वच्छ ऊर्जा पहुँच, बेहतर अपशिष्ट प्रबन्धन तथा ग्रामीण रोजगार में योगदान कर सकता है। किन्तु साथ ही इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निवेश, अवसंरचना, शिक्षा तथा नीतिगत समर्थन की आवश्यकता है। नवीकरणीय ऊर्जा प्रणालियों की सफलता समान रूप से शासन, सामाजिक जागरूकता तथा संस्थागत प्रतिबद्धता पर निर्भर करती है।

## निष्कर्ष

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, बायोमास एक वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत से परे है; यह एक व्यापक जैव-आधारित प्रणाली का अंग है जो ऊर्जा उत्पादन, कार्बन प्रबन्धन तथा संसाधन दक्षता को एकीकृत करती है। जीवाश्म ईंधनों के विपरीत, जो प्राचीन कार्बन को आधुनिक वायुमण्डल में प्रवेश कराते हैं, बायोमास प्रकाश-संश्लेषण, अपघटन तथा पुनर्जनन की प्रक्रियाओं के माध्यम से चालू कार्बन चक्र के भीतर कार्य करता है। यह

इसे सतत प्रबन्धन के अन्तर्गत सैद्धांतिक रूप से निम्न शुद्ध ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का समर्थन करने में सक्षम बनाता है।

बायोमास का महत्त्व इसके प्रणाली-आधारित दृष्टिकोण में भी निहित है। सतत विकास उन परस्पर संयुक्त समाधानों पर निर्भर करता है जो एक साथ पर्यावरणीय स्थिरता, आर्थिक वृद्धि तथा सामाजिक समता को सम्बोधित करें। बायोमास जैविक अपशिष्ट को उपयोगी ऊर्जा में रूपांतरित कर, लैण्डफिल उत्सर्जन को कम कर, कृषि अर्धव्यवस्थाओं का समर्थन कर, तथा नवीकरणीय ऊर्जा प्रणालियों में विविधता लाकर इस एकीकरण में योगदान देता है। बायोमास विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि यह डिस्पैचेबल नवीकरणीय ऊर्जा प्रदान कर सकता है, जिससे सौर तथा पवन ऊर्जा जैसे अनिरन्तर स्रोतों की पूर्ति होती है।

तथापि इसका दीर्घकालिक पर्यावरणीय मूल्य भू-उपयोग प्रबन्धन, तकनीकी दक्षता, जीवन-चक्र कार्बन लेखांकन तथा पारिस्थितिकीय संरक्षण जैसे कारकों पर निर्भर करता है। अस्थायी संग्रहण, अकुशल दहन अथवा समर्पित ऊर्जा फसलों पर अत्यधिक निर्भरता इसके पर्यावरणीय लाभों को कमजोर कर सकती है। इसी कारण आधुनिक शोध उन्नत बायोमास प्रौद्योगिकियों पर बल दे रहा है, जिनमें गैसीफिकेशन, अवायुवीय पाचन (एनारोबिक डाइजेस्टेशन), द्वितीय-पीढ़ी के बायोफ्यूल तथा कार्बन संग्रहण एवं भण्डारण के साथ जैव-ऊर्जा) सम्मिलित हैं। ये नवाचार न केवल उत्सर्जन को कम करने का, अपितु सम्भवतः वायुमण्डल से कार्बन डाइऑक्साइड हटाने में सक्षम कार्बन-ऋणात्मक ऊर्जा प्रणालियाँ बनाने का लक्ष्य रखते हैं।



## महुआ पुष्प : पोषण, औषधीय गुण एवं खाद्य उद्योग में उपयोगिता

सिमरन अरोड़ा, जितेन्द्र भुक्क्या, सरखाराम काले एवं सरोज कुमार गिरी

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची, झारखंड

महुआ (महुका लॉगिफोलिया) भारत के मध्य एवं जनजातीय क्षेत्रों में पाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण बहुउपयोगी वृक्ष है, जिसका ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पोषण सुरक्षा एवं जनजातीय आजीविका में विशेष योगदान है। यह वृक्ष मुख्यतः झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र एवं राजस्थान राज्यों में व्यापक रूप से पाया जाता है। सेपोटेसी कुल का यह पर्णपाती वृक्ष शुष्क एवं प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों में भी सफलतापूर्वक विकसित होने की क्षमता रखता है। महुआ वृक्ष के पुष्प, फल, बीज, पत्तियाँ एवं छाल विभिन्न खाद्य, औषधीय एवं औद्योगिक उपयोगों में प्रयुक्त होते हैं, जिसके कारण इसे ग्रामीण एवं वनवासी समुदायों के लिए आजीविका का महत्वपूर्ण साधन माना जाता है।

महुआ भारतीय जनजातीय संस्कृति एवं पारंपरिक जीवनशैली से गहराई से जुड़ा हुआ है। इसके पुष्प ग्रामीण समुदायों के लिए पोषण एवं आय का प्रमुख स्रोत हैं। एक परिपक्व महुआ वृक्ष प्रतिवर्ष पर्याप्त मात्रा में पुष्प एवं बीज प्रदान करता है, जिससे स्थानीय लोगों को आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। अनेक जनजातीय क्षेत्रों में महुआ पुष्पों का संग्रहण, संरक्षण एवं विपणन पारंपरिक रूप से किया जाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक अवसरों पर भी महुआ का विशेष महत्व है। महुआ आधारित गतिविधियाँ विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं एवं लघु कृषकों के लिए अतिरिक्त आय सृजन का माध्यम प्रदान करती हैं। महुआ के पुष्प प्राकृतिक रूप से मीठे एवं पौष्टिक होते हैं। इनमें अवकरणाय शर्करा, प्रोटीन, खनिज तत्व, विटामिन तथा विभिन्न जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जो इनके पोषणात्मक एवं स्वास्थ्यवर्धक गुणों को बढ़ाते हैं। महुआ पुष्पों में एटीऑक्सीडेंट गुण भी पाए जाते हैं,

जो स्वास्थ्य संरक्षण में सहायक माने जाते हैं। पारंपरिक रूप से महुआ पुष्पों का उपयोग स्थानीय पेय पदार्थों, गुड़, सिरका, एवं मिठाइयों के निर्माण में किया जाता रहा है। वर्तमान समय में महुआ आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों जैसे जैम, जेली, सिरप, बेकरी उत्पाद, किण्वित पेय एवं न्यूट्रस्यूटिकल उत्पादों के विकास की संभावनाएँ बढ़ रही हैं।

### महुआ का वनस्पतिक एवं आकारिकीय स्वरूप

महुआ एक बहुवर्षीय एवं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वृक्ष है, जो भारत के उष्ण एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में व्यापक रूप से पाया जाता है। यह वृक्ष विशेष रूप से जनजातीय एवं वन क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से विकसित होता है तथा अपनी अनुकूलन क्षमता के कारण प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों में भी जीवित रहता है। सामान्यतः इसकी ऊँचाई 15-20 मीटर तक होती है तथा वृक्ष का शीर्ष घना, विस्तृत एवं छायादार होता है। महुआ वृक्ष दीर्घायु होता है तथा लगभग 8-10 वर्ष की आयु के बाद पुष्प एवं फल उत्पादन प्रारंभ करता है।

महुआ वृक्ष का तना अपेक्षाकृत छोटा एवं मजबूत होता है, जिससे अनेक शाखाएँ विकसित होती हैं। इसकी बाहरी छाल मोटी, खुरदरी एवं गहरे भूरे रंग की होती है, जबकि आंतरिक भाग लालिमा लिए होता है। छाल को क्षति पहुँचने पर दूधिया रस निकलता है, जो इसकी विशिष्ट विशेषता मानी जाती है। वृक्ष की पत्तियाँ मोटी, चमड़े जैसी एवं दीर्घवृत्ताकार होती हैं। पत्तियाँ शाखाओं के अग्र भाग पर गुच्छों के रूप में व्यवस्थित रहती हैं तथा उनकी सतह चिकनी एवं मोमी होती है, जिससे जल हानि कम होती है।



महुआ का पेड़



पत्तियाँ



बीज



सूखे



फूल



फल



सूखे

महुआ के पेड़ के विभिन्न हिस्से

महुआ के पुष्प आकार में छोटे एवं हल्के क्रीमी रंग के होते हैं। इनमें प्राकृतिक मिठास एवं विशिष्ट सुगंध पाई जाती है, जिसके कारण इन्हें खाद्य उपयोगों के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। पुष्प सामान्यतः गुच्छों में विकसित होते हैं तथा इनमें पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक शर्करा उपस्थित रहती है। महुआ के फल मांसल एवं अंडाकार होते हैं, जो पकने पर हरे रंग से पीले रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। इसके बीज कठोर, चमकदार एवं तेलयुक्त होते हैं, जिनसे उपयोगी वनस्पति तेल प्राप्त किया जाता है।

पोषणात्मक दृष्टि से महुआ पुष्प अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इनमें कार्बोहाइड्रेट, खनिज तत्व, विटामिन एवं जैव सक्रिय यौगिक पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन एवं मैग्नीशियम जैसे खनिज तत्व इनके पोषण मूल्य को बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त महुआ के विभिन्न भागों का पारंपरिक औषधीय उपयोग भी किया जाता है। वृक्ष की छाल में उपस्थित टैनिन का उपयोग त्वचा रोग, सूजन एवं जोड़ों के दर्द जैसी समस्याओं में लाभकारी माना जाता है, जबकि बीजों से प्राप्त तेल खाद्य, साबुन एवं अन्य औद्योगिक उत्पादों के निर्माण में उपयोग किया जाता है।

#### महुआ का भौगोलिक वितरण एवं उत्पादन स्थिति

महुआ भारत के उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण वानिकी वृक्ष है, जो विशेष रूप से शुष्क एवं अर्ध-शुष्क जलवायु परिस्थितियों में सफलतापूर्वक विकसित होता है। यह वृक्ष विभिन्न प्रकार की मिट्टियों एवं प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति उच्च सहनशीलता रखता है, जिसके कारण इसका प्राकृतिक विस्तार वन क्षेत्रों, चरागाहों एवं नदी तटीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से देखा जाता है। सामान्यतः महुआ वृक्ष 1200 मीटर तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में अच्छी वृद्धि करता है। इसके समुचित विकास के लिए 550–1500 मिमी वार्षिक वर्षा, 2–46°C तापमान तथा मध्यम से उच्च आर्द्रता उपयुक्त मानी जाती है। महुआ का वितरण केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि यह दक्षिण एशिया के अन्य देशों जैसे श्रीलंका, पाकिस्तान एवं फिलीपींस के कुछ क्षेत्रों में भी पाया जाता है। महुआ वृक्ष से प्राप्त पुष्प एवं बीज आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। एक परिपक्व वृक्ष से प्रतिवर्ष पर्याप्त मात्रा में पुष्प प्राप्त होते हैं, जिनका उपयोग खाद्य, पेय एवं विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों के निर्माण में किया जाता है।

वर्तमान समय में महुआ आघातित उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण इसके व्यापारिक महत्व में निरंतर वृद्धि हो रही है। विभिन्न राज्यों में महुआ पुष्पों का संग्रहण एवं विपणन स्थानीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। विशेष रूप से मध्य भारत के राज्यों में महुआ व्यापार ग्रामीण रोजगार एवं जनजातीय आजीविका संवर्धन का प्रभावी माध्यम बनकर उभर रहा है। महुआ के वैज्ञानिक प्रबंधन, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को बढ़ावा देकर भविष्य में इसके उत्पादन एवं आर्थिक उपयोगिता को और अधिक बढ़ाया जा सकता है।

#### महुआ पुष्पों का पोषणात्मक संघटन एवं महत्व

महुआ के पुष्प पोषण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इनमें प्राकृतिक शर्करा की प्रचुर मात्रा पाई जाती है, जिसके कारण इनका स्वाद स्वाभाविक रूप से मीठा होता है। यही विशेषता महुआ पुष्पों को पारंपरिक खाद्य एवं पेय उत्पादों के निर्माण हेतु उपयुक्त बनाती है। ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में महुआ पुष्पों का उपयोग लंबे समय से पारंपरिक किण्वित एवं आसुत पेयों के निर्माण में किया जाता रहा है। वर्तमान समय में इनका उपयोग विभिन्न मूल्यवर्धित खाद्य उत्पादों के विकास में भी बढ़ रहा है।

महुआ पुष्प विटामिन एवं जैव सक्रिय यौगिकों के अच्छे स्रोत माने जाते हैं। इनमें विटामिन सी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है, जो एंटीऑक्सीडेंट गुणों के कारण स्वास्थ्य संरक्षण में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त पुष्पों में कैरोटीन की उपस्थिति भी पाई जाती है, जो विटामिन A का अवग्रह है तथा दृष्टि एवं प्रतिरक्षा तंत्र के लिए लाभकारी माना जाता है। महुआ पुष्पों में उपस्थित एंटीऑक्सीडेंट यौगिक शरीर को ऑक्सीडेटिव क्षति से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

खनिज तत्वों की दृष्टि से भी महुआ पुष्प समृद्ध पाए गए हैं। इनमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन एवं मैग्नीशियम जैसे आवश्यक खनिज तत्व उपस्थित होते हैं, जो हड्डियों की मजबूती, रक्त निर्माण तथा शरीर की विभिन्न जैविक क्रियाओं के लिए आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त इनमें अल्प मात्रा में प्रोटीन एवं लिपिड भी पाए जाते हैं, जो इनके पोषण मूल्य को बढ़ाते हैं।

महुआ पुष्पों में विभिन्न कार्बनिक अम्ल, सुगंधित यौगिक एवं अन्य जैव सक्रिय घटक भी उपस्थित होते हैं, जो इनके औषधीय एवं कार्यात्मक गुणों को बढ़ाने में सहायक हैं। पोषणात्मक एवं स्वास्थ्यवर्धक गुणों से समृद्ध होने के कारण महुआ पुष्प खाद्य उद्योग में स्वास्थ्यवर्धक पेय, कार्यात्मक खाद्य पदार्थों एवं अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों के विकास हेतु महत्वपूर्ण कच्चे पदार्थ के रूप में उभर रहे हैं।

#### महुआ पुष्पों की रासायनिक संरचना

| क्र. सं. | घटक                         | ताजे पुष्प  | सूखे पुष्प  |
|----------|-----------------------------|-------------|-------------|
| 1        | नमी (%)                     | 73.6–79.82  | 11.61–19.8  |
|          |                             | (सूखा आधार) | (गीला आधार) |
| 2        | पीएच                        | 4.6         | —           |
| 3        | प्रोटीन (%)                 | 6.05–6.37   | 5.62        |
| 4        | वसा (%)                     | 1.6         | 0.06–0.09   |
| 5        | रेशा (फाइबर, %)             | 10.8        | —           |
| 6        | स्टार्च (ग्र./100 ग्राम)    | 0.94        | —           |
| 7        | राख (%)                     | 1.5         | 1.4–4.36    |
| 8        | कुल शर्करा (ग्र./100 ग्राम) | 47.35–54.06 | 41.62       |

| क्र. सं. | घटक                              | ताजे पुष्प | सूखे पुष्प |
|----------|----------------------------------|------------|------------|
| 9        | कैल्शियम (मि.ग्रा./100 ग्राम)    | 45         | 0.14-8     |
| 10       | फॉस्फोरस (मि.ग्रा./100 ग्राम)    | 22         | 0.14-2     |
| 11       | कैरोटीन (माइक्रोग्राम/100 ग्राम) | 307        | —          |
| 12       | विटामिन-सी (मि. ग्रा./100 ग्राम) | 40         | 7          |
| 13       | कैल्शियम (मि.ग्रा./100 ग्राम)    | 45         | 124-268    |
| 14       | फॉस्फोरस (मि.ग्रा./100 ग्राम)    | 22         | 120-145    |
| 15       | आयरन (मि.ग्रा./100 ग्राम)        | 0.23       | 8.06-95    |

## महुआ के स्वास्थ्यवर्धक लाभ

महुआ के विभिन्न भाग जैसे पुष्प, पत्तियाँ, छाल एवं बीज पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में लंबे समय से उपयोग किए जाते रहे हैं। इनमें उपस्थित जैव सक्रिय यौगिक, एंटीऑक्सीडेंट एवं खनिज तत्व अनेक स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं।

- **श्वसन संबंधी समस्याओं में लाभ:** महुआ पुष्पों का उपयोग पारंपरिक रूप से खाँसी, सर्दी, ब्रोंकाइटिस एवं अन्य श्वसन संबंधी समस्याओं में राहत प्राप्त करने हेतु किया जाता है। इसके पुष्प गले को आराम पहुँचाने एवं श्वसन तंत्र को सुदृढ़ करने में सहायक माने जाते हैं।
- **गठिया एवं जोड़ों के दर्द में उपयोगी:** महुआ की छाल एवं बीजों से प्राप्त तेल का उपयोग गठिया, जोड़ों के दर्द एवं सूजन को कम करने के लिए किया जाता है। प्रभावित भाग पर तेल की मालिश करने से दर्द में राहत प्राप्त होती है।
- **मधुमेह नियंत्रण में सहायक:** महुआ की छाल से तैयार काढ़ा पारंपरिक रूप से मधुमेह नियंत्रण हेतु उपयोग किया जाता है। इसे रक्त शर्करा स्तर को संतुलित बनाए रखने में सहायक माना जाता है।
- **त्वचा रोगों में लाभकारी:** महुआ की पत्तियों एवं छाल का उपयोग खुजली, एक्जिमा, घाव एवं त्वचा संक्रमण जैसी समस्याओं में किया जाता है। पत्तियों का लेप त्वचा की सूजन एवं जलन को कम करने में सहायक माना जाता है।

- **पाचन स्वास्थ्य में सहायक:** महुआ बीजों से प्राप्त तेल में हल्के शैलक गुण पाए जाते हैं, जो कब्ज एवं पाचन संबंधी समस्याओं में राहत प्रदान करने में सहायक होते हैं।
- **मसूड़ों एवं गले की समस्याओं में उपयोगी:** महुआ की छाल से तैयार घोल का उपयोग मसूड़ों की सूजन, रक्तस्राव एवं गले की समस्याओं जैसे टॉन्सिलाइटिस एवं ग्रसनीशोथ में लाभकारी माना जाता है।
- **एंटीऑक्सीडेंट एवं पोषणार्थक गुण:** महुआ पुष्पों में विटामिन, खनिज तत्व एवं एंटीऑक्सीडेंट यौगिक पाए जाते हैं, जो शरीर को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाने एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक होते हैं।

## महुआ पुष्पों के औषधीय एवं जैव सक्रिय गुण

महुआ के पुष्प एवं पौधे के अन्य भाग पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में लंबे समय से उपयोग किए जाते रहे हैं। विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि महुआ में अनेक जैव सक्रिय यौगिक उपस्थित होते हैं, जो एंटीऑक्सीडेंट, सूजनरोधी, कृमिनाशक, दर्दनिवारक एवं अल्सररोधी गुण प्रदर्शित करते हैं। इन गुणों के कारण महुआ को औषधीय एवं कार्यात्मक खाद्य उत्पादों के विकास हेतु संभावनाशील पौधा माना जा रहा है।

- **एंटीऑक्सीडेंट गुण:** महुआ के पुष्प, पत्तियाँ एवं छाल एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों से समृद्ध पाए गए हैं। इनके अर्क मुक्त कणों को निष्क्रिय कर कोशिकीय क्षति को कम करने में सहायक होते हैं। विभिन्न परीक्षणों में महुआ के अर्कों ने उच्च मुक्त कण अवरोधक क्षमता प्रदर्शित की है। इसके अतिरिक्त इनकी एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि को प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों के तुलनीय पाया गया है।
- **कैंसररोधी गुण:** महुआ की पत्तियों एवं पुष्पों के अर्कों में कैंसररोधी गतिविधि देखी गई है। इन-विट्रो अध्ययनों में महुआ के एथेनॉलिक एवं एसीटोन अर्क कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि को नियंत्रित करने में प्रभावी पाए गए हैं। यह गुण पौधे में उपस्थित फेनॉलिक एवं अन्य जैव सक्रिय यौगिकों के कारण माना जाता है।
- **दर्दनिवारक गुण:** महुआ पुष्पों के जलीय एवं एथेनॉलिक अर्कों में दर्दनिवारक गुण पाए गए हैं। विभिन्न पशु अध्ययनों में यह देखा गया कि महुआ अर्क दर्द की तीव्रता को कम करने में सहायक है। इनके प्रभाव को खुराक-निर्भर पाया गया, जिससे इनके संभावित औषधीय उपयोग की पुष्टि होती है।

- **साइटोटॉक्सिक गुण:** महुआ के पत्तियों एवं छाल के अर्कों में उल्लेखनीय साइटोटॉक्सिक गतिविधि पाई गई है। विभिन्न प्रयोगात्मक अध्ययनों में इन अर्कों ने कोशिकीय विघातता के विरुद्ध प्रभाव प्रदर्शित किया, जो इनके औषधीय महत्व को दर्शाता है। यह गुण भविष्य में औषधीय अनुसंधान के लिए उपयोगी माना जा रहा है।
- **अल्सररोधी गुण:** महुआ के मेथेनॉलिक एवं एथेनॉलिक अर्कों में गैस्ट्रिक अल्सर को कम करने की क्षमता पाई गई है। पशु अध्ययनों में यह देखा गया कि महुआ अर्क पेट की आंतरिक सुरक्षात्मक परत को सुदृढ़ करने तथा अम्लीय प्रभावों को कम करने में सहायक होते हैं। इसके परिणामस्वरूप अल्सर की तीव्रता में कमी देखी गई।
- **सूजनरोधी गुण:** महुआ के अर्कों में प्रभावी सूजनरोधी गुण पाए गए हैं। विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया कि महुआ के मेथेनॉलिक अर्क सूजन एवं दर्द को कम करने में सहायक है। यह प्रभाव मुख्यतः पौधे में उपस्थित फेनोलिक यौगिकों एवं एंटीऑक्सीडेंट घटकों के कारण माना जाता है। इन गुणों के कारण महुआ को पारंपरिक एवं आधुनिक हर्बल चिकित्सा दोनों में उपयोगी माना जा रहा है।

उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि महुआ केवल पोषणात्मक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि औषधीय दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण पौधा है।

### महुआ पुष्पों के पारंपरिक एवं सांस्कृतिक उपयोग

महुआ भारतीय जनजातीय एवं ग्रामीण जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। विशेष रूप से मध्य एवं पूर्वी भारत के वन क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों द्वारा महुआ पुष्पों का उपयोग पारंपरिक खाद्य, पेय एवं घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लंबे समय से किया जाता रहा है। महुआ का सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्व इतना अधिक है कि अनेक जनजातीय समुदायों में इसे आजीविका एवं परंपरा दोनों का आधार माना जाता है।

महुआ पुष्प प्राकृतिक रूप से मीठे होने के कारण विभिन्न पारंपरिक खाद्य पदार्थों के निर्माण में उपयोग किए जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इनका सेवन ताजे, उबले अथवा सुखाए हुए रूप में किया जाता है। कई स्थानों पर महुआ पुष्पों से हलवा, लड्डू, बर्फी एवं अन्य स्थानीय व्यंजन तैयार किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त इनका उपयोग पशु आहार के रूप में भी किया जाता है। महुआ पुष्पों की उच्च शर्करा मात्रा इन्हें पारंपरिक खाद्य उपयोगों के लिए उपयुक्त बनाती है।

महुआ का सर्वाधिक पारंपरिक उपयोग स्थानीय किण्वित एवं आसुत पेयों के निर्माण में किया जाता है। जनजातीय समुदायों द्वारा महुआ पुष्पों से तैयार पेय सामाजिक एवं सांस्कृतिक आयोजनों का महत्वपूर्ण हिस्सा माने जाते हैं। विवाह, उत्सव एवं अन्य पारंपरिक अवसरों पर

इन पेयों का विशेष महत्व होता है। समय के साथ इन पेयों की गुणवत्ता एवं स्वाद में सुधार भी देखा जाता है, जिसके कारण इनका स्थानीय स्तर पर व्यापक उपयोग होता है।

### महुआ पुष्पों का आधुनिक उपयोग एवं मूल्य संवर्धन

वर्तमान समय में महुआ केवल पारंपरिक उपयोगों तक सीमित नहीं रह गया है, बल्कि खाद्य, पेय, औषधीय एवं औद्योगिक क्षेत्रों में इसके आधुनिक उपयोगों की संभावनाएँ तेजी से बढ़ रही हैं। महुआ पुष्पों का उपयोग विभिन्न पारंपरिक एवं आधुनिक खाद्य उत्पादों के निर्माण में किया जा रहा है। इनकी प्राकृतिक मिठास के कारण इन्हें हलवा, खीर, बर्फी, लड्डू एवं अन्य स्थानीय व्यंजनों में उपयोग किया जाता है। वर्तमान में महुआ आधारित जैम, जेली, स्क्वैश, सिरप, कैंडी, बेकरी उत्पाद एवं स्वास्थ्यवर्धक पेयों के विकास पर भी कार्य किया जा रहा है। कई क्षेत्रों में महुआ पुष्पों को अनाज एवं कंद फसलों के साथ मिलाकर पौष्टिक खाद्य उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिससे इनके पोषण मूल्य में वृद्धि होती है।

महुआ पुष्पों का उपयोग किण्वित पेयों के निर्माण में विशेष महत्व रखता है। ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में लंबे समय से महुआ आधारित पारंपरिक पेय तैयार किए जाते रहे हैं। वर्तमान में वैज्ञानिक किण्वन तकनीकों के माध्यम से महुआ से गुणवत्तायुक्त पेय एवं अल्कोहल आधारित उत्पाद विकसित करने की संभावनाओं पर अनुसंधान किया जा रहा है। महुआ पुष्पों में उपस्थित उच्च शर्करा मात्रा इन्हें किण्वन प्रक्रिया के लिए उपयुक्त बनाती है। इसके अतिरिक्त महुआ आधारित प्रोबायोटिक एवं न्यूट्रास्यूटिकल पेयों के विकास की दिशा में भी कार्य किया जा रहा है।

महुआ के बीज भी आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इनसे प्राप्त तेल का उपयोग खाद्य, साबुन, सौंदर्य प्रसाधन एवं अन्य औद्योगिक उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। महुआ तेल में उपस्थित कसायुक्त अम्ल इसे औद्योगिक उपयोगों के लिए उपयोगी बनाते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में इस तेल का उपयोग पारंपरिक रूप से दीपक जलाने एवं त्वचा संबंधी समस्याओं में भी किया जाता है।

वैज्ञानिक प्रसस्करण, आधुनिक पैकेजिंग एवं उचित विपणन रणनीतियों के माध्यम से महुआ उत्पादों को राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुँचाया जा सकता है। इस दिशा में अनुसंधान एवं प्रसस्करण तकनीकों का विकास महुआ को खाद्य एवं औषधीय उद्योग में एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन के रूप में स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

### महुआ पुष्पों से मूल्यवर्धित उत्पाद

महुआ पुष्पों पर आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों का विकास ग्रामीण एवं जनजातीय समुदायों के लिए आय एवं रोजगार सृजन की व्यापक संभावनाएँ प्रदान करता है। महुआ आधारित उत्पाद पारंपरिक ज्ञान, स्थानीय खाद्य संस्कृति एवं वन आधारित आजीविका से गहराई से

## महुआ फूलों का संग्रहण



सफाई



छायायुक्त सुखाना



प्रेडिंग



हल्की धुलाई



पैकिंग



महुआ हर्बल चाय बनाने की पारंपरिक विधि

जुड़े हुए हैं। महुआ पुष्पों का वैज्ञानिक प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन न केवल इनके पोषण एवं आर्थिक महत्व को बढ़ाता है, बल्कि खाद्य उद्योग में नवाचार एवं उद्यमिता के नए अवसर भी उपलब्ध कराता है।

महुआ आधारित कुछ प्रमुख मूल्यवर्धित उत्पादों एवं उनकी निर्माण विधियों का विवरण निम्नलिखित अनुभागों में प्रस्तुत किया गया है।

**महुआ हर्बल चाय:** महुआ हर्बल चाय एक पारंपरिक और स्वास्थ्यवर्धक पेय है जिसे महुआ के सूखे फूलों से तैयार किया जाता है। इसके लिए पहले फूलों को छाया में अच्छी तरह सुखाया जाता है, फिर उन्हें हल्का भूनकर या सीधे पीसकर पाउडर बनाया जाता है। इस पाउडर को गर्म पानी में डालकर कुछ मिनट उबालने से एक सुगंधित और औषधीय चाय तैयार होती है। महुआ हर्बल चाय पाचन में सहायक होती है, शरीर को डिटॉक्स करती है और ऊर्जा प्रदान करती है। इसमें मौजूद प्राकृतिक शर्करा और सूक्ष्म पोषक तत्व धकान को दूर करने में मदद करते हैं। यह चाय विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में पारंपरिक रूप से उपयोग में लाई जाती है, लेकिन अब इसे एक आधुनिक आयुर्वेदिक पेय के रूप में भी लोकप्रियता मिल रही है।

**महुआ आधारित रेडी-टू-सर्व पेय:** महुआ पुष्पों से तैयार रेडी-टू-सर्व पेय एक स्वास्थ्यवर्धक एवं प्राकृतिक पेय है, जिसमें महुआ की विशिष्ट सुगंध एवं प्राकृतिक मिठास सुरक्षित रहती है। यह पेय पोषणात्मक गुणों एवं उपभोक्ता स्वीकार्यता की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। स्वाद एवं गुणवत्ता बढ़ाने हेतु इसमें अदरक एवं सीफ जैसे प्राकृतिक अदक्यों का उपयोग भी किया जा सकता है।

## महुआ पेय बनाने की विधि

**महुआ वाइन:** महुआ वाइन एक सुगंधित, पोषक और पारंपरिक किण्वित पेय है, जिसे महुआ के मीठे फूलों से तैयार किया जाता है। सर्वप्रथम फूलों को पानी में भिंसा जाता है, फिर उनमें विशेष खमीर (यीस्ट) मिलाकर कुछ दिनों तक नियंत्रित तापमान में किण्वन किया

## सूखे महुआ पुष्पों का चयन



सफाई एवं धुलाई



6-8 घंटे तक पानी में भिंसा



पानी सहित उबालना (15-20 मिनट)



ठंडा करना



छलना एवं अंक प्राप्त करना



चीनी एवं साइट्रिक अम्ल मिलाना



अदरक/सीफ अंक मिलाना (वैकल्पिक)



प्राकृतिक (85°C, 10 मिनट)



सोडियम बेजोएट मिलाना



स्वच्छ बोतलों में भरना



शीत भंडारण



तैयार RTS पेय

महुआ पुष्प  
 शराई एवं पानी में भिगोना  
 अर्क निष्कर्षण  
 शर्करा मिलाना  
 छानीर मिलाना  
 अवाच्यीय विण्डन (7-10 दिन)  
 पाश्चुरीकरण  
 छानना  
 परिपक्वता  
 बोतलों में भरना  
 पैकेजिंग  
 तैयार महुआ वाइन



महुआ शराब बनाने की पारंपरिक विधि

सूखे महुआ पुष्प  
 पिसाई  
 खोया/मिलेट/मिल्क पाउडर मिलाना  
 घी में भूना  
 गुठ मिलाना  
 लड्डू का आकार देना  
 ठंडा करना  
 पैकेजिंग  
 तैयार महुआ लड्डू



महुआ लड्डू बनाने की विधि

जाता है। इस प्रक्रिया में फूलों की प्राकृतिक शर्करा धीरे-धीरे अल्कोहल में परिवर्तित हो जाती है, जिससे एक मधुर स्वाद और मोहक सुगंध वाली वाइन बनती है। तैयार वाइन को छानकर बोतलों में भरा जाता है और कुछ समय तक परिपक्वता (एजिंग) के लिए रखा जाता है, जिससे इसका स्वाद और गुणवत्ता और भी बेहतर हो जाती है। यह वाइन न केवल जनजातीय समुदायों की सांस्कृतिक धरोहर का प्रतीक है, बल्कि आधुनिक समय में इसे प्राकृतिक, आयुर्वेदिक एवं स्वास्थ्यवर्धक विकल्प के रूप में भी अपनाया जा रहा है।

**महुआ लड्डू और मिठाइयाँ:** महुआ के सूखे फूलों से तैयार किए जाने वाले लड्डू और अन्य मिठाइयाँ स्वास्थ्यवर्धक और स्वादिष्ट होती हैं। ये उत्पाद विशेष रूप से बच्चों, गर्भवती महिलाओं और बुढ़ों के लिए उपयुक्त हैं, क्योंकि इनमें आयरन, प्राकृतिक शर्करा, फाइबर और कैल्शियम होता है। महुआ लड्डू ग्रामीण महिलाओं द्वारा स्वयं सहायता समूहों में बनाए जाते हैं, जो पोषण के साथ-साथ आजीविका का स्रोत भी हैं।

**महुआ जैम और स्क्वैश:** महुआ के फूलों से तैयार किया गया जैम और स्क्वैश स्वाद, पोषण और परंपरा का अद्भुत संगम है। महुआ जैम बनाने के लिए फूलों को साफ कर उबालकर उनका अर्क निकाला जाता है, फिर उसमें प्राकृतिक शर्करा, नींबू का रस और पेक्टिन मिलाकर धीमी आंच पर पकाया जाता है जब तक वह गाढ़ा होकर जैम की रूपरेखा न ले ले। यह जैम मीठा, सुगंधित और आयरन, कैल्शियम तथा एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर होता है। दूसरी ओर, महुआ स्क्वैश एक स्वास्थ्यवर्धक पेय है जिसे फूलों के अर्क, चीनी, साइट्रिक अम्ल और पानी को मिलाकर तैयार किया जाता है। इसे हल्का गर्म करके फिल्टर किया जाता है और फिर बोतलों में भरकर पाश्चुरीकरण के बाद संग्रहित किया जाता है। महुआ स्क्वैश गर्मियों के लिए एक ताजगीभरा प्राकृतिक पेय है, जिसमें शरीर को ठंडक देने और ऊर्जा परदान करने की क्षमता होती है। दोनों उत्पाद न केवल स्वाद में उत्कृष्ट हैं, बल्कि ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों की पारंपरिक धरोहर को भी आधुनिक खाद्य रूप में प्रस्तुत करते हैं।

## भारत में कृषि उत्पादों के उच्चतर प्रसंस्करण को प्रोत्साहन देना समय की मांग

ब्रह्म प्रकाश<sup>1</sup>, दीपक राय<sup>2</sup>, ओम प्रकाश<sup>1</sup> एवं मुकुन्द कुमार<sup>1</sup>

<sup>1</sup>भाकूअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

<sup>2</sup>कृषि विज्ञान केंद्र, खुटी

भारत के लिए अपनी कृषि को 'शुद्ध आयातक' देश की स्थिति से निकालकर 'आत्मनिर्भर' स्थिति तक पहुँचाने की यात्रा अत्यंत शानदार रही है। इस प्रक्रिया में, भारत ने कृषि क्षेत्र को दिशा देने के लिए विभिन्न संस्थागत हस्तक्षेपों, तकनीक और नीतिगत दृष्टियों को मुख्य कारकों के रूप में अपनाया है। हरित क्रांति से पहले के दौर (1960-69) में, यह क्षेत्र 0.7 प्रतिशत की दर से बढ़ा, जिसे भूमि सुधारों और सिंचाई के विकास से नीतिगत समर्थन मिला। हरित क्रांति के दौर (1968-1976) में, तकनीक को अपनाने - विशेष रूप से अधिक उपज देने वाली किस्मों के विकास और रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों तथा सिंचाई एवं प्रसार सेवाओं पर निरंतर रूप से जोर देने से कृषि विकास दर बढ़कर 2.26% हो गई। लेकिन यह क्रांतिकारी विकास मुख्य रूप से उत्तरी भारत के सिंचित क्षेत्रों में गेहूँ तक ही सीमित रहा। तकनीक के व्यापक प्रसार (1975-83 में 2.34%) और विविधीकरण (1988-1995 में 3.21%) के दौर में विकास दरें तुलनात्मक रूप से अधिक रही। इस दौर में कृषि विकास को मुख्य रूप से संस्थागत ऋण, तकनीक के प्रसार, रियायती इनपुट की आपूर्ति और प्रोत्साहन योजनाओं (न्यूनतम समर्थन मूल्य) से बल मिला। हालाँकि, सुधारों के बाद के दौर (1995-05 में 2.31%) में यह गति बनी नहीं रह पाई, जिसका कारण इनपुट का अक्षम उपयोग, उत्पादक संसाधनों का क्षरण और सूखा था। इसके पश्चात सरकार की पहलों, जैसे कि राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन और राष्ट्रीय बागवानी मिशन ने सुधार के दौर (2004-2011) में कृषि विकास दर को बढ़ाकर 3.13% तक पहुँचाते हुए एक महत्वपूर्ण बदलाव लाया।

गत तीन दशकों में उदारीकृत अर्थव्यवस्था के साथ एक अलग ही परिदृश्य देखने को मिला, जिसके चलते प्राथमिक क्षेत्र को भी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा और उसे बेहतर बाजार प्रतिस्पर्धा और दक्षता के साथ उत्पादन करने की अपनी क्षमता को सिद्ध करना पड़ा। कृषि उत्पादन के मामले में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया—पारंपरिक खाद्य से हटकर बागवानी, वाणिज्यिक फसलों और पशुधन तथा मत्स्य पालन जैसी गैर-भूमि आधारित गतिविधियों की ओर रुझान बढ़ा। कई अध्ययन यह संकेत देते हैं कि 'उच्च मूल्य वाली वस्तुओं' के क्षेत्र में हुई तीव्र वृद्धि ने समग्र रूप से प्राथमिक क्षेत्र द्वारा अर्जित किए गए विकास को भी गति प्रदान की है। 1981-2009 की अवधि के दौरान, उच्च मूल्य वाली वस्तुओं ने 4.1% की वृद्धि दर हासिल की, जबकि गैर-उच्च मूल्य वाली वस्तुओं की वृद्धि दर केवल

2.3% रही। संगठित खुदरा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति देने के निर्णय पर भी व्यापक बहस चल रही है, जिसका उद्देश्य उत्पादकों को बाजारों से जोड़ना और इस प्रकार कृषि लाभप्रदता तथा विकास में सुधार लाना था।

शिक्षा तक पहुँच और खेती से बाहर रोजगार के नए अवसरों के सृजन होने के कारण कृषि अर्थव्यवस्था में धीरे-धीरे परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। जब खेती से आर्थिक लाभ कमजोर होता जा रहा है, तो पढ़ी-लिखी और हुनरमंद युवा पीढ़ी खेती से अलग दूसरे क्षेत्रों में रोजगार करना अधिक पसंद कर रही है। अधिकांश गाँवों में, खेती का काम बुजुर्ग पीढ़ी ही करती है। यह एक मानी हुई बात है कि नई प्रौद्योगिकी अपनाने और नए परिवर्तनों से परिचित होने में युवा लोग अहम भूमिका निभाते हैं, और यह भी चिंता का एक और कारण है। खेती से होने वाली घटती और अस्थिर आमदनी को ही इस परिवर्तन का प्रमुख कारण माना जा रहा है। इसके अतिरिक्त, श्रमिक लोग भी बेहतर अवसरों की तलाश में गाँवों से शहर की ओर पलायन करते जा रहे हैं। ग्रामीण जनसंख्या का भारत की तेजी से बढ़ती गैर-कृषि अर्थव्यवस्था के साथ चलने को तैयार दिखना स्वाभाविक ही है। भारत सरकार के मुख्य कार्यक्रम, जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण गारंटी अधिनियम (मनरेगा) और प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के अंतर्गत 1 जनवरी 2024 से मुफ्त अनाज (गेहूँ/चावल) के वितरण से, या तो खेती के लिए श्रमिकों की उपलब्धता कम हो रही है अथवा श्रमिकों के काम न करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दे रही है क्योंकि मजदूर महीने में बस कुछ ही दिन काम करके अपना गुजारा कर लेते हैं। मजदूरों की कम उपलब्धता और मजदूरी की बढ़ती दरें, माँग और आपूर्ति के अन्य कारकों के साथ-साथ, कृषि उत्पादन को धीरे-धीरे उन उच्च मूल्य वाली वस्तुओं/बागवानी फसलों की ओर मोड़ने में प्रभाव डाल रही है, जिनमें श्रमिकों पर निर्भरता कम होती है। इन बदलावों से एक तरफ तो खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा पैदा हो रहा है, और दूसरी तरफ बागवानी फसलों के अतिरिक्त उत्पादन को संभालने की चुनौती भी खड़ी हो रही है।

मानव विकास सूचकांक, और खाद्य व पोषण सुरक्षा हासिल करने के मामले में भारत उन विकसित देशों और यहाँ तक कि भारत को छोड़कर ब्रिक्स (ब्राज़ील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका) समूह के अन्य तेजी से विकास कर रहे देशों से भी पीछे है। हमने जो प्रगति की है, उसमें कुछ कमियाँ इस प्रकार हैं:

कृषि से जुड़ा नितांत आवश्यक पहलू यह है कि बहुत अधिक लोग प्राथमिक क्षेत्र पर निर्भर हैं, जिसे दीर्घकाल से एक कमजोर संकेत माना जाता रहा है। यह स्पष्ट है कि लगभग 42-50% जनसंख्या को राष्ट्रीय आय के सिर्फ 16-18% हिस्से (कृषि क्षेत्र) पर निर्भर रहना पड़ता है, जबकि शेष अधिक आय वाला हिस्सा या बाकी आबादी मजदूरी से इस्तेमाल करती है। एक तरफ, कृषि क्षेत्र की बढ़त ऊपर-नीचे होती रहती है, और दूसरी तरफ, कृषि क्षेत्र में समस्याएँ भी बहुत अधिक हैं। चिंता की बात यह है कि सिर्फ कुछ ही क्षेत्र में कुछ फसलों के अंतर्गत क्षेत्र बढ़ रहा है, जिनसे किसानों के एक छोटे से हिस्से को ही सिर्फ लाभ हो रहा है, जबकि शेष किसान इस बढ़त की प्रक्रिया से बाहर रह जाते हैं। इसके अतिरिक्त, खेतों का आकार छोटा होना, मुनाफा कम होना, जिसके चलते कर्ज बढ़ना और किसानों की आत्महत्याएँ भी चिंता का विषय हैं। यह समस्या तब और बढ़ जाती है जब उचित प्रौद्योगिकी, निवेश, गुणवत्ता की गारंटी, नए-नए विचार तथा उद्योग में सही नेतृत्व की कमी होती है। किसान प्रायः शिकायत करते हैं कि उन्हें अपनी मेहनत से उगाई गई फसलों का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता। कृषि की अधिकांश वस्तुओं के लिए आपूर्ति शृंखला बहुत अधिक बिखरी हुई है, जिसमें कई बिचौलिए सम्मिलित होते हैं, जिससे चीजों को संभालने में समस्या आती है और लेन-देन का खर्च भी बढ़ जाता है। इस आपूर्ति शृंखला में प्रसंस्करण, वस्तुओं के हिसाब से परिवहन के तरीके, ग्रेडिंग, प्रमाणीकरण और पैकिंग जैसी आवश्यक तथा प्रभावी सुविधाओं की कमी होती है। भारत में खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र अभी भी शुरुआती दौर में है; यहाँ केवल 7% फसलों का ही प्रसंस्करण होता है (यद्यपि विभिन्न क्षेत्रों में यह भिन्न-भिन्न है: फलों का लगभग 4.5%, सब्जियों का 2.7% तथा डेयरी उत्पादों का लगभग 37% भाग प्रसंस्कृत किया जाता है)। जबकि अधिक आय वाले देशों में यह अंक 80-98% तक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा चीन में फल एवं सब्जियों का क्रमशः 65 तथा 23% भाग प्रसंस्कृत किया जाता है। भारत में कम प्रसंस्करण के बहुत से कारण हैं। प्रथम प्रमुख कारण यह है कि भारत में लोग प्रसंस्कृत फल एवं सब्जियों की तुलना में ताजा फल एवं सब्जियाँ खाना अधिक पसंद करते हैं। दूसरा कारण भारत में पर्याप्त शीत-गृहों की कमी है तथा भारत में पैकेजिंग की लागत बहुत अधिक आती है। आपूर्ति शृंखला में भी भारत में प्रसंस्करण की जा सकने वाली विशिष्ट किस्मों की आपूर्ति भी अपर्याप्त है। इन बाधाओं के बावजूद, भारत में अब खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र को काफी बढ़ावा मिल रहा है; 2004-2010 के दौरान पंजीकृत खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों में प्रति वर्ष 13.2% की बढ़त देखी गई थी जिसमें उसके बाद और वृद्धि हुई है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, इस स्थिति को बहुत सोच-समझकर संभालने की सख्त आवश्यकता है, ताकि इस क्षेत्र में अपने पैरों पर खड़े होने वाली और दीर्घकाल तक चलने वाली बढ़त को बढ़ावा दिया जा सके। ऐसा 'कृषि उच्चतर प्रसंस्करण' पर ध्यान देकर किया जा सकता

है। हालाँकि यह प्राथमिक क्षेत्र की सभी समस्याओं का कोई जादुई इलाज तो नहीं है, लेकिन यह निश्चित रूप से बढ़त को आगे बढ़ा सकता है। हालाँकि पूर्ववर्ती योजना आयोग तथा वर्तमान में नीति आयोग और शिक्षा जगत के लोगों ने पहले भी कुछ कोशिशें की हैं, लेकिन 'कृषि उच्चतर प्रसंस्करण' शब्द की सही-सही परिभाषा देने में वे सफल नहीं हो पाए हैं। कृषि उच्चतर प्रसंस्करण में "वे सभी तरीके और प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं, जो प्रभावी प्रौद्योगिकी, बाजार की जानकारी और ग्राहकों की पसंद का उपयोग करके कृषि की प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य और महत्व को बढ़ाती हैं।" यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कृषि में 'मूल्य संवर्धन' का अर्थ मतलब किसी भी कृषि उत्पाद की आर्थिक कीमत और ग्राहकों के बीच उसकी लोकप्रियता को बढ़ाना है। असल में, यह पैदावार और विपणन की एक अलग तरह की रणनीति है।

प्राथमिक कृषि के विकास को गति देने वाली कृषि उच्चतर प्रसंस्करण की परिकल्पना निम्न प्रकार की गई है:

- कृषि उच्चतर प्रसंस्करण क्षेत्र के साथ उचित संबंध स्थापित करके प्राथमिक क्षेत्र से कार्यबल की नियोजित वापसी।
- प्राथमिक कृषि के विविधीकरण को बढ़ावा देकर 'मूल्य-वर्धित' उत्पादों की ओर बदलती मांग का लाभ उठाना, ताकि किसान अपने उत्पादन आधार में सुधार कर सकें।
- लघु मिलेट्स, औषधीय और सुगंधित पौधे, तथा फसल के उप-उत्पादों जैसी कम उपयोग वाली फसलों के लिए मूल्य-वर्धन और संवर्धन के माध्यम से एक मजबूत मांग का निर्माण करना, ताकि किसानों को अधिक प्रतिफल प्राप्त हो सके।
- ग्रामीण औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करना, ताकि प्राथमिक कृषि उत्पादों की मांग बढ़े (क्योंकि उद्योग द्वारा इनका उपयोग कच्चे माल के रूप में किया जाता है) और प्राथमिक कृषि में सुधार के लिए आवश्यक गुणवत्तापूर्ण इनपुट उपलब्ध हो सकें।
- आपूर्ति शृंखला प्रबंधन में सुधार करना, ताकि लेन-देन की लागत कम हो और प्राथमिक कृषि वस्तुओं के लिए बाजार का विस्तार हो सके।
- कृषि उच्चतर प्रसंस्करण से संबंधित अनुसंधान और प्रसार कार्यों को करने के लिए मानव संसाधन का विकास करना, ताकि इसके विस्तार और बढ़ी हुई दक्षता का लाभ प्राथमिक क्षेत्र को मिल सके।

उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि भारत में कृषि उत्पादों के उच्चतर प्रसंस्करण को प्रोत्साहन देना समय की मांग है।

## प्रोपोलिस : एक अद्भुत मधुमक्खी उत्पाद

संतोष कुमार सिंह यादव, अनंन राय चौधुरी एवं सतीश चन्द्र शर्मा

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उत्थरण प्रसंस्करण संस्थान, रांची

मधुमक्खियाँ युवा और वृद्ध सभी लोगों को उत्साहित और प्रेरित करती हैं। वे हमारे जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। वे फलों एवं सब्जियों के परागण द्वारा हमारे स्वास्थ्य और पीष्टिकता में सुधार करती हैं। मधुमक्खियों से हमें शहद प्राप्त होता है, जो एक स्वादिष्ट प्राकृतिक स्वीटनर है तथा जलने और घावों को ठीक करने में सहायक होता है।

नया छत्ता बनाते समय मधुमक्खियाँ अपने पूरे छत्ते के भीतरी भाग को एक राल और मोम के मिश्रण से लेपित करती हैं। यह राल एवं मोम का मिश्रण प्रोपोलिस कहलाता है। प्रोपोलिस में उच्च जीवाणुरोधी गुण होते हैं, जो मधुमक्खियों और मनुष्यों दोनों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं।

मधुमक्खियाँ प्रोपोलिस को पेड़ों की छाल एवं कलियों से एकत्रित करती हैं, जिससे वे अपने छत्ते को कीटाणुओं तथा फफूंद के प्रकोप से सुरक्षित रखती हैं। मधुमक्खियाँ पेड़ों और झाड़ियों से प्रोपोलिस एकत्र कर अपने पिछले पैरों में स्थित पराग-टोकरीयों में भरकर छत्ते तक लाती हैं, जहाँ कार्यकर्ता मधुमक्खियाँ उसमें मोम तथा लार मिलाकर लेपन का कार्य आरम्भ कर देती हैं।

### मधुमक्खियों द्वारा प्रोपोलिस के उपयोग

- प्रोपोलिस का उपयोग निर्माण सामग्री के रूप में छत्ते के छिद्रों एवं दरारों को भरने के लिए किया जाता है, जिससे शत्रु कीट छत्ते में प्रवेश नहीं कर पाते।
- इसके उच्च जीवाणुरोधी गुणों के कारण मधुमक्खियाँ मृत शत्रुओं या बड़े कीटों को, जिन्हें बाहर नहीं ले जाया जा सकता, प्रोपोलिस से ढककर ममी बना देती हैं, जिससे उनका शरीर सड़ता नहीं है।

- छत्ते की भीतरी दीवारों तथा कोशिकाओं, जहाँ रानी मधुमक्खी अंडे देती है, को चिकना एवं स्वच्छ बनाने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है।

### प्रोपोलिस का इतिहास

लगभग 5-6 करोड़ वर्ष पूर्व जब मधुमक्खियाँ पृथ्वी पर आईं, तभी से प्रोपोलिस का अस्तित्व माना जाता है। "प्रोपोलिस" एक यूनानी शब्द है, जिसमें प्रो का अर्थ "सामने" या "रक्षा" तथा पोलिस का अर्थ "नगर" या "शहर" है। इस प्रकार प्रोपोलिस का अर्थ हुआ - "नगर की रक्षा करने वाला"। इसका आशय यह है कि मधुमक्खियाँ इसे छत्ते के प्रवेश द्वार पर लगाकर शत्रुओं से सुरक्षा करती हैं।

कुछ विद्वानों के अनुसार यह शब्द लैटिन के प्रोपोलिरि से भी आया है, जिसका अर्थ "लेप करना" या "चिकना बनाना" है। वास्तव में प्रोपोलिस का उपयोग छत्ते के भीतरी भाग को लेपित और सुरक्षित बनाने के लिए किया जाता है।

इतिहास में प्रोपोलिस का व्यापक उपयोग हुआ है

- यूनानी एवं मिस्रवासी इसे प्राकृतिक एंटीसेप्टिक के रूप में प्रयोग करते थे।
- मिस्रवासी शवों के संरक्षण के लिए इसका उपयोग करते थे।
- मध्य एवं दक्षिण अमेरिका के लोग बुखार कम करने के लिए इसका सेवन करते थे।
- प्रसिद्ध फारसी चिकित्सक अविसेन्ना ने घावों के उपचार में इसके उपयोग की अनुशंसा की थी।



स्वच्छ छत्ते में मधुमक्खियाँ



मधुमक्खियों द्वारा बना प्रोपोलिस राल (रेजिन)

- रोमन सैनिक युद्ध के दौरान घावों के उपचार हेतु इसे अपने साथ रखते थे।
- इटली में इसका उपयोग वायलिन की वाणिज्य बनाने में किया जाता था।

कुछ समय तक इसका उपयोग कम हो गया था, परन्तु आज यह पुनः एक उत्कृष्ट औषधीय एवं प्राकृतिक एंटीबायोटिक के रूप में लोकप्रिय हो गया है।

### प्रोपोलिस के घटक

प्रोपोलिस की संरचना पर्यावरण, तापमान, मौसम तथा आसपास की वनस्पतियों के अनुसार बदलती रहती है। सामान्यतः इसमें निम्न घटक पाए जाते हैं:

| घटक                           | प्रतिशत (%) |
|-------------------------------|-------------|
| राल                           | 50-55       |
| मोम                           | 25-35       |
| आवश्यक तेल                    | 10-20       |
| परगकण                         | 5           |
| अन्य पदार्थ (लकड़ी, खनिज आदि) | 5           |

प्रोपोलिस पूर्णतः प्राकृतिक और सुरक्षित उत्पाद है। इसका उपयोग सभी आयु वर्ग के लोग कर सकते हैं। इसमें 150 से अधिक जैव सक्रिय तत्व पाए जाते हैं।

प्रोपोलिस सामान्यतः 25°C से 45°C के तापमान पर एक मुलायम, लचीला तथा चिपचिपा पदार्थ होता है। विशेष रूप से, जब इसे जमाया जाता है तो यह कठोर एवं भंगुर हो जाता है। जमाने के बाद यह अपेक्षाकृत अधिक तापमान पर भी भंगुर बना रह सकता है।

45°C से अधिक तापमान पर प्रोपोलिस अधिक चिपचिपा एवं गोंद जैसा हो जाता है। सामान्यतः 60°C से 70°C के बीच यह द्रव अवस्था में परिवर्तित हो जाता है, यद्यपि कुछ नमूनों का गलनांक 100°C तक भी हो सकता है।

### प्रोपोलिस के प्रमुख जैव-सक्रिय घटक

| श्रेणी       | प्रमुख जैव सक्रिय तत्व                                              |
|--------------|---------------------------------------------------------------------|
| विटामिन      | प्रो-विटामिन ए, विटामिन बी समूह                                     |
| खनिज         | ताँबा, जस्ता, चाँदी, लोहा, कोबाल्ट, मैंगनीज, मोलिब्डेनम, मैग्नीशियम |
| फिनोलिक अम्ल | कैफिक अम्ल, सिनेमिक अम्ल, फेरुलिक अम्ल                              |
| फ्लेवोनॉयड्स | क्राइसिन, फिनोसेनिन, गैलेंजिन                                       |

ये फ्लेवोनॉयड्स पौधों द्वारा निर्मित प्राकृतिक एंटीसेप्टिक पदार्थ हैं, जो मधुमक्खियों को सूक्ष्मजीवों, कीटों और फफूंदों से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

### प्रोपोलिस की विलेयता एवं निष्कर्षित प्रमुख यौगिक

प्रोपोलिस की जटिल रासायनिक संरचना के कारण इसका प्रत्यक्ष उपयोग करना कठिन होता है। इसलिए व्यावसायिक उपयोग के लिए इसे उपयुक्त विलायकों की सहायता से निष्कर्षित किया जाता है। प्रोपोलिस के अनेक जीवाणुनाशी घटक जल अथवा अल्कोहल में घुलनशील होते हैं। निष्कर्षण का उद्देश्य निष्क्रिय पदार्थों को हटाकर वांछित जैव-सक्रिय यौगिकों को सुरक्षित रखना होता है। निष्कर्षण के लिए प्रयुक्त विलायक का चयन अत्यंत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। विभिन्न जैव-सक्रिय तथा रासायनिक यौगिकों के निष्कर्षण में प्रयुक्त प्रमुख विलायकों का विवरण तालिका में दिया गया है—

| विलायक         | निष्कर्षित प्रमुख यौगिक                                                                                                                       |
|----------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| जल             | एन्थोसाइनिन, स्टार्च, टैनिन, सेपोनिन, टरपेनॉइड, पॉलीपेप्टाइड तथा लेक्टिन                                                                      |
| मेथेनॉल        | एन्थोसाइनिन, टरपेनॉइड, सेपोनिन, टैनिन, जैथॉक्सिलिन, टोटारोल, क्वासिनॉइड्स, लेक्टोन्स, फ्लेवोन्स, फिनोन्स, पॉलीफेनॉल, पॉलीपेप्टाइड एवं लेक्टिन |
| एथेनॉल         | टैनिन, पॉलीफेनॉल, पॉलीएसीटिलीन, टरपेनॉइड, स्टैरॉल एवं एल्केलॉयड                                                                               |
| क्लोरोफॉर्म    | टरपेनॉइड एवं फ्लेवोनॉयड                                                                                                                       |
| डाइक्लोरोमीथेन | टरपेनॉइड, टैनिन, पॉलीफेनॉल, पॉलीएसीटिलीन, स्टैरॉल एवं एल्केलॉयड                                                                               |
| ईथर            | एल्केलॉयड, टरपेनॉइड, कॉमारिन एवं वसीय अम्ल                                                                                                    |
| एसीटोन         | फ्लेवोनॉल                                                                                                                                     |

### विभिन्न क्षेत्रों की प्रोपोलिस की रासायनिक संरचना

प्रोपोलिस की संरचना मुख्यतः दो कारकों पर निर्भर करती है—

1. उसका भौगोलिक उद्गम
2. निष्कर्षण की विधि

विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों से प्राप्त प्रोपोलिस में विभिन्न प्रकार के रासायनिक घटक पाए जाते हैं। कुछ यौगिक ऐसे होते हैं जो अनेक क्षेत्रों की प्रोपोलिस में सामान्य रूप से उपस्थित रहते हैं, जबकि कुछ विशिष्ट यौगिक केवल विशेष वनस्पति स्रोतों से प्राप्त प्रोपोलिस में ही पाए जाते हैं।

प्रोपोलिस की जैविक सक्रियता उसके भौगोलिक उद्गम के अनुसार भिन्न होती है, जिसका मुख्य कारण विभिन्न क्षेत्रों की जलवायु एवं पर्यावरणीय परिस्थितियाँ हैं। प्रोपोलिस की अधिकांश जैविक गतिविधियों के लिए उत्तरदायी प्रमुख यौगिकों में पॉलीफेनॉल,

एरोमेटिक अम्ल तथा डाइटरेपेनिक अम्ल शामिल हैं। हालांकि कुछ विशेष प्रकार की प्रोपोलिस में प्रमुख जैव-सक्रिय यौगिक अन्य प्रकारों से भिन्न पाए जाते हैं।

प्रोपोलिस की रासायनिक संरचना किसी क्षेत्र की विशिष्ट वनस्पति तथा कच्चे पदार्थों के प्रसंस्करण की विधि से भी प्रभावित होती है।

| क्र. सं. | भौगोलिक क्षेत्र                                             | वनस्पति स्रोत                                        | प्रमुख जैव-सक्रिय यौगिक                          |
|----------|-------------------------------------------------------------|------------------------------------------------------|--------------------------------------------------|
| 1        | यूरोप, उत्तरी अमेरिका एवं एशिया के गैर-उष्णकटिबंधीय क्षेत्र | पॉपुलस एसपीपी., विशेषकर पॉपुलस निग्रा एल.            | पॉलीफेनॉल                                        |
| 2        | रूस                                                         | सिल्वर बर्च                                          | पॉलीफेनॉल                                        |
| 3        | ब्राजील                                                     | बैकरिस प्रजाति, मुख्यतः बैकारिस इंकनकुलिफोलिया डीसी. | प्रेनाइलेटेड $p$ -कौमारिक अम्ल, डाइटरेपेनिक अम्ल |
| 4        | क्यूबा, वेनेजुएला                                           | ऑटोग्राफ वृक्ष                                       | पॉलीप्रेनाइलेटेड बेंजोफिनोन                      |
| 5        | प्रशांत क्षेत्र (ओकिनावा, ताइवान)                           | अज्ञात                                               | सी-प्रेनाइल फ्लेवानोन, पयूरोपयूरान लिमन          |
| 6        | कैनरी द्वीप समूह                                            | अज्ञात                                               | पयूरोपयूरान लिमन                                 |
| 7        | केन्या                                                      | अज्ञात                                               | पॉलीफेनॉल                                        |
| 8        | ग्रीस एवं साइप्रस                                           | अज्ञात                                               | फ्लेवोनॉयड्स, टरपीन                              |

## भारतीय परिप्रेक्ष्य में प्रोपोलिस

भारत एक विशाल एवं जैव-विविधता से समृद्ध देश है, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों में पाई जाने वाली प्रोपोलिस की अनेक किस्में उपलब्ध हैं। इन प्रोपोलिस नमूनों की रासायनिक संरचना, जैव-सक्रिय यौगिकों की मात्रा तथा औषधीय गुणों में उल्लेखनीय भिन्नता पाई जाती है, जिसका विवरण तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

| क्र. सं. | भौगोलिक क्षेत्र | जैविक गतिविधि              | निष्कर्षण हेतु प्रयुक्त विलायक                                   |
|----------|-----------------|----------------------------|------------------------------------------------------------------|
| 1        | कर्नाटक         | जीवाणुरोधी                 | पेट्रोलियम ईथर, क्लोरोफॉर्म, एथेनॉल, मेथेनॉल तथा 40% मेथेनॉल     |
| 2        | पश्चिम बंगाल    | प्रतिऑक्सीकारक             | एथेनॉल एवं जल                                                    |
| 3        | गुजरात          | प्रतिऑक्सीकारक, रोगाणुरोधी | एथेनॉल, जल, पेट्रोलियम ईथर, क्लोरोफॉर्म, मेथेनॉल तथा 40% मेथेनॉल |
| 4        | मध्य प्रदेश     | रोगाणुरोधी, यकृत-संरक्षक   | एथेनॉल                                                           |
| 5        | महाराष्ट्र      | रोगाणुरोधी, जीवाणुरोधी     | एथेनॉल                                                           |

यद्यपि भारतीय प्रोपोलिस में औषधीय, प्रतिऑक्सीकारक, जीवाणुरोधी, कवकरोधी तथा यकृत-संरक्षक गुणों की अपार संभावनाएँ हैं, फिर भी इस क्षेत्र में अभी व्यापक वैज्ञानिक अनुसंधान एवं व्यवस्थित अन्वेषण की आवश्यकता है। भारत की विविध वनस्पतियों एवं जलवायु

परिस्थितियों के कारण यहाँ की प्रोपोलिस वैश्विक स्तर पर एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक जैव-ससाधन के रूप में उभर सकती है। वर्तमान में भारतीय प्रोपोलिस की रासायनिक संरचना, जैविक गतिविधियों तथा औद्योगिक एवं चिकित्सीय उपयोगों के संबंध में अभी बहुत कुछ खोजा जाना शेष है।

## प्रोपोलिस के उपयोग

प्रोपोलिस औषधीय एवं जैविक गुणों से भरपूर होता है। इसमें उपस्थित फ्लेवोनॉयड्स, पॉलीफेनॉल, फिनोलिक अम्ल तथा अन्य जैव-सक्रिय यौगिक इसे जीवाणुरोधी, कवकरोधी, विषाणुरोधी, सूजनरोधी एवं प्रतिऑक्सीकारक गुण प्रदान करते हैं।

## प्रतिरक्षा प्रणाली पर प्रभाव

प्रोपोलिस में उपस्थित जैव सक्रिय तत्व मानव प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाते हैं। फ्लेवोनॉयड्स एंटीबॉडी निर्माण को प्रोत्साहित करते हैं। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि प्रोपोलिस के सेवन के बाद रक्त में एंटीबॉडी की मात्रा 32-36% तक बढ़ सकती है। इसी कारण प्रोपोलिस को एक प्रभावी प्राकृतिक एंटीबायोटिक माना जाता है। यह संश्लेषित एंटीबायोटिक दवाओं की तरह गुर्दे, यकृत अथवा आँतों पर दुष्प्रभाव नहीं डालता।



छप्ते के भीतर प्रोपोलिस द्वारा संरक्षित घुंटे का कंकाल

## ह्रसन संबंधी रोग

प्रोपोलिस सर्दी, जुकाम, खाँसी, फलू, गले के दर्द और साइनसाइटिस में लाभकारी पाया गया है। इसे स्प्रै, च्युइंगम, सिरप या लॉजेंज के रूप में उपयोग किया जाता है।

## जोड़ों के रोग

प्रोपोलिस गठिया और रूमेटीज्म में लाभकारी है। इसके सूजनरोधी गुण जोड़ों की सूजन और दर्द को कम करने में सहायता करते हैं।

## घाव एवं जलन

घावों और जलने की चोटों के उपचार में प्रोपोलिस अत्यंत प्रभावी पाया गया है।

वर्ष 2002 में अमेरिका में किए गए एक अध्ययन में प्रोपोलिस की तुलना सिल्वर सल्फाडायजीन से की गई, जो जलन के उपचार की एक प्रचलित दवा है। अध्ययन में पाया गया कि प्रोपोलिस से उपचारित घावों में कम सूजन थी और वे अधिक तेजी से ठीक हुए।

## कवकरोधी गुण

प्रोपोलिस अनेक फाफूदजनित रोगजनकों के विरुद्ध प्रभावी है। अध्ययनों में पाया गया कि इसकी एंटीफंगल क्षमता कुछ मामलों में इट्राकोनाज़ोल जैसी औषधियों के समान प्रभावी हो सकती है।

## मूत्र मार्ग संक्रमण

प्रोपोलिस में उपस्थित एंटीसेप्टिक गुण हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट करने में सहायक होते हैं, जिससे मूत्र मार्ग संक्रमण के उपचार में सहायता मिलती है।

## ऑक्सीकरण-रोधी गुण

प्रोपोलिस में प्रचुर मात्रा में प्रो-विटामिन ए और फ्लेवोनॉयड्स पाए जाते हैं। ये शरीर में उपस्थित मुक्त कणों को निष्क्रिय करके कोशिकाओं को क्षति से बचाते हैं तथा वृद्धावस्था की प्रक्रिया को धीमा करते हैं।

## निष्कर्ष

प्रोपोलिस मधुमक्खियों द्वारा निर्मित एक अत्यंत मूल्यवान प्राकृतिक उत्पाद है, जिसमें जीवाणुरोधी, फाफूदरोधी, सूजनरोधी, प्रतिरक्षा-वर्धक तथा एंटीऑक्सीडेंट गुण पाए जाते हैं। इसकी बहुआयामी औषधीय उपयोगिता के कारण यह आधुनिक चिकित्सा, खाद्य संरक्षण, कृषि और प्राकृतिक स्वास्थ्य उत्पादों में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। प्रोपोलिस वास्तव में प्रकृति का एक अनमोल उपहार है।



## सुगंध से समृद्धि तक : सगंध तेलों की अनूठी दुनिया

अर्चना महापात्र, प्रियंका साकरे, नंदकिशोर ठोंबरे  
भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रशिक्षण संस्थान, राँची

जब भी गुलाब, चमेली, पुदीना या चंदन की सुगंध हमारे आसपास फैलती है, तो मन स्वतः ही प्रसन्नता और ताजगी का अनुभव करता है। इन मनमोहक सुगंधों के पीछे छिपा होता है पौधों का सुगंधित सत्व, जिसे सगंध तेल (एसेंशियल ऑयल), तथा वाष्पशील तेल कहा जाता है। यद्यपि अंग्रेजी शब्द एसेंशियल का अर्थ यहाँ "आवश्यक" नहीं है, बल्कि पौधे के एसेंस अर्थात् उसके सुगंधित सार या सत्व से है। इस दृष्टि से सगंध तेलों को पौधों का सुगंधित सत्व, प्राकृतिक अर्क तेल अथवा गंध तेल भी कहा जा सकता है। इनमें पौधों की विशिष्ट सुगंध और अनेक उपयोगी गुण अत्यधिक सघन रूप में विद्यमान रहते हैं।

सगंध तेल पौधों के विभिन्न भागों, जैसे पत्तियों, पुष्पों, छाल, जड़ों, बीजों तथा फलों के छिलकों से प्राप्त किए जाते हैं। लंबे समय तक इन्हें मुख्यतः इत्र और सुगंधित उत्पादों तक ही सीमित माना जाता था, किंतु आज इनका महत्व इससे कहीं अधिक व्यापक हो चुका है। स्वास्थ्य एवं कल्याण, खाद्य प्रसंस्करण, औषधि निर्माण, कृषि तथा घरेलू उत्पादों में इनके उपयोग की संभावनाएँ निरंतर बढ़ रही हैं। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होने तथा बहुआयामी उपयोगिता के कारण ये आधुनिक जीवनशैली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनते जा रहे हैं।

विश्व में पाई जाने वाली लाखों पौध प्रजातियों में से बड़ी संख्या ऐसे पौधों की है जिनसे सगंध तेल प्राप्त किए जा सकते हैं। पौधों के लिए ये तेल केवल सुगंध के स्रोत नहीं हैं, बल्कि उनकी प्राकृतिक सुरक्षा प्रणाली का भी महत्वपूर्ण अंग है। ये पौधों को कीटों, रोगजनकों तथा अन्य प्रतिकूल परिस्थितियों से बचाने में सहायता करते हैं। कई बार यही सुगंध परागण करने वाले कीटों और अन्य जीवों को आकर्षित कर पौधों के प्रजनन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सुगंधित पौध अर्कों का इतिहास मानव सभ्यता जितना ही पुराना है। प्राचीन मिस्र के धार्मिक अनुष्ठानों, चीन की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति तथा भारत के आयुर्वेद में सुगंधित पौध अर्कों का व्यापक उपयोग होता था। मध्यकाल में अरब विद्वानों ने आसवन तकनीकों को विकसित कर सुगंधित यौगिकों के निष्कर्षण को नई दिशा प्रदान की, जिसने आगे चलकर आधुनिक सगंध तेल उद्योग की नींव रखी।

वर्तमान समय में प्राकृतिक, सुरक्षित और पर्यावरण-अनुकूल उत्पादों की बढ़ती मांग ने सगंध तेलों के महत्व को और अधिक बढ़ा दिया है। अरोमाथेरेपी, व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों, प्राकृतिक खाद्य फलेवर, जैविक कीट नियंत्रण तथा घरेलू सफाई उत्पादों में इनका उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। चीन, भारत, इंडोनेशिया, श्रीलंका और वियतनाम जैसे एशियाई देश सगंध तेलों के प्रमुख उत्पादकों में शामिल हैं। भारत, जो

पुदीना, लेमनग्रास, सिट्रोनेला, खस, गुलाब और चंदन जैसे सुगंधित एवं औषधीय पौधों की समृद्ध विविधता से संपन्न है, इस क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाने की अपार क्षमता रखता है। निष्कर्षण तकनीकों में हो रही प्रगति तथा प्राकृतिक उत्पादों के प्रति बढ़ती उपभोक्ता रुचि भविष्य में अनुसंधान, उद्योग और ग्रामीण आजीविका के नए अवसरों का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।



प्रकृति से प्राप्त सगंध तेल

### सगंध तेलों के स्रोत

प्रकृति ने पौधों के विभिन्न भागों में सुगंध और उपयोगी जैव सक्रिय यौगिकों का अद्भुत भंडार संचित किया है। इन्हीं से सगंध तेल प्राप्त होते हैं। पत्तियाँ, पुष्प, छाल, लकड़ी, जड़े, बीज तथा फलों के छिलके सगंध तेलों के प्रमुख स्रोत हैं। किसी भी सगंध तेल की गुणवत्ता, सुगंध और रासायनिक संरचना अनेक कारकों पर निर्भर करती है, जिनमें पौधे की प्रजाति, उपयोग किया गया पौध भाग, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ तथा निष्कर्षण विधि प्रमुख हैं। यही कारण है कि विभिन्न पौधों से प्राप्त तेलों की सुगंध, गुण और उपयोग भी भिन्न-भिन्न होते हैं।

पत्तियाँ सगंध तेलों के सबसे सामान्य स्रोतों में से एक हैं। पत्तियों से प्राप्त तेलों का उपयोग औषधीय, खाद्य तथा व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों में व्यापक रूप से किया जाता है। उदाहरण के लिए, नीलगिरी की पत्तियों से प्राप्त तेल में यूकेलिप्टोल नामक यौगिक प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जिसके कारण इसका उपयोग बसन्त संबंधी उत्पादों में किया जाता है। पुष्प भी सगंध तेलों का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। फूलों से प्राप्त तेल सामान्यतः अत्यधिक सुगंधित होते हैं और इत्र उद्योग में विशेष

महत्व रखते हैं। गुलाब का तेल विश्व के सबसे मूल्यवान सगंध तेलों में गिना जाता है और इसका उपयोग इत्र, सौंदर्य प्रसाधनों तथा प्रीमियम सुगंधित उत्पादों में व्यापक रूप से किया जाता है।

कुछ पौधों की छाल और लकड़ी भी बहुमूल्य सगंध तेलों के स्रोत होती हैं। चंदन की सारकाष्ठ से प्राप्त तेल अपनी विशिष्ट सुगंध और शांतिदायक प्रभाव के कारण अत्यंत लोकप्रिय है। जड़ें तथा भूमिगत भाग भी सगंध तेलों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। खस की जड़ों से प्राप्त तेल अपनी मिट्टी जैसी सौंधी सुगंध के कारण इत्र उद्योग और अरोमाथेरेपी में विशेष स्थान रखता है। बीज भी कई महत्वपूर्ण सगंध तेलों के स्रोत हैं। सीफ और अनीस के बीजों से प्राप्त तेल अपनी मीठी सुगंध के लिए प्रसिद्ध हैं तथा खाद्य पदार्थों, पारंपरिक उपचारों और फ्लेवरिंग उत्पादों में उपयोग किए जाते हैं। कुछ वृक्षों की राल से भी मूल्यवान सगंध तेल प्राप्त होते हैं। फ्रैक्मिसेन्स का तेल अरोमाथेरेपी तथा पारंपरिक उपयोगों के लिए जाना जाता है। खट्टे फलों के छिलके सगंध तेलों के अत्यंत

समृद्ध स्रोत माने जाते हैं। नींबू और संतरे के छिलकों से प्राप्त तेलों में लिमोनीन नामक यौगिक प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो उनकी ताजगी भरी सुगंध के लिए उत्तरदायी है।

सगंध तेल केवल सुगंधित द्रव नहीं हैं, बल्कि अनेक प्राकृतिक रासायनिक यौगिकों का जटिल मिश्रण होते हैं। यही यौगिक उनकी विशिष्ट सुगंध, स्वाद तथा जैविक गुणों के लिए उत्तरदायी होते हैं। किसी भी सगंध तेल की संरचना पौधे की प्रजाति, उपयोग किए गए पौध भाग, जलवायु, मिट्टी तथा निष्कर्षण विधि के अनुसार भिन्न हो सकती है। यही कारण है कि एक ही पौधे से प्राप्त तेल भी विभिन्न क्षेत्रों या परिस्थितियों में कुछ अलग गुण प्रदर्शित कर सकता है। प्रमुख रासायनिक घटकों में टरपीन, एल्कोहॉल, एलिडहाइड, कीटोन तथा एस्टर शामिल हैं, जो तेलों की सुगंध और उपयोगिता निर्धारित करते हैं। विभिन्न पौध भागों से प्राप्त प्रमुख सगंध तेलों, उनके मुख्य घटकों तथा उपयोगों का विवरण नीचे दी गई सारणी में प्रस्तुत किया गया है :

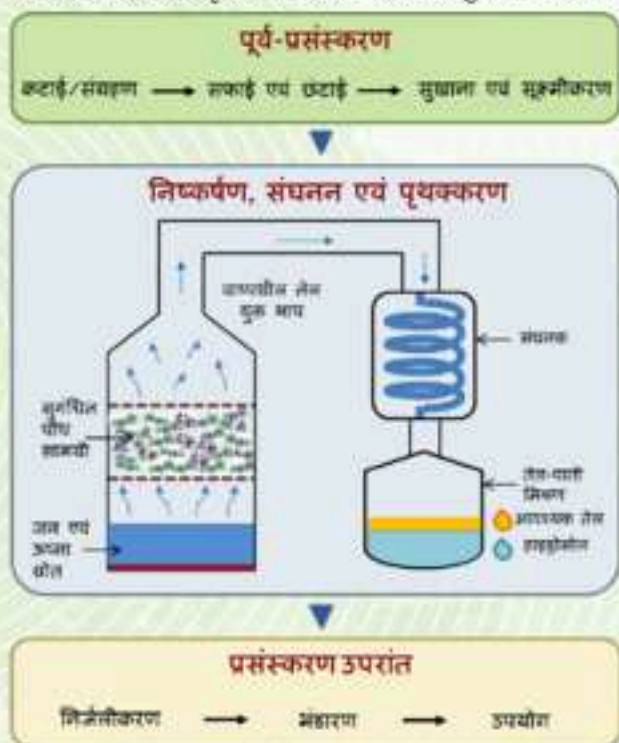
**विभिन्न पौध भागों से प्राप्त प्रमुख सगंध तेल, उनके मुख्य घटक एवं उपयोग**

| सगंध तेल          | पौध भाग    | तेल की मात्रा (%) | प्रमुख घटक                   | प्रमुख गुण/ उपयोग                    |
|-------------------|------------|-------------------|------------------------------|--------------------------------------|
| पुदीना तेल        | पत्ती      | 0.4-1.0           | मेंथॉल                       | शीतलता, फ्लेवरिंग, व्यक्तिगत देखभाल  |
| नीलगिरी तेल       | पत्ती      | 0.5-3.5           | यूकेलिप्टोल                  | श्वास स्वास्थ्य उत्पाद, रोगाणुरोधी   |
| लेमनग्रास तेल     | पत्ती      | 0.5-1.5           | सिट्राल                      | कीट प्रतिरोधी, अरोमाथेरेपी           |
| तुलसी तेल         | पत्ती      | 0.5-1.0           | लिनालूल, मिथाइल चैविकोल      | रोगाणुरोधी, अरोमाथेरेपी, खाद्य उपयोग |
| गुलाब तेल         | पुष्प      | 0.01-0.05         | सिट्रोनेलोल, जेरानियोल       | इत्र, सौंदर्य प्रसाधन                |
| चमेली तेल         | पुष्प      | 0.02-0.15         | बेजिल एसिटेट                 | अरोमाथेरेपी, इत्र                    |
| लैवेंडर तेल       | पुष्प      | 0.5-3.2           | लिनालूल, लिनाइल एसिटेट       | शांतिदायक, अरोमाथेरेपी               |
| अदरक तेल          | प्रकंद     | 1.0-3.0           | जिजिबेरिन                    | सुगंध, स्वास्थ्य उत्पाद              |
| खस तेल            | जड़        | 0.3-2.0           | वेटिवेरोल                    | अरोमाथेरेपी, इत्र                    |
| वैलेरियन तेल      | जड़/प्रकंद | 0.1-0.5           | वैलेरनिक अम्ल                | शांतिदायक, हर्बल उपयोग               |
| अजवाइन तेल        | बीज        | 1.0-5.0           | थाइमोल                       | रोगाणुरोधी, पाचन संबंधी उपयोग        |
| सीफ तेल           | बीज        | 1.5-6.0           | एनेथोल                       | फ्लेवरिंग, पारंपरिक उपयोग            |
| इलायची तेल        | बीज        | 4.0-9.0           | 1,8-सिनियोल, टरपिनाइल एसिटेट | फ्लेवरिंग, सुगंध                     |
| फ्रैक्मिसेन्स तेल | राल        | 1.0-8.0           | $\alpha$ -पाइनीन             | अरोमाथेरेपी, आध्यात्मिक उपयोग        |
| मिर्च तेल         | राल        | 0.4-8.0           | पयूरानोसेस्क्वीटर्पीन        | पारंपरिक स्वास्थ्य उपयोग             |
| दालचीनी तेल       | छाल        | 0.4-0.6           | सिनामालिडहाइड                | रोगाणुरोधी, मसालेदार सुगंध           |
| चंदन तेल          | काष्ठ      | 1.5-3.5           | सैटलोल                       | इत्र, त्वचा देखभाल                   |
| देवदार तेल        | छाल/काष्ठ  | 0.5-2.0           | सेड्रोल                      | इत्र, सुगंधित उत्पाद                 |
| नींबू तेल         | फल छिलका   | 1.5-4.0           | लिमोनीन                      | खाद्य फ्लेवर, ताजगी                  |
| संतरा तेल         | फल छिलका   | 0.5-5.0           | लिमोनीन                      | पेय पदार्थ, सौंदर्य प्रसाधन          |
| बर्गमोट तेल       | फल छिलका   | 0.5-1.5           | लिमोनीन, लिनाइल एसिटेट       | अरोमाथेरेपी, इत्र                    |

\* तेल की मात्रा के मान विभिन्न प्रजातियों, खेती की परिस्थितियों, पौध सामग्री की अवस्था तथा निष्कर्षण विधि के अनुसार परिवर्तित हो सकते हैं।

## संगंध तेलों का निष्कर्षण

किसी भी संगंध तेल की गुणवत्ता, मात्रा तथा रासायनिक संरचना काफी हद तक उसकी निष्कर्षण विधि पर निर्भर करती है। सुगंधित यौगिक प्रायः ऊष्मा और पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति संवेदनशील होते हैं, इसलिए उपयुक्त निष्कर्षण तकनीक का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। यदि प्रक्रिया सावधानीपूर्वक न अपनाई जाए, तो तेल की सुगंध, गुणवत्ता तथा उपयोगी गुण प्रभावित हो सकते हैं। विभिन्न पौध सामग्रियों की संरचना, उनमें उपस्थित तेल की मात्रा तथा ताप के प्रति उनकी संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग निष्कर्षण विधियों का उपयोग किया जाता है। संगंध तेल निष्कर्षण की सामान्य प्रक्रिया का एक सरलीकृत प्रवाह संलग्न चित्र में प्रस्तुत किया गया है।



संगंध तेल उत्पादन की सामान्य प्रक्रिया एवं भाप आसवन प्रणाली

संगंध तेलों के निष्कर्षण की सबसे पुरानी और प्रचलित विधियों में जल आसवन प्रमुख है। इस विधि में पौध सामग्री को पानी में डालकर गर्म किया जाता है। उबलते पानी से उत्पन्न भाप पौध सामग्री में उपस्थित वाष्पशील सुगंधित यौगिकों को अपने साथ ले जाती है। बाद में इन वाष्पों को ठंडा कर तेल को पानी से अलग कर लिया जाता है। चूंकि यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत नियंत्रित तापमान पर संपन्न होती है, इसलिए तेल के गुण काफी हद तक सुरक्षित रहते हैं। अनुसंधान प्रयोगशालाओं में इस उद्देश्य के लिए क्लेवेजर उपकरण का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

भाप आसवन वर्तमान में संगंध तेलों के औद्योगिक उत्पादन की सबसे लोकप्रिय तकनीक है और विश्व के अधिकांश संगंध तेल इसी विधि से

प्राप्त किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में भाप को पौध सामग्री के बीच से प्रवाहित किया जाता है, जिससे तेल युक्त संरचनाओं से सुगंधित यौगिक बाहर निकल आते हैं। ये यौगिक भाप के साथ संचनक में पहुँचते हैं, जहाँ उन्हें ठंडा कर तरल रूप में परिवर्तित किया जाता है। इसके बाद तेल को पानी से अलग कर लिया जाता है। उच्च गुणवत्ता वाले तेल प्राप्त करने तथा ऊष्मा से होने वाली क्षति को कम करने के कारण यह विधि व्यापक रूप से अपनाई जाती है।

खट्टे फलों, जैसे नींबू, संतरा और ग्रेपफ्रूट के छिलकों से तेल प्राप्त करने के लिए सामान्यतः कोल्ड प्रेसिंग विधि का उपयोग किया जाता है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें ऊष्मा का प्रयोग नहीं किया जाता। फल के छिलकों को यांत्रिक दबाव द्वारा दबाकर तेल निकाला जाता है और बाद में उसे अन्य घटकों से अलग कर लिया जाता है। चूंकि इस प्रक्रिया में ताप का प्रभाव नहीं पड़ता, इसलिए तेल की प्राकृतिक सुगंध और उसके महत्वपूर्ण घटक सुरक्षित बने रहते हैं। इसी कारण कोल्ड-प्रेस्ड तेलों का उपयोग खाद्य पलेवर, पेय पदार्थों, सौंदर्य प्रसाधनों तथा सफाई उत्पादों में व्यापक रूप से किया जाता है।

कुछ नाजुक पुष्पों, जैसे गुलाब और चमेली, के सुगंधित यौगिक ऊँचे तापमान पर अपघटित हो सकते हैं। ऐसे पौधों से तेल प्राप्त करने के लिए विलायक निष्कर्षण विधि अपनाई जाती है। इस प्रक्रिया में एथेनॉल या हेक्सेन जैसे कार्बनिक विलायकों की सहायता से सुगंधित यौगिकों को पौध सामग्री से निकाला जाता है। बाद में विलायक को अलग कर सघन सुगंधित अर्क प्राप्त किया जाता है। यद्यपि इस विधि से अत्यंत उच्च गुणवत्ता वाले सुगंधित उत्पाद प्राप्त किए जा सकते हैं, फिर भी इसकी लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है।

हाल के वर्षों में संगंध तेलों के निष्कर्षण के लिए आधुनिक तकनीकों का विकास तेजी से हुआ है। माइक्रोवेव-सहायित निष्कर्षण तथा सुपरक्रिटिकल फ्लुइड निष्कर्षण जैसी उन्नत तकनीकें शोधकर्ताओं और उद्योगों का ध्यान आकर्षित कर रही हैं। इन तकनीकों का उद्देश्य कम समय में अधिक तेल प्राप्त करना, ऊर्जा की बचत करना तथा तेल की गुणवत्ता में सुधार करना है। प्राकृतिक उत्पादों की बढ़ती मांग और हरित प्रौद्योगिकियों के विकास के साथ भविष्य में संगंध तेल निष्कर्षण के क्षेत्र में और अधिक नवाचार देखने को मिल सकते हैं।

## उपयोग एवं लाभ

सदियों से विभिन्न पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में संगंध तेलों का उपयोग किया जाता रहा है। समय के साथ इनका महत्व और उपयोगिता लगातार बढ़ती गई है। आज संगंध तेल केवल सुगंध तक सीमित नहीं हैं, बल्कि स्वास्थ्य एवं कल्याण, सौंदर्य प्रसाधन, खाद्य उद्योग, कृषि तथा घरेलू उत्पादों जैसे अनेक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होने तथा बहुआयामी गुणों के कारण विश्वभर में इनकी मांग निरंतर बढ़ रही है।



संगंध तेलों का सबसे लोकप्रिय उपयोग अरोमाथेरेपी में देखा जाता है। इस पद्धति में सुगंध का उपयोग मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए किया जाता है। संगंध तेलों की सुगंध घ्राण प्रणाली को प्रभावित कर मनोदशा और भावनाओं पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। लैवेंडर, कैमोमाइल और चंदन जैसे तेल अपने शांतिदायक प्रभाव के लिए प्रसिद्ध हैं, जबकि नींबू और सतरे जैसे खट्टे फलों के तेल ताजगी और ऊर्जा का अनुभव कराते हैं।

सौंदर्य प्रसाधन एवं व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों में भी संगंध तेलों का व्यापक उपयोग होता है। साबुन, क्रीम, लोशन, शैम्पू तथा त्वचा की देखभाल से जुड़े अनेक उत्पादों में इनका उपयोग सुगंध के साथ-साथ उनके लाभकारी गुणों के कारण किया जाता है। उदाहरण के लिए, टी-ट्री तेल अपने जीवाणुरोधी विशेषताओं के लिए जाना जाता है, जबकि गुलाब और लैवेंडर के तेल अपनी सुगंध एवं त्वचा-अनुकूल गुणों के कारण लोकप्रिय हैं।

खाद्य एवं पेय उद्योग में भी संगंध तेलों का महत्वपूर्ण स्थान है। पुदीना, सौंफ, नींबू, संतरा तथा विभिन्न मसालों से प्राप्त तेलों का उपयोग प्राकृतिक फ्लेवोरिंग एजेंट के रूप में किया जाता है। कुछ संगंध तेलों में रोगाणुरोधी एवं प्रतिऑक्सीकारक गुण भी पाए जाते हैं, जिसके कारण इन्हें कृत्रिम परिरक्षकों के संभावित प्राकृतिक विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

हाल के वर्षों में कृषि क्षेत्र में भी संगंध तेलों की उपयोगिता पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। सिट्रोनेला, लेमनग्रास, नीलगिरी और पुदीना जैसे तेलों में कीट-प्रतिरोधी तथा रोगाणुरोधी गुण पाए जाते हैं। इनका उपयोग फसल संरक्षण, भंडारित अनाजों की सुरक्षा तथा समेकित कीट प्रबंधन कार्यक्रमों में किया जा सकता है। पौधों से प्राप्त होने और जैव-अपघटनीय होने के कारण ये रासायनिक उत्पादों के पर्यावरण-अनुकूल विकल्प के रूप में उभर रहे हैं तथा सतत कृषि को बढ़ावा देने में सहायक हो सकते हैं।

इन सबके अतिरिक्त, संगंध तेल घरेलू उपयोग की अनेक वस्तुओं में भी प्रयुक्त होते हैं। एयर फ्रेशनर, रूम स्प्रे, सुगंधित मोमबत्तियाँ तथा प्राकृतिक सफाई उत्पादों में इनका व्यापक उपयोग किया जाता है। नींबू और नीलगिरी के तेल अपनी ताजगी भरी सुगंध और सफाई संबंधी गुणों के कारण विशेष रूप से लोकप्रिय हैं।

अपनी बहुमुखी उपयोगिता, प्राकृतिक स्रोत और बढ़ती उपभोक्ता स्वीकृति के कारण संगंध तेल आज उद्योगों और आम उपभोक्ताओं दोनों के लिए आकर्षण का केंद्र बने हुए हैं। स्वास्थ्य, सौंदर्य, खाद्य सुरक्षा, कृषि और घरेलू उपयोग जैसे विविध क्षेत्रों में उनकी भूमिका आने वाले वर्षों में और अधिक महत्वपूर्ण होने की संभावना है।



संगंध तेलों के प्रमुख अनुप्रयोग: स्वास्थ्य से कृषि तक

### संगंध तेलों का सुरक्षित उपयोग

संगंध तेल अत्यंत सघन पौध अर्क होते हैं। इनकी कुछ बूंदों में भी बड़ी मात्रा में जैव सक्रिय यौगिक उपस्थित हो सकते हैं। यही कारण है कि कम मात्रा में उपयोग किए जाने पर भी ये प्रभावी होते हैं। हालांकि, इनकी अधिक सघनता के कारण इनका उपयोग सावधानीपूर्वक किया

जाना आवश्यक है। कुछ सामान्य सावधानियों का पालन करके संगंध तेलों का सुरक्षित एवं प्रभावी उपयोग किया जा सकता है।

त्वचा पर उपयोग करने से पहले संगंध तेलों को सामान्यतः किसी उपयुक्त वाहक तेल, जैसे नारियल, बादाम या जोजोबा तेल के साथ मिलाकर उपयोग करना चाहिए। पहली बार उपयोग से पूर्व पैच टेस्ट करना भी उचित माना जाता है, ताकि किसी संभावित एलर्जी या प्रतिकूल प्रतिक्रिया का पता लगाया जा सके। बिना पतला किए गए संगंध तेलों को सीधे त्वचा पर लगाने से बचना चाहिए।

संगंध तेलों का सेवन विशेषज्ञ के मार्गदर्शन के बिना नहीं करना चाहिए, क्योंकि अधिक मात्रा में ये हानिकारक हो सकते हैं। छोटे बच्चों, गर्भवती महिलाओं, वृद्ध व्यक्तियों तथा पालतू पशुओं के आसपास इनके उपयोग में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

इनकी गुणवत्ता बनाए रखने के लिए इन्हें अच्छी तरह बंद कांच की बोतलों में, सीधे सूर्य प्रकाश, अत्यधिक गर्मी तथा नमी से दूर रखना चाहिए।

## सततता एवं ग्रामीण आजीविका

प्राकृतिक उत्पाद होने के बावजूद संगंध तेलों का उत्पादन स्वतः ही सतत नहीं माना जा सकता। संगंध तेलों की थोड़ी-सी मात्रा प्राप्त करने के लिए प्रायः बड़ी मात्रा में पौध सामग्री की आवश्यकता होती है। यदि इन पौधों का संग्रहण और उपयोग वैज्ञानिक एवं जिम्मेदार तरीके से न किया जाए, तो इसका प्रतिकूल प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों और जैव विविधता पर पड़ सकता है।

सुगंधित पौधों का अनियंत्रित या अत्यधिक दोहन प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के लिए चिंता का विषय बन सकता है। विशेष रूप से चंदन जैसे धीमी गति से बढ़ने वाले पौधे अत्यधिक दोहन के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। इसी प्रकार, यदि सुगंधित फसलों की बड़े पैमाने पर एकल फसल के रूप में खेती की जाए और उचित प्रबंधन न अपनाया जाए, तो इससे मृदा स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है तथा कृषि जैव विविधता में कमी आ सकती है।

संगंध तेल उद्योग के सामने एक अन्य महत्वपूर्ण चुनौती तेलों में मिलावट की है। वैश्विक मांग और ऊँचे बाजार मूल्य के कारण कई बार शुद्ध तेलों को सस्ते तेलों या कृत्रिम रसायनों के साथ मिलाकर बेचा जाता है। ऐसी मिलावट न केवल उत्पाद की गुणवत्ता को प्रभावित करती है, बल्कि उपभोक्ताओं के विश्वास को भी कम करती है। इससे उन किसानों और उत्पादकों को भी नुकसान पहुँचता है, जो उच्च गुणवत्ता वाले शुद्ध संगंध तेलों के उत्पादन में निवेश करते हैं। इसलिए गुणवत्ता मानकों, प्रमाणीकरण तथा उत्पाद की पहचान और स्रोत की पारदर्शिता सुनिश्चित करना (ट्रेसबिलिटी) आवश्यक है।

इन चुनौतियों के बावजूद, संगंध तेल क्षेत्र ग्रामीण विकास और कृषि विविधीकरण की अपार संभावनाएँ समेटे हुए है। केवल कच्ची पौध

सामग्री बेचने के बजाय यदि किसान स्थानीय स्तर पर प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन से जुड़ें, तो उन्हें उत्पाद के अंतिम मूल्य में अधिक हिस्सेदारी प्राप्त हो सकती है।

ग्राम स्तर पर आसवन इकाइयों की स्थापना, किसान उत्पादक संगठनों, स्वयं सहायता समूहों तथा सहकारी समितियों के माध्यम से की जा सकती है। इससे निवेश संबंधी बाधाएँ कम होंगी और किसानों को बेहतर बाजार उपलब्ध हो सकेंगे। लेमनग्रास, सिट्रोनेला, खस और पामारोसा जैसी सुगंधित फसलें अपेक्षाकृत कम कृषि आदानों के साथ सीमांत एवं अनुपजाऊ भूमि पर भी सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। इन्हें फसल चक्र और अन्य कृषि प्रणालियों में आसानी से समाहित किया जा सकता है, जिससे किसानों को आय का अतिरिक्त स्रोत प्राप्त होता है।

यदि किसानों को वैज्ञानिक खेती की जानकारी, तकनीकी प्रशिक्षण, ऋण सुविधा, गुणवत्ता प्रमाणीकरण और प्रभावी विपणन व्यवस्था उपलब्ध कराई जाए, तो संगंध तेल क्षेत्र ग्रामीण आजीविका को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पर्यावरण-अनुकूल उत्पादन प्रणालियों और न्यायसंगत व्यापार के साथ यह क्षेत्र न केवल सतत विकास को बढ़ावा दे सकता है, बल्कि समावेशी ग्रामीण समृद्धि का आधार भी बन सकता है।

## निष्कर्ष

संगंध तेल प्रकृति की सुगंध, विज्ञान और उपयोगिता का अनूठा संगम है। स्वास्थ्य, खाद्य, सौंदर्य प्रसाधन, कृषि तथा घरेलू उपयोग के क्षेत्रों में इनका महत्व लगातार बढ़ रहा है और वे एक मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन के रूप में उभर रहे हैं।

भारत जैसे देश, जहाँ सुगंधित एवं औषधीय पौधों की समृद्ध विविधता और पारंपरिक ज्ञान की सशक्त विरासत मौजूद है, संगंध तेल क्षेत्र के विकास के लिए अत्यंत अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करते हैं। सुगंधित फसलों की खेती, प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन न केवल कृषि विविधीकरण को बढ़ावा दे सकते हैं, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन और किसानों की आय वृद्धि में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इसके साथ ही, सतत उत्पादन प्रणालियों, गुणवत्ता आवासन तथा प्राकृतिक संसाधनों के जिम्मेदारीपूर्ण उपयोग पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में हो रही प्रगति, पर्यावरण के प्रति बढ़ती जागरूकता और प्राकृतिक उत्पादों की बढ़ती स्वीकार्यता को देखते हुए संगंध तेलों की भूमिका भविष्य में और अधिक महत्वपूर्ण होने की संभावना है। इनका महत्व केवल उनकी सुगंध या औषधीय संभावनाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि सतत कृषि, ग्रामीण आजीविका और हरित जैव-आधारित अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में भी निहित है।

## भारत में कृषि उत्पादों के उच्चतर प्रसंस्करण से किसानों की आमदनी बढ़ाने की अपार संभावनाएं

ब्रह्म प्रकाश<sup>1</sup>, दीपक राय<sup>2</sup>, ओम प्रकाश<sup>3</sup> एवं मुकुन्द कुमार<sup>4</sup>

<sup>1</sup>भाकृअनुप - भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

<sup>2</sup>कृषि विज्ञान केंद्र, खुटी

कृषि उच्चतर प्रसंस्करण क्षेत्र को इसकी अपार अप्रयुक्त क्षमता के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए एक उभरते हुए क्षेत्र के रूप में देखा जाता है। कृषि उच्चतर प्रसंस्करण के विकास को प्रोत्साहन देने वाले कारकों में से प्रथम कारण घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में तैयार-खाने योग्य, परोसने योग्य, सुविधाजनक खाद्य पदार्थ, कार्यात्मक खाद्य पदार्थ और पोषक तत्वों जैसे मूल्यवर्धित वस्तुओं के लिए उपभोक्ताओं की बढ़ती मांग है। संगठित खुदरा व्यापार के विकास ने भी इस मांग को बढ़ावा दिया है, जिससे प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ उपभोक्ताओं के लिए सुगमता से उपलब्ध हो गए हैं। दूसरा कारण उद्योगों में उपयोग होने वाले प्राकृतिक संसाधनों के तेजी से क्षय होने से गैर-पारंपरिक नवीकरणीय कृषि-जैव संसाधनों के उपयोग की मांग उत्पन्न हुई है। इस प्रकार, मांग-पक्षीय कारक उच्चतर प्रसंस्करण क्षेत्र के विकास के माध्यम से प्राथमिक कृषि के अंतिम उत्पादों के लिए बाजार के अवसर पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**उपभोग के बदलते पैटर्न:** हाल के घरेलू उपभोग व्यय सर्वेक्षण 2023-24 और भारत में पोषण सेवन के आंकड़ों के आधार पर, भारतीय खान-पान के तरीकों में एक स्पष्ट बदलाव आया है। लोग अब मुख्य भोजन (अनाज) से हटकर दूध, मछली, मांस और सब्जियों जैसे ज्यादा पोषण वाले और कीमती खाद्य पदार्थों की ओर बढ़ रहे हैं। अंडे, मछली, मांस और डेयरी उत्पादों से मिलने वाले प्रोटीन का हिस्सा बढ़ा है, जबकि अनाज पर निर्भरता कम हुई है। यहाँ ऊपर बताए गए खाद्य पदार्थों से जुड़े कुछ खास रुझान दिए गए हैं, जो एनएसएसओ के हाल ही में उपलब्ध आंकड़ों (2022-23 से 2023-24) पर आधारित हैं:

**दूध और दूध से बने उत्पाद:** दूध की खपत में लगातार बढ़ोतरी देखी गई है, और यह ग्रामीण तथा शहरी, दोनों ही इलाकों में भोजन पर होने वाले खर्च में सबसे ऊपर बना हुआ है। कई भारतीय परिवारों के लिए यह मांस के एक बड़े पोषण विकल्प के तौर पर काम करता है। लंबे समय (2011-12 से 2022-23 तक) के दौरान, भोजन में दूध और दूध से बने उत्पादों का हिस्सा बढ़ा है।

**अंडे, मछली और चिकन (मांस):** पशु-आधारित प्रोटीन की खपत में काफी बढ़ोतरी हुई है। आंकड़ों से ज्ञात हुआ है कि मांस, मछली और अंडे खाने की बारंबारता बढ़ी है। पूर्वोत्तर और दक्षिणी राज्यों में इनकी खपत अधिक है। शहरीकरण और बढ़ती खरीदने की क्षमता के चलते,

गत कुछ वर्षों में पोल्ट्री उत्पादों की प्रति व्यक्ति खपत में जबरदस्त बढ़ोतरी हुई है: 2024 में इसकी खपत 50 लाख मीट्रिक टन से भी ज्यादा हो गई है। ग्रामीण और शहरी, दोनों ही इलाकों में अंडों की खपत का हिस्सा बढ़ा है, और अब लोग इन्हें ज्यादा नियमित रूप से (हर हफ्ते) खाने लगे हैं।

**सब्जियाँ:** ग्रामीण और शहरी, दोनों ही क्षेत्रों में सब्जियों की खपत में काफी बढ़ोतरी हुई है। परिवारों द्वारा भोजन पर किए जाने वाले खर्च में सब्जियाँ भी शीघ्र स्थानों में से एक हैं। प्रति व्यक्ति खपत की मात्रा में यह बढ़ोतरी लगभग सभी मुख्य सब्जियों में देखी गई है, जिनमें प्याज, टमाटर और आलू जैसे मुख्य खाद्य पदार्थ भी शामिल हैं।

**फल:** फलों की प्रति व्यक्ति खपत में आम तौर पर बढ़ोतरी हुई है। गत वर्षों की तुलना में, अब फलों का हिस्सा लोगों की भोजन की टोकरी में काफी बढ़ गया है। एनएसएसओ के 2023-24 के आंकड़ों से पता चलता है कि फलों की खपत में होने वाले मौसमी उतार-चढ़ाव अब कम हो गए हैं; इसका मतलब है कि अब आपूर्ति श्रृंखला बेहतर हो गई है और केले, आम तथा सेब जैसे फल पूरे वर्ष लगातार उपलब्ध रहते हैं।

"अंडे, मछली और मांस" पर होने वाले खर्च का हिस्सा काफी ज्यादा है (कुछ रिपोर्टों के अनुसार, प्रोटीन से जुड़े कुल खर्च का लगभग 21.29%)। प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग खर्च बढ़ने के साथ, इन अधिक कीमत वाली चीजों का उपभोग भी बढ़ जाता है, खासकर निचले तबके के लोगों में; यह बेहतर पोषण तक पहुँच का संकेत है। प्रोटीन सेवन में अनाज का योगदान ग्रामीण भारत में लगभग 14% और शहरी भारत में 12% कम हो गया है, जिसकी भरपाई पशु-आधारित प्रोटीन और डेयरी उत्पादों की हिस्सेदारी में हुई बढ़ोतरी से हुई है। एनएसएसओ घरेलू उपभोग व्यय सर्वेक्षण 2023-24 की अंतिम रिपोर्ट इस बात की पुष्टि करती है कि भोजन पर खर्च करने के तरीके अब अनाज-आधारित आहार से हटकर अलग-अलग तरह के हो रहे हैं।

ये तथ्य मुख्य खाद्य अनाजों से फलों और सब्जियों, पशुधन उत्पादों और मत्स्य पालन की ओर स्पष्ट बदलाव को दर्शाते हैं। उत्पादकों ने भी उच्च मूल्य वर्धित उत्पादों के पक्ष में उत्पादन पोर्टफोलियो को पुनर्गठित करके बदलती मांग का जवाब दिया है। मुख्य खाद्य अनाजों के विपरीत, इन उच्च मूल्य वर्धित उत्पादों को अपेक्षाकृत उच्च स्तर के प्रसंस्करण, लॉजिस्टिक्स और भंडारण की आवश्यकता होती है।

**मूल्य वर्धित उत्पादों के लिए बढ़ती प्राथमिकता:** भारत में, देश के कुल बागवानी उत्पादन का केवल लगभग 10% ही मूल्य वर्धित होता है। वहीं, व्यापक खाद्य प्रसंस्करण उद्योग देश के कुल खाद्य बाजार का 32 प्रतिशत हिस्सा है। सबसे अधिक मूल्यवर्धन दूध (35%) में देखा जाता है, उसके बाद समुद्री भोजन (26%), भैंस का मांस (20%), पोल्ट्री उत्पाद (6%) और फल एवं सब्जियाँ (2.2%) का स्थान आता है। विकसित देशों में इन्हीं उत्पादों के लिए मूल्यवर्धन का स्तर अधिक है, जैसे दूध (60-70%), फल एवं सब्जियाँ (65%), भैंस का मांस, समुद्री भोजन और पोल्ट्री उत्पाद (65-70%)। कम मूल्य संवर्धन का कारण कच्चे माल के प्रसंस्करण लायक किस्मों की गैर-मौजूदगी, उत्पादन का मौसमी स्वभाव, और कटाई के बाद के जरूरी अवसंरचना जैसे प्रसंस्करण, कोल्ड चेन, परिवहन और उचित भंडारण सुविधाओं का अभाव है। लेकिन कुछ उच्च मूल्य वर्धित उत्पादों में मूल्य संवर्धित उत्पादों की खपत में एक स्पष्ट बढ़ोतरी देखी गई है। फल और सब्जी क्षेत्र में, यह बढ़ोतरी फलों के जूस/मल्प/कंसट्रेट और आलू चिप्स के लिए सर्वाधिक थी, जिसके बाद वनस्पति और वनस्पति तेल का नंबर आता है। डेयरी सेक्टर में, शिशु दूध उत्पाद में सर्वाधिक बढ़ोतरी हुई, जिसके बाद मक्खन, घी और दूध से बने अन्य फैट्स और आइसक्रीम का स्थान आता है; पोल्ट्री उत्पाद और समुद्री उत्पाद में अच्छी बढ़ोतरी हुई। गत दो दशकों में अनाज की कुल खपत में कमी के विपरीत, अनाज-आधारित मूल्य-संवर्धित उत्पादों की खपत में एक सकारात्मक रुझान देखा गया है। ब्रेकफास्ट सीरियल्स, कन्फेक्शनरी, बिस्किट, ब्रेड और पिसे हुए आटे से बने उत्पादों में सकारात्मक बढ़ोतरी दर्ज की गई है। ये तथ्य और ज्यादा शैल्फ लाइफ़, अच्छी गुणवत्ता, पोषक तत्वों की बढ़ोतरी और इस्तेमाल में आसानी जैसे लाभ मूल्य संवर्धन के लिए काफी गुंजाइश देते हैं। कुल कृषि-खाद्य निर्यात में प्रसंस्कृत खाद्य निर्यात की हिस्सेदारी वित्त वर्ष 2018 के 14.9% से बढ़कर वित्त वर्ष 2025 में 20.4% हो गई है, जो बढ़ते मूल्य संवर्धन को दर्शाता है।

**विशाल उत्पादन आधार:** भारत ने अनाज, फल और सब्जियों, दूध और अंडे के उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल कर ली है। बाजरा (40-41 प्रतिशत) और दालों (25-28 प्रतिशत) के उत्पादन में यह दुनिया में पहले स्थान पर है। चावल (1501.84 लाख टन) और गेहूँ (1179.45 लाख टन) दोनों के वैश्विक उत्पादन में भारत दूसरे स्थान पर है। तिलहन में, भारत मूंगफली (13-17%) और रेपसीड व सरसों (13%) के उत्पादन में दुनिया में क्रमशः दूसरे एवं तीसरे स्थान पर है। अखाद्य तेल क्षेत्र में, भारत अरंडी के उत्पादन (85-90%) में सबसे आगे है और मसूर (22-25%) में दूसरे स्थान पर है। हम फल और सब्जियों दोनों के दूसरे सबसे बड़े उत्पादक (367720 लाख टन) हैं। गन्ने और कपास के वैश्विक उत्पादन में भारत क्रमशः 19-20% तथा 20-25% हिस्सेदारी के साथ दूसरे स्थान पर है।

पंजीकृत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में वृद्धि दर अपंजीकृत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग की तुलना में काफी अधिक है। यह एक बहुत अच्छा

संकेत है, क्योंकि उद्योग बाजार की ताकतों के प्रति प्रतिक्रिया दे रहा है और बड़े पैमाने पर गति पकड़ रहा है। हालाँकि, बारीकी से देखने पर पता चलता है कि 75% प्रसंस्करण इकाइयाँ असंगठित श्रेणी के अंतर्गत आती हैं, जिसके कारण अपनी पूरी क्षमता तक पहुँचने से पहले ही उन्हें आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। असंगठित क्षेत्र में, आपूर्ति श्रृंखला को सुव्यवस्थित करना, कुशल तकनीक का उपयोग करना, बैकवर्ड लिंकेज स्थापित करना, उत्पाद की पहचान करना और संस्थागत नियमों का पालन करना कठिन होता है। आपूर्ति श्रृंखला में भंडारण, परिवहन और नेटवर्किंग के अवैज्ञानिक तरीकों के कारण कटाई के बाद उपज की बर्बादी होती है। नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, कटाई और कटाई के बाद होने वाले नुकसान के राष्ट्रीय स्तर पर मूल्यांकन से ज्ञात हुआ है कि कुल क्षति फलों में सर्वाधिक (6.02 से 15.05%) होती है, जिसके बाद सब्जियाँ (4.87-11.61%), अनाज (3.89-5.99%), दालें (5.65-6.74%), तिलहन (2.87-7.5%), बागवानी और मसाले (1.29-7.33%), दुग्ध उत्पाद (0.87%), कुक्कुट/मुर्गीपालन (6.74%), अंतर्देशीय मछली (5.23%), समुद्री मछली (10.52%) और मांस (2.71%) का स्थान आता है। इन अक्षमताओं को संगठित क्षेत्र की बड़ी हुई भागीदारी के माध्यम से एक जवाबदेह मूल्य श्रृंखला बनाकर कम किया जा सकता है। उच्च-स्तरीय प्रसंस्करण पर ध्यान केंद्रित करना उचित होगा, क्योंकि यह अत्यधिक लाभकारी होगा और सभी हितधारकों के लिए अधिक पारिश्रमिक सुनिश्चित करेगा।

**मूल्य संवर्धन को बढ़ावा देने के लिए पहल और प्रोत्साहन:** सरकार ने कृषि क्षेत्र में मूल्य संवर्धन की आवश्यकता को समझा है और इसे मुख्य क्षेत्रों में से एक के रूप में पहचाना है। भारत सरकार का लक्ष्य अगले 6-7 वर्षों में कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण के स्तर को वर्तमान 12-13% से दोगुना बढ़ाकर 24-26% तक पहुँचाकर कृषि-आधारित उद्योगों को प्रोत्साहित करना और किसानों की आय बढ़ाना है। कृषि निर्यात 2020 में 34.5 बिलियन डॉलर हो गया जिसमें प्रसंस्कृत खाद्य का अंश 20.4% रहा जो मूल्य संवर्धित वृद्धि का संकेत देता है। केंद्रीय बजट में कृषि क्षेत्र के लिए 2013-14 के 21,933 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 2026-27 में 1.30 लाख करोड़ रुपये से अधिक का रिकॉर्ड आवंटन किया गया है जिसका उद्देश्य फसल विविधता तथा मूल्यवर्धन के माध्यम से 2026-27 तक किसानों की आय को दोगुना करने के लक्ष्य के अनुरूप उच्च प्रतिफल सुनिश्चित करना है। फ्रूट होराइजन 2026 जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से बागवानी क्षेत्र में आधुनिक तकनीक का उपयोग करके निर्यात और मूल्यवर्धन बढ़ाने की विशेष नीति अपनाई जा रही है। भारत सरकार का लक्ष्य कृषि उत्पादन में मूल्य-संवर्धित वृद्धि को 20.4% (2024-25 के अनुसार) से बढ़ाकर आगे ले जाना है जो कृषि निर्यात और खाद्य प्रसंस्करण में निरंतर सुधार पर आधारित है।

2047 तक, सरकार का लक्ष्य भारत में प्रसंस्करण के स्तर, मूल्य संवर्धन और वैश्विक खाद्य व्यापार में हिस्सेदारी को बढ़ाना है। इसके लिए, खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के बुनियादी ढांचे को मजबूत करने की जरूरत है, जिसमें एक एकीकृत आपूर्ति शृंखला, भंडारण, संरक्षण और विपणन की सुविधाएं सम्मिलित हों। इस संबंध में, सरकार ने कुछ अहम पहलें की हैं, जैसे मेगा फूड पार्क की स्थापना, एकीकृत कोल्ड चेन का निर्माण, बूचडखानों का आधुनिकीकरण, गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशालाएं और अनुसंधान एवं विकास।

### भारत सरकार के कृषि प्रसंस्करण को प्रोत्साहन देने के लक्ष्य

भारत सरकार ने कृषि प्रसंस्करण को प्रोत्साहन देने का लक्ष्य रखा है, ताकि कटाई उपरांत बर्बादी कम हो, किसानों की आय बड़े और निर्यात का विस्तार हो। इसके लिए 'प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना' (पीएमकेएसवाई) जैसी पहल की गई है, जिसे 31 मार्च, 2026 तक के लिए बढ़ा दिया गया और इसके लिए 4600 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया। इसके मुख्य लक्ष्यों में खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों का विकास और अवसरचनात्मक विकास करना सम्मिलित है, ताकि प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार हो और ग्रामीण रोजगार को बढ़ावा मिले।

### मुख्य लक्ष्य और पहल (2025-27)

**प्रसंस्करण अवसंरचना:** 'प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना' (पीएमकेएसवाई) के माध्यम से, सरकार ने कई परियोजनाओं को मंजूरी दी है, जिनमें 41 मेगा फूड पार्क, 394 कोल्ड चेन परियोजनाएं और सैकड़ों प्रसंस्करण इकाइयां सम्मिलित हैं। इनका उद्देश्य खेत से लेकर रिटेल तक की पूरी आपूर्ति शृंखला को बेहतर बनाना है।

**उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन:** खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के लिए पीएलआई योजना (पीएलआईएसएफपीआई) को 2021-22 से 2026-27 तक लागू किया गया है। इसके लिए 10,900 करोड़ रुपये का बजट रखा गया है, जिसका उद्देश्य 33,494 करोड़ रुपये का प्रसंस्करण खाद्य उत्पादन करना और रोजगार पैदा करना है।

**क्षेत्रीय लक्ष्य (जैसे उत्तर प्रदेश):** 2047 तक के लिए कुछ विशेष लक्ष्य निश्चित किए गए हैं, जिनमें कटाई के उपरांत होने वाले नुकसान को 4% से कम करना और राष्ट्रीय कृषि निर्यात में क्षेत्रीय हिस्सेदारी को 15% से अधिक बढ़ाना सम्मिलित है।

**फोकस क्षेत्र:** 'ऑपरेशन ग्रीन्स' जैसी पहलों के माध्यम से, शीघ्र खराब होने वाली वस्तुओं (फल/सब्जियां) के लिए प्रसंस्करण क्षमताएं विकसित करने पर विशेष बल दिया गया है।

### भारत सरकार के कृषि में मूल्य संवर्धन को प्रोत्साहन देने के लक्ष्य

भारत सरकार किसानों की आय बढ़ाने और निर्यात को बढ़ावा देने के लिए कृषि में मूल्य संवर्धन को तेजी से आगे बढ़ा रही है, जिसका लक्ष्य पाँच वर्षों में 2 ट्रिलियन डॉलर की निर्यात अर्थव्यवस्था बनाना है।

मुख्य रणनीतियों में उच्च मूल्य वाली बागवानी का विस्तार (कृषि उत्पादन का 37% लक्ष्य), खाद्य प्रसंस्करण क्षमता में वृद्धि, और नारियल, कोको, काजू तथा विशेष प्रकार के नट्स के लिए क्षेत्रीय 'मनी क्रॉप' हब की स्थापना शामिल है।

### मूल्य संवर्धन के लिए मुख्य लक्ष्य और रणनीतियाँ (2026)

भारत में बागवानी उत्पादन बढ़कर 370 मिलियन टन से अधिक हो गया है, जिससे यह उच्च मूल्य वाली कृषि का एक प्रमुख आधार बन गया है। प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों का निर्यात बढ़कर 2024-25 तक 9 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक हो गया है।

**उच्च मूल्य वाली फसलों को बढ़ावा:** केंद्रीय बजट 2026-27 में क्षेत्र-विशेष उच्च मूल्य वाली कृषि को लक्षित किया गया है; इसमें तटीय क्षेत्रों में नारियल, कोको और काजू, तथा पहाड़ी क्षेत्रों में बादाम, अखरोट और चिलगोज़ा की खेती शामिल है, ताकि किसानों की आय बढ़ाई जा सके।

**प्रसंस्करण क्षमता का विस्तार:** सरकार ने खाद्य प्रसंस्करण क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि की है; यह 2013-14 के 12 लाख मीट्रिक टन से बढ़कर 2024-25 तक 242 लाख मीट्रिक टन हो गई है।

**बुनियादी ढाँचे में निवेश:** एकीकृत कोल्ड चेन और मूल्य संवर्धन अवसंरचना (आईसीसीवीआई) योजना—जिसके बजट में 2025 में वृद्धि करके इसे 6,520 करोड़ रुपये कर दिया गया है—का मुख्य उद्देश्य फसल कटाई के बाद होने वाले नुकसान को कम करना और उत्पादों का मूल्य बढ़ाना है।

**एफपीओ और क्षेत्रीय फोकस:** प्रधानमंत्री धन-धान्य कृषि योजना (2025-26 के लिए घोषित) का लक्ष्य 100 कम उत्पादकता वाले जिले हैं; इसके तहत 'एक जिला एक उत्पाद' (ओडीओपी) ढाँचे के अंतर्गत 1,240 विशिष्ट उत्पादों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा, ताकि स्थानीय स्तर पर प्रसंस्करण को बढ़ावा मिल सके।

**संबद्ध क्षेत्रों में विविधीकरण:** अतिरिक्त आय के स्रोत बनाने के लिए मत्स्य पालन, डेयरी और पशुधन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

### भारत सरकार के कृषि तथा प्रसंस्करण खाद्य उत्पादों के निर्यात को प्रोत्साहन देने के लक्ष्य

भारत सरकार का लक्ष्य आगामी वर्षों में कृषि और प्रसंस्करण खाद्य पदार्थों के निर्यात को बढ़ाकर 100 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँचाना है। यह लक्ष्य वित्त वर्ष 2024-25 के लगभग 51.90 अरब अमेरिकी डॉलर के स्तर से बहुत अधिक है, और इसका उद्देश्य वैश्विक खाद्य व्यापार में भारत की हिस्सेदारी को काफी बढ़ाना है। मुख्य रणनीतियाँ ज्यादा कीमत वाले उत्पादों पर ध्यान केंद्रित करने, निर्यात के लिए नए बाजार खोजने और बुनियादी ढाँचे को बेहतर बनाने पर आधारित हैं।

## मुख्य लक्ष्य और रणनीतिक उद्देश्य

**निर्यात मूल्य का लक्ष्य:** आगामी चार वर्षों में कृषि, समुद्री और फूड उत्पादों के कुल निर्यात को 100 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया है।

**वैश्विक हिस्सेदारी को दोगुना करना:** मुख्य उद्देश्य वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं के साथ जोड़कर दुनिया के कृषि-निर्यात में भारत की हिस्सेदारी को दोगुना करना है।

**विविधीकरण:** अधिक मूल्य वाले कृषि उत्पादों, जल्दी खराब होने वाले उत्पादों और प्रसंस्करण खाद्य पदार्थों की ओर ध्यान केंद्रित करना।

**दुनियादी डॉंचे का विकास:** कटाई के उपरांत होने वाले नुकसान को कम करना और गुणवत्ता में सुधार करना; उदाहरण के लिए, 'प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना' के जरिए अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा करना।

**क्षेत्रीय लक्ष्य (2047):** विशिष्ट लक्ष्यों में उत्तर प्रदेश की राष्ट्रीय कृषि निर्यात में हिस्सेदारी को 2047 तक बढ़ाकर 15% से ज्यादा करना शामिल है।

## निर्यात बढ़ाने के लिए नीतिगत उपाय

**उत्पादन-आधारित प्रोत्साहन (पीएलआई) योजना:** खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को सहायता देने, वैश्विक स्तर के चैंपियन तैयार करने और भारतीय ब्रांडों को बढ़ावा देने के लिए 10,000 करोड़ रुपये का बजट (2021-22 से 2026-27 तक) आवंटित किया गया है।

**एपेडा की पहलें:** कृषि और प्रसंस्करण खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपेडा) निर्यात के बुनियादी ढाँचे, गुणवत्ता विकास और बाजार को बढ़ावा देने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

**मूल्य संवर्धन पर जोर:** 'खाने के लिए तैयार' और 'पकाने के लिए तैयार' उत्पादों को बढ़ावा देना, जिसमें मिलेड्स-आधारित उत्पादों के लिए एक विशेष पीएलआई योजना भी शामिल है।

**मानव संसाधन विकास और क्षमता निर्माण:** ये सभी पहलें राष्ट्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता एवं प्रबंधन संस्थान, सोनीपत और भारतीय फसल प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी संस्थान, धंजावर की स्थापना के जरिए की गई हैं। सरकार ने 'खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम' के जरिए एक एकीकृत खाद्य कानून भी बनाया है और इस अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए 'भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण' (एफएसएआई) की स्थापना की है। खाद्य प्रसंस्करण (दूध से बने खाद्य पदार्थ, माल्टेड खाद्य पदार्थ और आटा को छोड़कर) और पैकेजिंग उद्योगों की सभी वस्तुओं में, 'ऑटोमैटिक अप्रूवल रूट' के तहत 100% तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अनुमति है। इसका अर्थ यह है कि विदेशी निवेशक बिना पूर्व सरकारी मंजूरी के इन क्षेत्रों में निवेश कर सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में कृषि उच्चतर प्रसंस्करण की अपार संभावनाएँ हैं तथा भारत सरकार द्वारा उठाए गए विभिन्न कदमों से इसके परिणाम कुछ ही वर्षों में दृष्टिगोचर होने लगेंगे जिससे किसानों की आय तथा उनके रहन सहन के स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकेगी।



## चक्रीय अर्थव्यवस्था के लिए चीनी उद्योग के सह-उत्पादों का मूल्य संवर्धन

प्रियंका साकरे, नंदकिशोर ठोंबरे एवं अर्चना महापात्र

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, राँची

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में औद्योगिक विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय स्थिरता और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सबसे बड़ी जरूरत बनकर उभरे हैं। पारंपरिक रेखीय अर्थव्यवस्था के मॉडल 'लो, बनाओ, उपयोग करो और फेंक दो' ने कचरे के अंबार और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को खतरनाक स्तर पर पहुंचा दिया है। इसके विपरीत, 'चक्रीय अर्थव्यवस्था' का सिद्धांत 'कचरे से कचरा' या 'अपशिष्ट से संपदा' बनाने पर जोर देता है, जहाँ किसी भी उद्योग के अंतिम अवशेष को बेकार फेंकने के बजाय उसे एक नए और मूल्यवान संसाधन के रूप में पुनर्चक्रित किया जाता है। भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में, चीनी उद्योग चक्रीय अर्थव्यवस्था के इस विजन को घरातल पर उतारने का सबसे आदर्श और सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। गन्ने की खेती और चीनी मिलों केवल मीठे दानों के उत्पादन तक सीमित नहीं हैं, बल्कि ये जैव-विविधता, हरित ऊर्जा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गति देने वाले एक विशाल बायो-रिफाइनरी हब में तब्दील हो चुकी हैं।

गन्ने के रस से चीनी निकालने की पूरी प्रक्रिया के दौरान मुख्य रूप से तीन बड़े सह-उत्पाद प्राप्त होते हैं: बगास (गन्ने की खोई), मोलासेस (शीरा), और प्रेस मड (फिल्टर मड या मैली)। बीते दौर में इन्हें चीनी मिलों का सिरदर्द या केवल कम मूल्य का कचरा माना जाता था, लेकिन आधुनिक तकनीकों और मूल्य संवर्धन के जरिए आज इन सह-उत्पादों ने उद्योगों की पूरी रूपरेखा बदल दी है। जहाँ रेशदार बगास का उपयोग पैडों को कटने से बचाने के लिए इको-फ्रेडली कागज और

सिंगल-यूज प्लास्टिक के विकल्प के रूप में बायोडिग्रेडेबल बर्तनों को बनाने में हो रहा है, वहीं इससे पैदा होने वाली ग्रीन-एनर्जी चीनी मिलों को बिजली के मामले में आत्मनिर्भर बना रही है। दूसरी ओर, गन्ने का शीरा आज देश के 'एथेनॉल ब्लेंडिंग प्रोग्राम' की रीढ़ बन चुका है, जिससे बनने वाला जैव-ईंधन भारत के महंगे कच्चे तेल के आयात को कम करने और कार्बन उत्सर्जन घटाने में क्रांतिकारी भूमिका निभा रहा है। इसी कड़ी में, पोषक तत्वों से भरपूर प्रेस मड रासायनिक खादों के जहरीले प्रभाव को कम कर जैविक खेती के लिए अमृत साबित हो रहा है और साथ ही बायो-सीएनजी का एक बेहतरीन स्रोत बनकर उभर रहा है।

प्रस्तुत लेख चक्रीय अर्थव्यवस्था के लिए चीनी उद्योग के सह-उत्पादों का मूल्य संवर्धन को गहराई से रेखांकित करता है। यह लेख इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे चीनी उद्योग के इन अपशिष्टों का वैज्ञानिक और रणनीतिक मूल्य संवर्धन न केवल देश को पर्यावरण-अनुकूल और आत्मनिर्भर भविष्य की ओर ले जा रहा है, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर पैदा करने का भी एक मजबूत माध्यम सिद्ध हो रहा है।

### बगास / खोई

गन्ने से चीनी बनाने की प्रक्रिया के दौरान गन्ने के रस के निष्कर्षण के बाद बचा हुआ रेशदार बायोमास बगास के रूप में जाना जाता है। यह गन्ने के भार का लगभग 30-35% होता है और चीनी उद्योग का सबसे

### गन्ना प्रसंस्करण के दौरान उत्पन्न विभिन्न अपशिष्टों का प्रवाह चार्ट



चीनी उद्योग के प्रमुख सह-उत्पाद एवं उनका मूल्य संवर्धन

62

क्षेत्र के लिए एक बेहद कीमती सह-उत्पाद है। यह एक गाढ़ा, गहरे भूरे रंग का स्पष्ट जैसा पदार्थ होता है जो ऑर्गेनिक तत्वों, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम और कई सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर होता है। प्रेस मड का सबसे बड़ा और प्रभावी उपयोग जैविक खेती में खाद के रूप में

होता है। इसमें भारी मात्रा में कार्बनिक पदार्थ मौजूद होते हैं। जब इसे गन्ने के शीरे और डिस्टिलरी के अपशिष्ट जल के साथ मिलाकर बायो-कम्पोस्ट तैयार किया जाता है, तो यह एक बेहद शक्तिशाली खाद बन जाती है। यह मिट्टी की जलधारण क्षमता को बढ़ाती है, मिट्टी को हवादार बनाती है और फसलों को सभी जरूरी पोषक तत्व प्रदान करती है। प्रेस मड में जिप्सम और कैल्शियम कार्बोनेट जैसी रासायनिक खुरबियाँ पाई जाती हैं, जो मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारने में मददगार हैं। विशेष रूप से क्षारीय और लवणीय मिट्टी, जो खेती के लिए अनुपयुक्त हो चुकी होती है, उसके उपचार में प्रेस मड का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। यह मिट्टी के पीएच स्तर को संतुलित करके उसे फिर से उपजाऊ और खेती योग्य बनाता है। हरित ऊर्जा के क्षेत्र में प्रेस मड का उपयोग एक क्रांतिकारी कदम साबित हुआ है। इसके भीतर मौजूद उच्च कार्बनिक तत्वों के कारण, इसे ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सड़ाकर प्रचुर मात्रा में मीथेन गैस बनती है। इस गैस को शुद्ध करके बायो-सीएनजी बनाई जाती है, जिसका उपयोग वाहनों में ईंधन के रूप में और एलपीजी के विकल्प के तौर पर हो रहा है। गन्ने के तने पर प्राकृतिक रूप से मोम की एक पतली परत होती है, जो रस निकालने के दौरान प्रेस मड में जमा हो जाती है। आधुनिक तकनीकों की मदद से प्रेस मड से इस कच्चे मोम को निकाला जाता है। शुद्धिकरण के बाद इस गन्ने के मोम का उपयोग कॉस्मेटिक्स, जूतों की पॉलिश, वॉटरप्रूफिंग पेपर और फलों-सब्जियों को लंबे समय तक ताजा रखने के लिए उनके ऊपर कोटिंग करने में किया जाता है। कुछ मामलों में, उचित उपचार और प्रसंस्करण के बाद प्रेस मड को अन्य पोषक तत्वों के साथ मिलाकर मवेशियों के लिए पूरक आहार के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा, ग्रामीण क्षेत्रों में इसे सुखाकर या इसकी ब्रिकेट्स बनाकर भट्टियों में सीधे ईंधन के रूप में भी जलाया जाता है।

### स्पेंट वॉश

स्पेंट वॉश, जो शीरे से अल्कोहल के निर्माण के दौरान निकलने वाला एक गाढ़ा, गहरे भूरे रंग का तरल अपशिष्ट है, पारंपरिक रूप से अपने



उच्च रासायनिक ऑक्सीजन मांग और जैविक ऑक्सीजन मांग के कारण एक गंभीर पर्यावरणीय चुनौती माना जाता रहा है। हालांकि, चक्रीय अर्थव्यवस्था और आधुनिक शोध के चलते आज इसे एक मूल्यवान संसाधन के रूप में देखा जा रहा है। कृषि और ऊर्जा क्षेत्र में

इसके कई अनूठे और व्यावहारिक अनुप्रयोग हैं। कृषि क्षेत्र में इसका सबसे प्रमुख अनुप्रयोग बायो-कम्पोस्ट का निर्माण है। स्पेंट वॉश में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, और विशेष रूप से पोटेश जैसे आवश्यक पादप पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं। जब इसे चीनी मिल के एक अन्य सह-उत्पाद, प्रेसमड के साथ मिलाकर वायवीय विधि से उपचारित किया जाता है, तो एक उच्च गुणवत्ता वाली जैविक खाद तैयार होती है। यह खाद मिट्टी की जैविक सामग्री को समृद्ध करती है, उसकी जल धारण क्षमता को बढ़ाती है और रासायनिक उर्वरकों पर किसानों की निर्भरता को कम करती है। इसके अलावा, कुछ क्षेत्रों में नियंत्रित परिस्थितियों और उचित डाइल्यूशन (तनुकरण) के बाद, इसका उपयोग गन्ने जैसी फसलों में सीधे सिंचाई के लिए भी किया जाता है, जो फसल की पैदावार बढ़ाने में सहायक साबित हुआ है। ऊर्जा और औद्योगिक क्षेत्र में, आधुनिक डिस्टिलरीज ग्रीरो लिक्विड डिस्टिलर तकनीक अपना रही हैं, जिसमें स्पेंट वॉश का अनुप्रयोग पूरी तरह बदल गया है। मल्टी-इफेक्ट इवैपोरेटर्स के माध्यम से स्पेंट वॉश को गाढ़ा करके उसकी सांद्रता बढ़ाई जाती है, और इस गाढ़े तरल को बगास (खोई) के साथ मिलाकर विशेष इंसिनेरेशन बॉयलरों में ईंधन के रूप में जलाया जाता है। इससे न केवल मिलों को अपनी प्रक्रियाओं के लिए हरित भाप और बिजली प्राप्त होती है, बल्कि पर्यावरण में तरल अपशिष्ट का जाना भी शून्य हो जाता है। इस दहन प्रक्रिया के बाद जो राख बचती है, वह पोटेश का एक अत्यंत समृद्ध स्रोत होती है। इस राख को परिष्कृत करके म्यूरिएट ऑफ पोटेश उर्वरक का निर्माण किया जाता है। चूंकि भारत अपनी पोटेश आवश्यकताओं के लिए भारी मात्रा में आयात पर निर्भर है, इसलिए स्पेंट वॉश की राख से पोटेश की रिकवरी देश को आत्मनिर्भर बनाने में आर्थिक रूप से एक बड़ा कदम है। इसके अतिरिक्त, पर्यावरण-अनुकूल अवायवीय पाचन प्रक्रियाओं के माध्यम से स्पेंट वॉश से मीथेन युक्त बायोगैस भी बनाई जाती है, जिसका उपयोग ईंधन के रूप में होता है। इस प्रकार, उचित प्रबंधन के साथ स्पेंट वॉश एक हानिकारक कचरे से पर्यावरण-अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभदायक उत्पाद बन जाता है।

## चुनौतियाँ और बाधाएँ

यद्यपि चक्रीय अर्थव्यवस्था का यह मॉडल अत्यधिक लाभकारी है, लेकिन इसके पूर्ण कार्यान्वयन में कुछ चुनौतियाँ हैं:

- उच्च प्रारम्भिक पूँजी निवेश: बायो-रिफाइनरी, इथेनॉल संयंत्र और बायोगैस प्लांट स्थापित करने के लिए भारी तकनीकी और वित्तीय निवेश की आवश्यकता होती है।
- तकनीकी जटिलता: लिग्निसेल्युलोजिक बग़ास से चीनी और फिर इथेनॉल बनाना जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं पर निर्भर है, जिसके लिए कुशल जनशक्ति की आवश्यकता होती है।
- मौसमी उपलब्धता: चीनी मिलें वर्ष में केवल 5 से 6 महीने (पेराई सीजन) ही चलती हैं। इसलिए सह-उत्पादों की निरंतर आपूर्ति बनाए रखना एक चुनौती है।
- नीतिगत और बुनियादी ढांचे की सीमाएँ: इथेनॉल के भंडारण, परिवहन और छिड़ में बिजली की आपूर्ति के लिए मजबूत

बुनियादी ढांचे और सुसंगत सरकारी नीतियों की निरंतर आवश्यकता होती है।

## भविष्य की राह और निष्कर्ष

चीनी उद्योग अब केवल चीनी तक सीमित नहीं रह गया है; यह एक पूर्ण बायो-रिफाइनरी हब में बदल रहा है। चक्रीय अर्थव्यवस्था के सिद्धांतों को अपनाकर यह उद्योग न केवल अपनी वित्तीय स्थिति को मजबूत कर रहा है, बल्कि भारत के सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में भी महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। भविष्य में, अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देकर बग़ास से उन्नत मैनो-सेल्युलोज और प्रेसमड से हाइड्रोजन गैस बनाने जैसी अत्याधुनिक तकनीकों पर काम किया जाना चाहिए। सरकार को सस्टेनेबल एविएशन पथ्यूल (सतत विमान ईंधन) और हरित रसायनों के उत्पादन के लिए मिलों को वित्तीय प्रोत्साहन और सब्सिडी प्रदान करनी चाहिए। चीनी उद्योग का यह बदलाव इस बात का जीवंत प्रमाण है कि जब प्रकृति के उपहारों का चक्र पूरा होता है, तो प्रगति और पर्यावरण दोनों साथ-साथ फल-फूल सकते हैं। कचरे को संसाधन में बदलकर, यह क्षेत्र आने वाले समय में आत्मनिर्भर और स्वच्छ भारत की रीढ़ बनने की पूरी क्षमता रखता है।



## कचरे से कंचन : कैसे द्वितीयक चयापचयज कृषि अपशिष्ट को बदल रहे हैं 'कीमती सोने' में

संदीप कुमार\*, अर्चना महापात्रा\* एवं मिन् ससी\*

\*भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची

\*भाकृअनुप - केंद्रीय रोपण फसल अनुसंधान संस्थान, कासरगोड

जब हम किसी कृषि क्षेत्र को देखते हैं, तो हम मुख्य रूप से उसे प्राथमिक मैक्रोन्यूट्रिएंट्स (वृहत पोषक तत्वों) जैसे कि अनाज से कार्बोहाइड्रेट, दालों से प्रोटीन और तिलहन से वसा के स्रोत के रूप में देखते हैं। ये यौगिक हमारे मूलभूत अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं, जो पौधों द्वारा उनके प्राथमिक चयापचय मार्गों के माध्यम से संचयित किए जाते हैं।

हालांकि, पौधे कुशल रासायनिक इंजीनियर भी हैं। वे बहुत ही कम मात्रा में विशेष कार्बनिक यौगिकों की एक आश्चर्यजनक श्रृंखला का उत्पादन करते हैं, जिन्हें द्वितीयक चयापचयज कहा जाता है। जैसे की नाम से अनुमान लगता है, ये यौगिक किसी पौधे के बढ़ने या प्रजनन के लिए सख्ती से आवश्यक नहीं होते हैं, फिर भी वे जीवित रहने के लिए महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में कार्य करते हैं। ये पर्यावरणीय अंतःक्रियाओं को संतुलित करने, कीटों को दूर रखने, परागणकों को आकर्षित करने और सूक्ष्मजीवी रोगजनकों से लड़ने में मदद करते हैं।

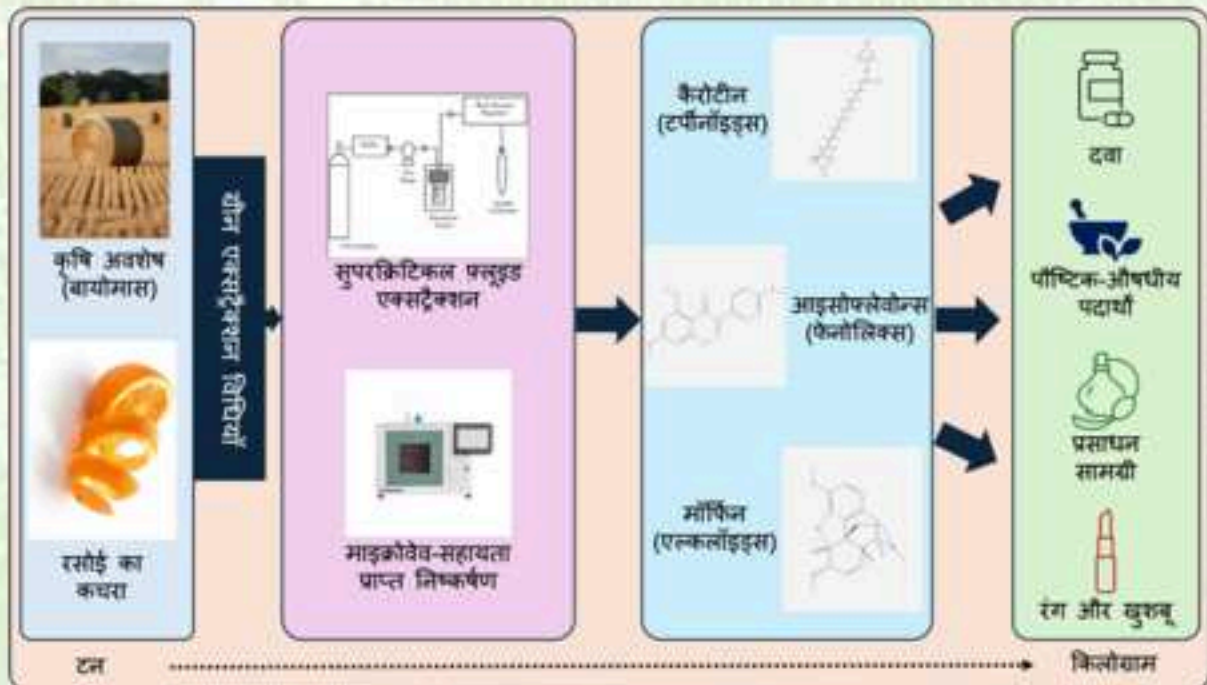
पौधों के अलावा ये द्वितीयक चयापचयज जानवरों से भी निकाले जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, लाख के कीड़े (जिसके नाम पर इस

पत्रिका का नाम रखा गया है) से एल्यूरीटिक एसिड मिलता है। इस एसिड का इस्तेमाल महंगे परफ्यूम बनाने में किया जा रहा है। इसलिए, लाख के बचे हुए हिस्से या कम क्वालिटी वाली लाख से एल्यूरीटिक एसिड निकालकर ऐसे कामों में इस्तेमाल किया जा सकता है।

उच्चतर प्रसंस्करण (प्राथमिक कृषि उपज और उसके व्यापक सह-उत्पादों में मूल्य जोड़ने की प्रक्रिया) के नजरिए से वैज्ञानिक और जैव-उद्यमी अब इन उच्च-मूल्य, कम-मात्रा वाले यौगिकों को उस कचरे से निकाल रहे हैं जिसे कभी बेकार समझकर फेंक दिया जाता था। यह दृष्टिकोण एक बड़े आर्थिक और पारिस्थितिक अवसर का प्रतिनिधित्व करता है। उच्चतर प्रसंस्करण द्वारा दवा, न्यूट्रास्युटिकल और कॉस्मेटिक उद्योगों के लिए टन के हिसाब से कृषि अवशेषों को किलोग्राम के शुद्ध, उच्च-मूल्य वाले अणुओं में बदला जाता है।

### द्वितीयक चयापचयज की पारिस्थितिक संरचना

जानवरों के विपरीत, पौधे खतरे से भाग नहीं सकते। उनकी रक्षा प्रणाली पूरी तरह से रासायनिक होती है। विकास के लाखों वर्षों के



दौरान, पौधों ने प्राथमिक चयापचय से हटकर जटिल द्वितीयक चयापचय मार्ग विकसित किए हैं। संरचनात्मक रूप से, ये यौगिक अत्यधिक विविध हैं और इनमें उनके जैव-संश्लेषण मूल के आधार पर तीन प्रमुख रासायनिक वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

**टरपेनोइड्स:** मेदलोनिक एसिड या एमईपी मार्गों के माध्यम से बनने वाले ये लिपिड-घुलनशील यौगिक सबसे बड़े वर्ग का निर्माण करते हैं। ये पुदीने के मेन्थॉल जैसे अत्यधिक वाष्पशील मोनोटरपीन से लेकर नीम के अजाडिरेक्टिन जैसे जटिल ट्राइटरपेनोइड्स तक फैले हुए हैं, जो शाकाहारी कीड़ों के खिलाफ शक्तिशाली निवारक के रूप में कार्य करते हैं।

**फेनोलिक्स और पॉलीफेनोल्स:** शिकिमिक एसिड या मैलोनिक एसिड मार्गों के माध्यम से संश्लेषित, इन अणुओं में कम से कम एक सुगंधित वलय और एक या अधिक हाइड्रॉक्सिल समूह होते हैं। इनमें फ्लेवोनोइड्स, टैनिन और लिग्निन शामिल हैं। फेनोलिक्स शक्तिशाली एंटीऑक्सिडेंट के रूप में कार्य करते हैं, जो हानिकारक पराबैंगनी विकिरण को अवशोषित करते हैं और प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों को बेअसर करते हैं।

**नाइट्रोजन-युक्त यौगिक:** मुख्य रूप से एल्कलॉइड्स और सायनोजेनिक ग्लाइकोसाइड्स द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने वाले ये यौगिक अमीनो एसिड से संश्लेषित होते हैं। एल्कलॉइड्स (जैसे कैफीन, मोर्फिन और निकोटीन) जानवरों के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर गहरा औषधीय प्रभाव डालते हैं, जिससे वे शिकार के खिलाफ रासायनिक दाल के रूप में कार्य करते हैं।

### निष्कर्षण दक्षता समीकरण

उच्चतर प्रसंस्करण में, कृषि अवशेषों से लक्षित द्वितीयक चयापचय को अलग करने की आर्थिक व्यवहार्यता द्रव्यमान उपज संबंध द्वारा संचालित होती है:

$$Y = (M_{\text{सू}} / M_{\text{रा}}) \times 100$$

जहाँ  $M_{\text{सू}}$  शुद्ध निकाले गए चयापचयज का द्रव्यमान है और  $M_{\text{रा}}$  कृषि उप-उत्पाद का प्रारंभिक शुष्क द्रव्यमान है। चूंकि  $M_{\text{सू}} \ll M_{\text{रा}}$  होता है, इसलिए ताप-संवेदनशील रासायनिक संरचनाओं को नुकसान पहुँचाए बिना अधिकतम रिकवरी के लिए उन्नत निष्कर्षण गतिकी को अनुकूलित किया जाना चाहिए।

### उच्चतर प्रसंस्करण: बायोमास को जैव-धन में बदलना

पारंपरिक प्राथमिक कृषि से भारी मात्रा में उप-उत्पाद उत्पन्न होते हैं। गेहूँ, चावल, मक्का और गन्ने की खेती में, कुल काटे गए बायोमास का 50% से अधिक हिस्सा पुआल, डंठल, भूसी और खोई का होता है। ऐतिहासिक रूप से, इन सामग्रियों को या तो खेतों में जला दिया जाता था जिससे गंभीर वायु प्रदूषण होता था या पशुओं के बिछावन के रूप में मामूली कीमत पर बेच दिया जाता था। हजारों वर्षों से इसानों ने इन अणुओं का उपयोग दवाओं, रंगों, सुगंधों और परिरक्षकों के रूप में किया है। आज एक बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है।

उच्चतर प्रसंस्करण इस बायोमास को द्वितीयक चयापचयज के एक विशाल, अनछुए भंडार के रूप में फिर से परिभाषित करती है। चूंकि ये अणु पौधों के ऊतकों के भीतर कम सांद्रता में मौजूद होते हैं (अक्सर कुल शुष्क वजन के 1% से 2% से भी कम), मुख्य उद्देश्य अत्यधिक चयापचय निष्कर्षण प्राप्त करना है। कच्चे माल की मात्रा के बजाय उच्च रासायनिक मूल्य पर आर्थिक ध्यान केंद्रित करके, उच्चतर प्रसंस्करण एक स्थायी जैव-अर्थव्यवस्था स्थापित करती है।

| कृषि उप-उत्पाद                    | लक्षित द्वितीयक चयापचयज         | प्राथमिक रासायनिक वर्ग    | व्यावसायिक एवं मानव स्वास्थ्य अनुप्रयोग                    |
|-----------------------------------|---------------------------------|---------------------------|------------------------------------------------------------|
| खट्टे फलों के छिलके (संतरा/नींबू) | लिमोनेन, हेस्पेरिडिन            | टरपेनोइड / फ्लेवोनोइड     | प्राकृतिक परिरक्षक, कैंसर रोधी उपचार, सुगंध                |
| सोयाबीन का अवशेष                  | आइसोफ्लेवोन                     | पॉलीफेनोल                 | प्राकृतिक परिरक्षक, कैंसर रोधी उपचार                       |
| सेब और बेरी का गूदा (पोमेस)       | क्वेरसिटिन, एंथोसायनिन          | पॉलीफेनोल                 | हृदय स्वास्थ्य पूरक, सूजन-रोधी कारक                        |
| धान की भूसी और पुआल               | फेरुलिक एसिड, ट्रिसिन           | फेनोलिक एसिड / फ्लेवोनोइड | स्किन-व्हाइटनिंग उत्पाद, यूवी-अवरोधक, सनस्क्रीन फॉर्मूलेशन |
| अमूर का गूदा (वाइन अपशिष्ट)       | रेसवेराट्रॉल, प्रोएंथोसायनिडिनस | स्टिलबीन / टैनिन          | एंटी-एजिंग न्यूट्रास्यूटिकल्स, हृदय सुरक्षात्मक एजेंट      |
| प्याज के छिलके                    | क्वेरसिटिन ग्लाइकोसाइड्स        | फ्लेवोनोइड                | शक्तिशाली एंटीऑक्सिडेंट सप्लीमेंट, प्राकृतिक खाद्य रंग     |

### उन्नत हरित निष्कर्षण प्रौद्योगिकियाँ

पौधों के चयापचय का पारंपरिक निष्कर्षण भारी रूप से हेक्सेन, क्लोरोफॉर्म और मेथेनॉल जैसे वाष्पशील कार्बनिक सॉल्वेंट्स पर निर्भर करता था। हालांकि ये प्रभावी हैं, लेकिन इनके गंभीर नुकसान हैं: ये मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हैं, अंतिम उत्पाद में जहरीले अवशेष छोड़ते हैं, और अत्यधिक प्रदूषणकारी अपशिष्ट उत्पन्न करते हैं, जो उच्चतर प्रसंस्करण के पारिस्थितिक मूल आधार को ही कमजोर करता है।

इन बाधाओं को दूर करने के लिए, आधुनिक प्रसंस्करण इकाइयाँ हरित निष्कर्षण प्रौद्योगिकियों का उपयोग करती हैं। ये प्रक्रियाएँ सख्त पर्यावरणीय दिशानिर्देशों का पालन करते हुए निष्कर्षण को अधिकतम करने के लिए डिज़ाइन की गई हैं:

#### सुपरक्रिटिकल फ्लूइड निष्कर्षण (एसएफई)

एसएफई मुख्य रूप से कार्बन डाइऑक्साइड (कार्बन डाइऑक्साइड) जैसी गैसों का उपयोग करता है, जिन्हें उनके महत्वपूर्ण तापमान और दबाव बिंदुओं से परे संपीड़ित किया जाता है। इस सुपरक्रिटिकल अवस्था में, कार्बन डाइऑक्साइड गैस की कम विपचिपाहट और तरल की उच्च घुलनशीलता शक्ति प्रदर्शित करता है। यह घने फसल अवशेषों में आसानी से प्रवेश कर जाता है, और कैरोटीनॉयड और आवश्यक तैलों जैसे लिपोफिलिक द्वितीयक चयापचय को चुनिंदा रूप से घोल लेता है। जब दबाव छोड़ा जाता है, तो कार्बन डाइऑक्साइड वापस गैस में बदल जाता है, जिससे पीछे पूरी तरह से विलायक-मुक्त, शुद्ध अर्क बच जाता है।

#### अल्ट्रासाउंड-असिस्टेड और माइक्रोवेव-असिस्टेड निष्कर्षण

अल्ट्रासाउंड-असिस्टेड निष्कर्षण (यूएई) माध्यम के माध्यम से उच्च आवृत्ति वाली ध्वनि तरंगों को प्रसारित करता है, जिससे सूक्ष्म-कैविटेशन बुलबुले पैदा होते हैं। जब ये बुलबुले पौधे की कोशिका दीवारों के पास तेजी से फूटते हैं, तो वे तीव्र स्थानीय कतरनी बल उत्पन्न करते हैं जो कोशिकाओं को तोड़ देते हैं, जिससे फसे हुए चयापचय तेजी से विलायक में निकल आते हैं। इसी तरह, माइक्रोवेव-असिस्टेड निष्कर्षण (एमएई) पौधों के ऊतकों के अंदर की नमी को तेजी से गर्म करने के लिए विद्युत चुम्बकीय विकिरण का उपयोग करता है। इसके परिणामस्वरूप बनने वाला स्थानीय भाप का दबाव कोशिका की दीवारों को भीतर से फोड़ देता है, जिससे गोलर फेनोलिक्स और एल्कलॉइड्स के निष्कर्षण की गति तेज हो जाती है।

#### व्यावसायिक वास्तविकताएँ और भविष्य की राह

उच्चतर प्रसंस्करण में द्वितीयक चयापचय को अलग करने का समावेशन एक अकाट्य आर्थिक अवसर प्रस्तुत करता है। प्राकृतिक,

स्वच्छ-लेबल विकल्पों के लिए उपभोक्ताओं की मांग के कारण वनस्पति अर्क, कार्यात्मक खाद्य पदार्थों और पौधों से प्राप्त फार्मास्यूटिकल्स का वैश्विक बाजार तेजी से बढ़ रहा है। एक मौजूदा अपशिष्ट धारा से मूल्यवान उत्पाद निकालने से अतिरिक्त भूमि उपयोग की आवश्यकता नहीं होती, जिससे प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में कृषि के विस्तार को रोका जा सकता है।

हालांकि, प्रयोगशाला के बेंचों से इन प्रक्रियाओं को व्यावसायिक बायोरेफाइनरियों तक ले जाना कुछ चुनौतियाँ भी पेश करता है। कृषि अपशिष्ट अत्यधिक विषम होता है; मिट्टी की स्थिति, क्षेत्रीय मौसम के पैटर्न, कटाई के समय और भंडारण के तरीकों में भिन्नता का मतलब है कि लक्षित द्वितीयक चयापचय की सादृता अलग-अलग बेंचों के बीच काफी भिन्न हो सकती है। कच्चे माल के संग्रह का मानकीकरण, सूक्ष्मजीवी खराबी को रोकने के लिए नमी से भरपूर गूदे का स्थिरीकरण, और हरित निष्कर्षण मशीनरी के लिए आवश्यक उच्च प्रारंभिक पूंजी निवेश इसके व्यापक औद्योगिक अनुप्रयोग में मुख्य बाधाएँ बने हुए हैं।

इन सीमाओं को पार करने के लिए, वर्तमान अनुसंधान बहु-उत्पाद बायोरेफाइनरियों के अनुकूलन पर केंद्रित है। इस क्रमिक उपयोग मॉडल में, कृषि अपशिष्ट की एक ही धारा को क्रमिक रूप से संसाधित किया जाता है। उदाहरण के लिए, साइट्स (खट्टे फल) के कपरे को सबसे पहले वाष्पशील आवश्यक तैलों को पुनर्प्राप्त करने के लिए सुपरक्रिटिकल फ्लूइड निष्कर्षण (एसएफई) के अधीन किया जाता है, इसके बाद एंटीऑक्सीडेंट फ्लेवोनॉइड्स को अलग करने के लिए ध्रुवीय विलायक निष्कर्षण किया जाता है, और बचे हुए सेल्युलॉसिक फर्प को अंततः बायोएथेनॉल या जैविक खाद में परिवर्तित कर दिया जाता है। यह समग्र दृष्टिकोण शून्य अपशिष्ट सुनिश्चित करता, परिचालन लागत को संतुलित करता है और निवेश पर रिटर्न को अधिकतम करता है।

#### निष्कर्ष

द्वितीयक चयापचय यह साबित करते हैं कि प्रकृति का मूल्य हमेशा भारी मात्रा में नहीं, बल्कि सटीक रासायनिक परिष्कार में पाया जाता है। कृषि अवशेषों को पर्यावरण पर बोझ मानने के बजाय जटिल बायोएक्टिव अणुओं के एक समृद्ध स्रोत के रूप में देखकर, उच्चतर प्रसंस्करण पारंपरिक खेती और उन्नत जैव प्रौद्योगिकी के बीच की खाई को पाटती है। जैसे-जैसे हरित निष्कर्षण प्रौद्योगिकियाँ परिपक्व होंगी और चक्रीय आर्थिक मॉडल मानक बनेंगे, इन कम-मात्रा, उच्च-मूल्य वाले यौगिकों की पुनर्प्राप्ति वैश्विक आर्थिक स्थिरता और मानव स्वास्थ्य दोनों को सुरक्षित करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होगी।



## जैव-परिरक्षक बैक्टीरियोसिन्स: सुरक्षित और रसायन-मुक्त भोजन

मौसम कुमार राम एवं संदीप कुमार

भाकूअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रशिक्षण संस्थान, रांची

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के 2023 में जारी किए गए डाटा के मुताबिक, खाने से होने वाली बीमारियों (एफबीडी) के हर साल लगभग 600 मिलियन मामले और 420,000 मौतें होती हैं, जिससे लगभग 110 बिलियन डॉलर का आर्थिक नुकसान होता है। यूरोपियन सेंटर फॉर डिजीज प्रिवेंशन एंड कंट्रोल (ईसीडीसी) ने 2018 में ईयू में साल्मोनेला स्पीशीज से खराब मौत और पोल्ट्री आइंटम्स की वजह से 91,857 इंसानों में संक्रमण होने की रिपोर्ट दी। इनमें से 200 से ज्यादा खाद्य जनित बीमारियाँ, बैक्टीरिया, वायरस, पैरासाइट या केमिकल्स की वजह से होते हैं, जिनका सेहत और उत्पादकता दोनों पर बुरा असर पड़ता है। दूसरे सूक्ष्मजीवी में बैक्टीरिया, मोल्ड और यीस्ट इसके मुख्य कारण हैं। ये सूक्ष्म जीव एंजाइम और चयापचय द्विउत्पाद बनाते हैं जो उनके पोषक गुणों को बदल देते हैं और उन्हें इंसानों के खाने लायक नहीं रहने देते। खाने को खराब करने वाले सबसे आम सूक्ष्म जीव में स्ट्रिप्टोमोनास, लैक्टोबैसिलस, संक्रोमाइसेस, पेनिसिलियम और क्लोस्ट्रीडियम शामिल हैं।

तेजी से बढ़ती आबादी और वैश्विक खाद्य व्यापार के बढ़ने की वजह से बड़े पैमाने पर खाद्य उत्पाद, केंद्रीकृत उत्पादन सुविधा से वितरण, और उपभोक्ता वितरण तक लंबे समय तक भंडारण करना ज़रूरी हो गया है।

इस पूरी प्रक्रिया के लिए खाद्य संरक्षण, या खाद्य पदार्थ से होने वाले वायरस को बढ़ने से रोक कर और खाद्य पदार्थ को खराब होने से बचाकर खाद्य पदार्थ के प्राकृतिक पोषण और इन्द्रियग्राही गुण को बचाकर रखना ज़रूरी है। खाद्य सुरक्षा पक्का करना और परिवहन के दौरान उत्पाद की गुणवत्ता और तय जीवनावधि बनाए रखना एक बड़ी समस्या है। इसके अलावा, खाद्य संरक्षण नवाचार का मकसद खाद्य सामग्री से होने वाली बीमारियों को रोकना और ताजगी, स्वाद और गठन बनाए रखना है। यह कम से कम प्रसंस्कृत किए गए और ताज़े जैसे खाने की बढ़ती मांग की वजह से तेजी से बढ़ा है। उष्ण प्रसंस्करण, सुखाना, लवणन, और अवशीतन पारंपरिक संरक्षण तकनीक के उदाहरण हैं जिनका इस्तेमाल अभी भी अक्सर किया जाता है। फिर भी, डिब्बाबंदी, पाश्चुरीकरण और रासायनिक परिरक्षक मिलाने जैसे आजकल के तरीकों का इस्तेमाल खाने की चीज़ों को खराब होने से बचाने और उनकी जीवनावधि बढ़ाने के लिए आसानी से किया जाता है।

ग्राहकों की बिना परिरक्षक वाले खाद्य उत्पाद की चाहत और खाद्य सुरक्षा के सख्त नियमों की वजह से, पुराने और नए, दोनों तरह के परिरक्षण तकनीक हतोत्साहित करने वाले हैं। कुछ रासायनिक



खाद्य परिरक्षक के रूप में बैक्टीरियोसिन का अनुप्रयोग

परिरक्षक प्रत्युत्पत्ता (एलजी) पैदा कर सकते हैं और नाइट्राइट को कैंसर कारक नाइट्रोसामाइन में बदल सकते हैं। इसके अलावा खाने का स्वाद, रूप-रंग, और पोषक तत्व की मौजूदगी कठोर बाह्य और रासायनिक उपचार से बदल जाती है। इन नुकसानों की वजह से प्राकृतिक जैव-संरक्षण तकनीकी में दिलचस्पी बढ़ी है। खाद्य सुरक्षा और जीवनावधि की गारंटी गैर-रोगजनक सूक्ष्मजीव और उनके चयापचय उत्पाद के रोगजनक जीवाणु के खिलाफ विरोधी क्रिया से मिलती है।

बैक्टीरियोसिन ऐसा ही एक उत्पाद है। ये छोटे सूक्ष्मजीवरोधी पेप्टाइड्स बैक्टीरिया से बनते हैं और संबंधित और असंबंधित, दोनों तरह के जीवाणुओं को लक्षित करते हैं। राइबोसोम से बनने वाले ये पेप्टाइड्स अलग-अलग तरह से कारवाई करते हैं। बैक्टीरियोसिन ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव दोनों तरह के बैक्टीरिया से बन सकते हैं, हालांकि ये मुख्य रूप से ग्राम-पॉजिटिव बैक्टीरिया से बनते हैं। ग्राम-नेगेटिव बैक्टीरिया से मिलने वाले बैक्टीरियोसिन एक सीमित एंटीबैक्टीरियल स्पेक्ट्रम दिखाते हैं, जबकि ग्राम-पॉजिटिव बैक्टीरिया से मिलने वाले बैक्टीरियोसिन की सूक्ष्मजीवरोधी क्षमता विस्तृत है, जो खाने की चीजों को खराब करने के लिए जिम्मेदार कुछ सूक्ष्मजीवों को असरदार तरीके से लक्षित करते हैं। बैक्टीरियोसिन में पाए जाने वाले खास अमीनो एसिड, तय रोगाणुओं के सतही प्रोटीन के साथ खास आणविक अनुकूलता प्रदान करते हैं। यह खास जुड़ाव बैक्टीरियोसिन को कोशिका संबंधी जरूरी कार्यों में दखल देने में मदद करती है। यह तंत्र बहुत खास है, जो रोगाणुओं के विकास को कम करता है, जबकि गैर-लक्षित बैक्टीरिया पर इसका बहुत कम असर होता है। लेक्टिक एसिड बैक्टीरिया (एलबी) जो बैक्टीरियोसिन बनाते हैं, उन्हें यूएस फूड एंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (एफडीए) ने आम तौर पर सुरक्षित (जीआरएस) श्रेणी में रखा है। इसके अलावा, लेक्टोबैसिलस, ल्यूकोनोस्टॉक, लेक्टोकोकस, पेडियोकोकस, और कुछ स्ट्रेप्टोकोकस सहित कई एलबी जेनेरा को यूरोपियन फूड सेफ्टी अथॉरिटी (ईएफएसए) से क्वालिफाइड प्रिजम्पशन ऑफ सेफ्टी (क्यूपीएस) की दर्जा दिया गया है। खाद्य उद्योग में बैक्टीरियोसिन सबसे ज्यादा पसंद किए जाने वाले प्राकृतिक परिरक्षक में से एक हैं। ज्यादातर बैक्टीरियोसिन पर विस्तृत अध्ययन किया गया है, वे गैर-विषाक्त होते हैं, और उनसे कोई बुरा असर नहीं होता। 1925 में, इसे शुरू में ग्राम-नेगेटिव बैक्टीरिया ई. कोलाई से अलग किया गया था और इसे कोलिसिन कहा गया। इन जीवाणुरोधी पेप्टाइड्स ने कोशिका भित्ति संश्लेषण और आरएनए/डीएनए की गतिविधियों को बाधित करके वैसे ही बैक्टीरिया पर बैक्टीरियोसिन का असर दिखाया। इसके बाद, ग्राम-पॉजिटिव बैक्टीरिया में बैक्टीरियोसिन की पहचान की गई और यह खाना खराब करने वाले बैक्टीरिया की एक बड़ी श्रेणी के खिलाफ असरदार साबित हुआ। ग्राम-नेगेटिव बैक्टीरिया के उलट, लेक्टिक एसिड बैक्टीरिया (एलबी) से बने बैक्टीरियोसिन को बड़े शुद्धिकरण प्रक्रिया की जरूरत नहीं थी। इसके अलावा, इन बैक्टीरिया को जोरन

के तौर पर किण्वित खाने में मिलाया जा सकता है या रसक जोरन के तौर पर खाद्य पदार्थ के सतह पर लगाया जा सकता है।

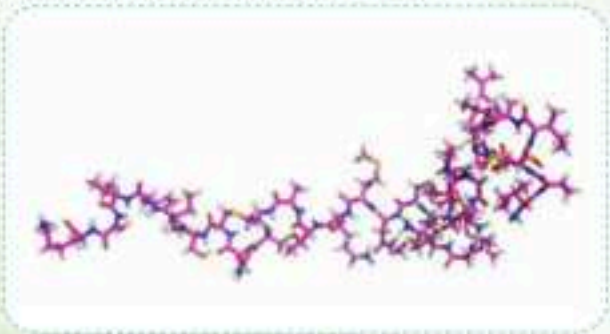
### बैक्टीरियोसिन का वर्गीकरण

बैक्टीरियोसिन को 1993 से 2024 तक उनके भौतिक गुणों, आणविक आयाम, रासायनिक विन्यास, काम करने के तरीके और उन्हें बनाने वाले जीवों के आधार पर बार-बार श्रेणीबद्ध किया गया है। 2016 में, अल्वारेज-सिएरो एवं अन्य ने जैव-संश्लेषण के तरीकों, आनुवंशिक लक्षणों और संरचनात्मक गुणों के हिसाब से बैक्टीरियोसिन को तीन कैटेगरी में बांटा। वर्ग I और II में ताप-स्थिर और छोटे पेप्टाइड होते हैं, जो 10 किलोडाल्टन से कम होते हैं, जबकि क्लास III बैक्टीरियोसिन 10 किलोडाल्टन से बड़े होते हैं और ताप-अस्थिर पेप्टाइड होते हैं। तीनों क्लास में से हर एक को तीन उपवर्ग में बांटा जा सकता है। राइबोसोम से बनने वाले ये पेप्टाइड जैविक रूप से निष्क्रिय होते हैं और इन्हें अनुवादात्तर संशोधन की जरूरत होती है। इसमें एन-टर्मिनल पर एक लीडर पेप्टाइड होता है जो सी-टर्मिनल पर एक प्री-पेप्टाइड से जुड़ा होता है। लीडर पेप्टाइड प्री-पेप्टाइड को परिपक्व होने और प्रोटीन को परिवहन करने में मदद करता है। यह कोशिका के अंदर बैक्टीरियोसिन को निष्क्रिय रूप में बनाए रखता है और इसे निकालने वाले बैक्टीरिया की सुरक्षा करता है।

वर्ग I बैक्टीरियोसिन (लैटिबायोटिक्स) बहुत ज्यादा पीएच और गर्मी झेल सकते हैं, कुछ प्रोटिएज का भी इन पर कोई असर नहीं होता, और इनका आणविक वजन 5 किलोडाल्टन से कम होता है। नाइसिन लेक्टोकोकस लेक्टिस से बनने वाला एक खास लैटिबायोटिक है। यह 34 अमीनो एसिड से बना होता है। वर्ग II बैक्टीरियोसिन का आकार 10 किलोडाल्टन से कम (37-48 अमीनो एसिड) होता है और इनमें अनुवादात्तर संशोधन नहीं होते। यह एक जलविरागी, धनायनिक और तापस्थिर पेप्टाइड है। पूरी तरह रोगाणुरोधी असर के लिए दो अलग-अलग पेप्टाइड की जरूरत हो सकती है। क्लास III बैक्टीरियोसिन का आकार 30 किलोडाल्टन से ज्यादा होता है, वे ताप-सुग्राही होते हैं, और वे अपघट्य या गैर-अपघट्य हो सकते हैं। गर्मी में इसके अस्थिर होने के कारण, इसे खाने की चीजों को बचाने के लिए असरदार तरीके से इस्तेमाल नहीं किया जाता है। इसमें किण्वक गुण होते हैं, जिसमें एक एंडोपेप्टिडेज भी शामिल है, जो जीवाणु कोशिका भित्ति पर हमला करता है और उन्हें तोड़ता है। जो बैक्टीरिया वर्ग III बैक्टीरियोसिन स्रावित करते हैं, वे अपने ही बैक्टीरियोसिन से बचाव के लिए स्व-प्रतिरक्षित प्रोटीन बनाते हैं।

2024 में, डी.ए. पुत्री एवं अन्य ने दो और वर्ग, IV और V शुरू करके पहले के वर्गीकरण को बढ़ाया। वर्ग IV बैक्टीरियोसिन कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और लिपिड से बना एक समूह है। यह ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव दोनों तरह के बैक्टीरिया पर असर डाल सकता है। कोलिसिन पेप्टाइड का आणविक वजन 30-80 किलोडाल्टन होता है, जबकि नाइसिन का आणविक वजन 1-10 किलोडाल्टन के बीच होता है।

तापमान और कठोर पीएच स्तर के अलावा, माइक्रोसिन प्रोटीएज किण्वक का सामना कर सकता है। वर्ग V बैक्टीरियोसिन का संरचना गोल होता है क्योंकि किण्वक प्रक्रिया के ज़रिए एन और सी टर्मिनी के बीच पेप्टाइड जुड़ाव बनते हैं। यह बहुत ताप स्थायी है और इसे किसी भी अनुवादोत्तर संशोधन की जरूरत नहीं है। एमाइलोसाइक्लिसिन क्लास V बैक्टीरियोसिन का एक उदाहरण है।



नाइसिन का 3डी स्टिक मॉडल

## बैक्टीरियोसिन के काम करने का तरीका

अलग-अलग बैक्टीरियोसिन काम करने के अलग-अलग तरीकों का इस्तेमाल करते हैं, जिसमें छिद्र बनाना, पेप्टिडोमलाइकन प्रोडक्शन को ब्लॉक करना, सेलुलर डीएनए को खत्म करना, 16एस आरडीएनए को काटना, ऑटोलिटिक किण्वक गतिविधि और बैक्टीरियल स्पोर्स बनाना शामिल है। नाइसिन सक्रिय सतही अणु होते हैं जो धनायनित डिटेजेंट जैसा असर दिखाते हैं। यह बैक्टीरियल कोशिका झिल्ली से जुड़ता है और वहां पाए जाने वाले लिपिड ॥ तत्व से जुड़ता है। कोशिकाद्रव्य की झिल्ली में पाए जाने वाले ऋणात्मक लिपिड नाइसिन के लिए मुख्य ग्राही का काम करते हैं। ग्राही से जुड़ने पर, छिद्रण सम्मिश्र मजबूत होता है, जिससे सल्फाइडिल ग्रुप्स का निम्नीकरण होता है। यह छिद्र बनाता है और कोशिका झिल्ली से आयन और अलग-अलग अणुओं को बाहर निकालता है, जिससे अपरिवर्तनीय हानि और कोशिकीय मृत्यु होती है।

## बैक्टीरियोसिन के उपयोग में हालिया प्रगति

नाइसिन और पेडियोसिन पीए-1 दोनों को जीआरएएस माना जाता है, फिर भी नाइसिन अकेला बैक्टीरियोसिन है जिसे एफडीए ने मंजूरी दी है। नाइसिन को फूड प्रिज़र्वेटिव (ई234) के तौर पर इस्तेमाल करने की मंजूरी मिली है। लैक्टोकोकस लैक्टिस नाइसिन ए, जेड, एफ, और क्यू बनाता है, जबकि कुछ स्ट्रेप्टोकोकस स्ट्रेन नाइसिन यू, यू2, पी, और एच बनाते हैं। निसाप्लिन एक व्यावसायिक रूप से उपलब्ध बैक्टीरियोसिन है, जो नाइसिन ए, सोडियम क्लोराइड, बसा रहित सूखा दूध और दूसरे घटक से बना होता है। यह बाघा तकनीक का इस्तेमाल करता है, खास तौर पर खाने से होने वाले रोगजनकों को बढ़ने से रोकने के लिए अन्य बाघा के साथ नाइसिन का इस्तेमाल करता है। बैक्टीरियोसिन को खाने के वस्तुओं में तीन मुख्य तरीकों से

मिलाया जा सकता है: विशुद्ध या अर्ध-शुद्ध बैक्टीरियोसिन को परिरक्षक के तौर पर शामिल करना, जिसमें एक ऐसा सामग्री शामिल हो जिसे बैक्टीरियोसिन बनाने वाले जोरन के साथ किण्वित किया गया हो, और खाने में सीधे बैक्टीरियोसिन बनाने वाला स्ट्रेन मिलाना। विशुद्ध बैक्टीरियोसिन के इस्तेमाल को एक योज्य के तौर पर वर्गीकृत किया जाता है और इसके लिए नियामक अनुमोदन की जरूरत होती है, जो खाद्य उपयोग और स्वच्छ, योज्य मुक्त उत्पाद चाहने वाले उपभोक्ता, दोनों को पसंद नहीं आता। इसके अलावा, नियामक अनुमोदन लेना कठिन एवं महंगा है, जो इसे बड़े पैमाने पर अपनाने में रुकावट डालता है। इसके उलट, किण्वित घटक या जोरन का इस्तेमाल करने से आमतौर पर परिरक्षक के तौर पर वर्गीकरण और नियामक अनुमोदन की जरूरत से बचा जा सकता है। बैक्टोफॉर्म एफ-एलसी एक जैव-सुरक्षात्मक संवर्धक है जो बाज़ार में खरीदने के लिए उपलब्ध है। इसमें एल. कर्वेटस और पी. एसिडिलैक्टोसी होते हैं, जो क्रमशः सैकासिन ए और पेडियोसिन बनाते हैं। इसका इस्तेमाल क्योर्ड सॉसेज में किया जाता है। होल्डबैक एक विशेष सुरक्षात्मक संवर्धक है जो अलग-अलग बैक्टीरिया के संयोजन से बना है और पोल्ट्री, मीट, डेयरी उत्पादों और सीफूड को सुरक्षित रखने के लिए बनाया गया है।

नाइसिन, पेडियोसिन पीए-1, और माइक्रोसिन क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम, स्टैफिलोकोकस ऑरियस, और लिस्टेरिया मोनोसाइटोजेन्स की वृद्धि को प्रभावी रूप से रोकते हैं। एल. मोनोसाइटोजेन्स हठी होते हैं और कम तापमान और ज्यादा लवण सांद्रता को झेल सकते हैं। यह बुजुर्गों, गर्भवती महिलाओं, बच्चों और कमज़ोर प्रतिरक्षा तंत्र वाले लोगों के लिए एक बड़ा खतरा है। बैक्टीरियोसिन का इस्तेमाल मुख्य रूप से दूध, चीज़, दही जैसे डेयरी उत्पादों और मीट, सब्जियों, फलों, सीफूड और सूप जैसे परिरक्षित आहार में किया जाता है। वे क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम, बेसिलस सबटिलिस, और बेसिलस सेरेस जैसे गर्मी झेलने वाले और स्पोर पैदा करने वाले बैक्टीरिया की वृद्धि को रोकते हैं। फलों के जूस में बैक्टीरियोसिन मिलाने से साल्मोनेला टाइफीम्यूरियम और ई. कोलाई की वृद्धि या तो रुक जाती है या कम हो जाती है। नाइसिन, दूध और अलग-अलग तरह के चीज़ (कॉटेज चीज़, चेडर और रिकोटा) में एल. मोनोसाइटोजेन्स की वृद्धि को रोकने में असरदार साबित हुआ है। पेडियोसिन, वाणिज्यिक माइक्रोग्रेड और अल्टा 2341 के रूप में मिलता है। इसने एल. मोनोसाइटोजेन्स और एस. ऑरियस के खिलाफ निसिन से ज्यादा असर दिखाया है। बैक्टीरियोसिन बिना स्वाद, बिना खुशबू और पारदर्शी होते हैं, जो खाने की चीज़ों की प्राकृतिक गुणवत्ता बनाए रखते हैं। बैक्टीरियोसिन के इस्तेमाल से ज्यादा प्रसंस्करण की जरूरत नहीं होती और पोषकता और गुणवत्ता बनाए रखने में मदद मिलती है।

व्यवसायिक रूप से उपलब्ध बैक्टीरियोसिन्स और उनके द्वारा लक्षित सूक्ष्मजीव।

| बैक्टीरियोसिन | व्यावसायिक नाम     | लक्षित सूक्ष्मजीव                                    |
|---------------|--------------------|------------------------------------------------------|
| निसिन         | डेनिसको            | ई. कोलाई, साल्मोनेला, लिस्टीरिया                     |
| निसिन         | क्रिसिन            | क्लोस्ट्रिडियम बोटुलिनुम, लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स  |
| निसिन ए       | निसाप्लिन          | बैसिलस एसपी., क्लोस्ट्रिडियम एसपी., लिस्टीरिया एसपी. |
| निसिन जेड     | निसिन जेड          | क्लोस्ट्रिडियम एसपीपी., बैसिलस सीरियस                |
| पेडियोसिन     | एलटीए 2351-2341    | लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स                            |
| पेडियोसिन     | माइक्रोक्रैड       | लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स                            |
| पेडियोसिन     | फार्गो 23          | लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स                            |
| पेडियोसिन     | बैक्टोफर्म पी-एलसी | लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स                            |
| माइक्रोसिन    | माइक्रोसिन         | लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स                            |
| मेटमाइसिन     | मेटामेक्स          | यीस्ट, मोल्ड्स                                       |

### खाद्य उद्योग में बैक्टीरियोसिन के प्रमुख लाभ

- लक्षित प्रभाव: यह केवल हानिकारक रोगाणुओं (जैसे लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेन्स) को नष्ट करता है, जबकि फायदेमंद बैक्टीरिया पर इसका असर न्यूनतम होता है।
- पाचन अनुकूलता: इंसानी पाचन तंत्र के प्रोटीएज किण्वक इसे आसानी से विघटित कर देते हैं, जिससे शरीर पर कोई संचयी दुष्प्रभाव नहीं होता।
- संवेदी तटस्थता: यह भोजन के प्राकृतिक स्वाद, सुगंध और बनावट को बदले बिना उसकी भंडारण अवधि बढ़ाता है।

### निष्कर्ष

बैक्टीरियोसिन खाने को संरक्षित करने का एक सतत और नया तरीका है। कुछ बैक्टीरियोसिन, जैसे निसिन और पेडियोसिन पीए-1, इंसानों के खाने के लिए सुरक्षित हैं। इसे स्तनधारी पाचन तंत्र आसानी से तोड़

सकता है। ऐसा पाया गया है कि नाइसिन वाला तरल पीने के 10 मिनट बाद इंसानी लार में इसका पता नहीं चलता। यह एक प्राकृतिक एवं सुरक्षित पेप्टाइड है, कृत्रिम खाद्य परिरक्षक नहीं। विपणन अनुसंधान कंपनी मोडोर इंटेलिजेंस के मुताबिक, नाइसिन का बाजार 2025 में यूएसडी 551.48 मिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँचने का अनुमान लगाया गया था और 2030 तक इसके यूएसडी 707.12 मिलियन अमेरिकी डॉलर तक बढ़ने की उम्मीद है। अभी, एशिया पैसिफिक बैक्टीरियोसिन का सबसे तेजी से बढ़ने वाला बाजार है। खाद्य संरक्षण के अलावा, बैक्टीरियोसिन दवा, सौंदर्य प्रसाधन और जानवरों के चारे जैसी कई उद्योगों में भी उम्मीद जगाता है। बैक्टीरियोसिन बनाना और उन्हें शुद्ध करना एक महंगी प्रक्रिया है। बैक्टीरियोसिन का माँके पर उत्पादन और पोषण संबंधी कम आवश्यकता वाले पोषी जीवाणु में इसका बाहरी अभिव्यक्ति, उत्पादन के खर्च को कम कर सकता है और प्राकृतिक खाद्य परिरक्षक के लिए नए माँके बना सकता है।



## एक कप चाय की बदलती पहचान : स्वाद, स्वास्थ्य और विज्ञान की अनूठी कहानी

नेहा<sup>1</sup>, अनुपमा शर्मा<sup>2</sup>, ऋतिका<sup>3</sup>, भाविनी शर्मा<sup>4</sup>, नंदकिशोर ठोंबरे<sup>5</sup> एवं सीरव कुमार<sup>6</sup>

<sup>1</sup>सीएसआईआर - केंद्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चंडीगढ़

<sup>2</sup>भाकूअनुप - राष्ट्रीय कृषि उत्तम प्रदर्शन संस्थान, राँची

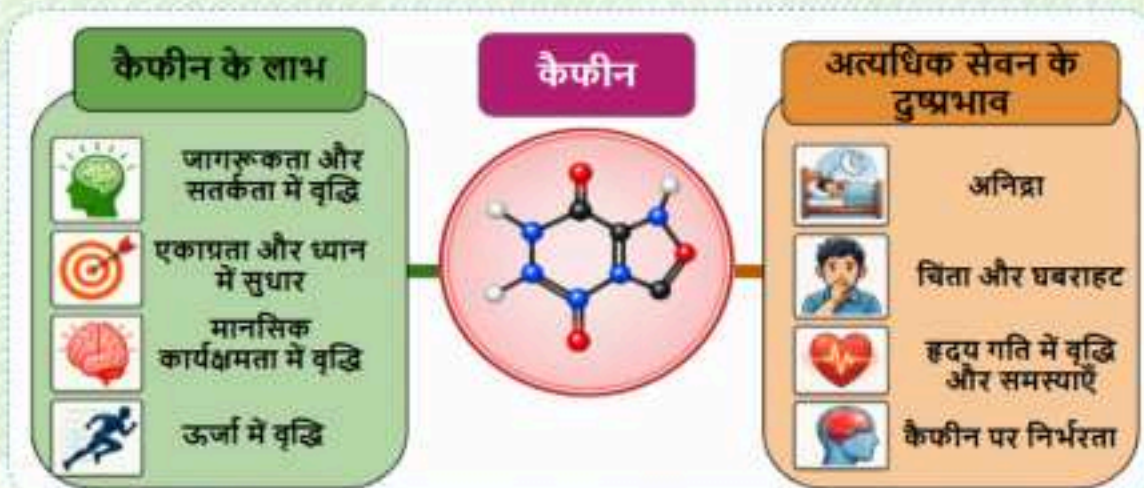
सुबह की ताज़गी भरी पहली चाय की चुस्की से लेकर व्यस्त दिनचर्या के बीच, चाय और कॉफी करोड़ों लोगों के जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुकी हैं। चाय, कॉफी जैसे अन्य पेय पदार्थ में स्वाभाविक रूप से पाया जाने वाला कैफीन विश्व के सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले मनो-सक्रिय पदार्थ में से एक है। यह केंद्रीय तंत्रिका तंत्र को प्रोत्साहित कर जागरूकता, एकाग्रता तथा मानसिक कार्यक्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सीमित मात्रा में इसका सेवन ऊर्जा और सतर्कता प्रदान करता है, जिसके कारण यह दैनिक जीवन का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया है। हालाँकि, कैफीन पर बढ़ती वैश्विक निर्भरता इसके संभावित दुष्प्रभावों को लेकर चिंताओं को भी बढ़ा रही है। अत्यधिक मात्रा में कैफीन का सेवन अनिद्रा, चिंता, घबराहट, जठरांत्रीय विकार, हृदय की अनियमित धड़कन (अतालता), तेज हृदयगति तथा ऐंठन जैसी समस्याओं का कारण बन सकता है। गंभीर परिस्थितियों में यह कोमा अथवा मृत्यु तक का कारण बन सकता है। इस प्रकार कैफीन एक ओर जहाँ ऊर्जा और मानसिक सतर्कता प्रदान करता है, वहीं दूसरी ओर स्वास्थ्य संबंधी जोखिम भी उत्पन्न कर सकता है। इन्हीं लाभों और जोखिमों के बीच संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता ने उपभोक्ताओं के बीच विकैफीनीकृत पेय पदार्थों की मांग को निरंतर बढ़ावा दिया है। उपभोक्ता ऐसे विकल्प चाहते हैं जिनमें चाय और कॉफी का प्राकृतिक स्वाद, सुगंध एवं गुणवत्ता बनी रहे, लेकिन कैफीन की मात्रा बहुत कम या शून्य के बराबर हो।

### विकैफीनीकरण

विकैफीनीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कॉफी के बीजों, चाय की पत्तियों तथा अन्य कैफीनयुक्त पदार्थों से अधिकांश कैफीन को हटाया जाता है, जबकि उनके स्वाद, सुगंध और पोषण संबंधी गुणों को यथासंभव सुरक्षित रखने का प्रयास किया जाता है। विकैफीनयुक्त उत्पादों में कैफीन की मात्रा पूरी तरह शून्य नहीं होती, बल्कि उसकी मात्रा सामान्य उत्पादों की तुलना में अत्यंत कम रह जाती है। उदाहरण के लिए, जहाँ एक सामान्य कप कॉफी में लगभग 80-120 मिलीग्राम कैफीन हो सकता है, वहीं एक कप कैफीन-रहित कॉफी में प्रायः 2-7 मिलीग्राम कैफीन ही शेष रहता है।

### विकैफीनीकरण की विधियाँ

विकैफीनीकरण सामान्यतः तीन प्रमुख विधियों द्वारा किया जाता है जैसे जल विकैफीनीकरण, विलायक विकैफीनीकरण तथा कार्बन डाइऑक्साइड विकैफीनीकरण। विलायक विकैफीनीकरण को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष विलायक विधियों के माध्यम से संपन्न किया जा सकता है। यद्यपि कैफीन निष्कर्षण के लिए इन पारंपरिक तकनीकों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, फिर भी स्वाद एवं सुगंध की हानि, रासायनिक अवशेषों की संभावना तथा प्रक्रिया की जटिलता जैसी कुछ सीमाएँ विद्यमान हैं। इन चुनौतियों को दूर करने के लिए हाल के वर्षों में कई नवीन विकैफीनीकरण तकनीकों का विकास किया गया है, जिनमें मिड-इनफ़ारेड जेनरेटिंग एटमाइजर (मिर्गा) प्रौद्योगिकी एक महत्वपूर्ण



कैफीन के लाभ एवं अत्यधिक सेवन के दुष्प्रभाव

उदाहरण है। यह एक अ-तापीय तकनीक है, जिसमें माइक्रोवेव ऊर्जा का उपयोग करके कैफीन अणुओं को सक्रिय किया जाता है तथा नियंत्रित दाब के अंतर्गत उनका वाष्पीकरण किया जाता है। इस प्रक्रिया से कैफीन को प्रभावी रूप से हटाया जा सकता है, जबकि पेय

के महत्वपूर्ण स्वाद एवं सुगंधीय यौगिक काफी हद तक संरक्षित रहते हैं। साथ ही, यह तकनीक तापीय अपघटन को न्यूनतम करते हुए विकैफीनीकरण प्रक्रिया पर बेहतर नियंत्रण प्रदान करती है।

#### विकैफीनीकरण तकनीकों का समग्र अवलोकन

| विधि                                      | समय अवधि            | विलायक                                                            | लाभ                                                 | हानि                                             | सुधार की संभावनाएँ                                                             |
|-------------------------------------------|---------------------|-------------------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------|--------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------------------|
| रोसेलियस विधि                             | 1903                | बेंजीन                                                            | विकैफीनीकरण की प्रारंभिक एवं अग्रणी विधि            | विषैला विलायक; कुल पॉलीफेनॉल का कम संरक्षण       | सुरक्षित एवं पर्यावरण-अनुकूल विलायकों का उपयोग                                 |
| प्राकृतिक विलायक विधि (इथाइल एसीटेट)      | 1950 दशक-वर्तमान    | इथाइल एसीटेट (प्राकृतिक)                                          | सौम्य प्रक्रिया की तुलना में बेहतर स्वाद संरक्षण    | पूर्णतः चयनात्मक नहीं; विलायक अवशेषों की संभावना | प्राकृतिक स्रोतों का बेहतर उपयोग एवं चयनात्मकता में वृद्धि                     |
| स्विस् जल प्रक्रिया                       | 1980 के दशक-वर्तमान | गर्म पानी + सक्रिय कार्बन                                         | रसायन-मुक्त, कुल पॉलीफेनॉल सामग्री का अच्छा संरक्षण | ऊर्जा-गहन, अपेक्षाकृत धीमी प्रक्रिया             | निस्पंदन दक्षता में सुधार                                                      |
| अतिक्रांतिक कार्बन डाइऑक्साइड + सह-विलायक | 1990 के दशक-वर्तमान | कार्बन डाइऑक्साइड + इथेनॉल, इथाइल एसीटेट                          | अधिक निष्कासन दक्षता                                | विलायक अवशेषों का हल्का जोखिम                    | खाद्य-ग्रेड सह-विलायकों का उपयोग एवं पुनर्प्राप्ति का अनुकूलन                  |
| एंजाइमेटिक विकैफीनीकरण                    | 2000 के दशक-वर्तमान | डिमेथाइलेज एंजाइम                                                 | उच्च विशिष्टता, सौम्य परिचालन परिस्थितियाँ          | महंगी प्रक्रिया, कम स्थिरता                      | एंजाइम स्थिरीकरण तथा जैव-प्रौद्योगिकी आधारित स्केल-अप                          |
| सूक्ष्मजीवी / खमीर आधारित विधि            | 2000 के दशक-वर्तमान | आनुवंशिक रूप से अभिकल्पित सूक्ष्मजीव                              | पर्यावरण-अनुकूल                                     | धीमी प्रक्रिया, संदूषण का जोखिम                  | बायोरिएक्टर नियंत्रण में सुधार एवं अधिक तेज सूक्ष्मजीवी स्ट्रेनों का विकास     |
| सक्रिय कार्बन अधिशोषण                     | 1990 के दशक-वर्तमान | सक्रिय कार्बन                                                     | पुनः उपयोग योग्य, कम लागत                           | चयनात्मकता कम                                    | बेहतर चयनात्मकता हेतु सतह संशोधन                                               |
| प्रकाश-उत्प्रेरक विधि                     | 2020 का दशक         | टाइटैनियम डाइऑक्साइड, जिंक डाइऑक्साइड, कोपर-ज़िंकोनियम डाइऑक्साइड | दृश्य प्रकाश में सक्रिय, रोगाणुरोधी गुण             | प्रकाश एवं ऊर्जा की आवश्यकता                     | सौर-ऊर्जा आधारित प्रणालियों का विकास तथा चयनात्मकता में सुधार                  |
| शीलक-आधारित स्क्वेंजर/फिल्टर विधि         | 2026                | 95% एथेनॉल                                                        | प्राकृतिक भाव                                       | शीलक की सांद्रता एवं संपर्क क्षेत्र पर निर्भर    | फिल्टर विकसित करना; औद्योगिक स्तर पर स्केल-अप; विभिन्न पेय पदार्थों पर परीक्षण |



शैलेक लेपन विलयन की तैयारी की धरणबद्ध प्रक्रिया

विकैफीनीकरण तकनीकों का विकास 1903 से लेकर वर्तमान तक पारंपरिक विलायक-आधारित विधियों से अधिक सुरक्षित, टिकाऊ और चयनात्मक तकनीकों की ओर हुआ है। आधुनिक विधियों का मुख्य उद्देश्य केवल कैफीन को हटाना नहीं, बल्कि चाय या कॉफी के स्वाद, सुगंध तथा जैव-सक्रिय यौगिकों को संरक्षित रखते हुए पर्यावरणीय प्रभाव को कम करना भी है। इसी दिशा में विकसित नवीन तकनीकें और प्राकृतिक पदार्थ-आधारित प्रणालियाँ कई लाभ प्रदान करती हैं, जैसे कम ऊर्जा की आवश्यकता, न्यूनतम रासायनिक अवशेष, पर्यावरण-अनुकूलता तथा बेहतर गुणवत्ता संरक्षण। इसी संदर्भ में शैलेक-आधारित स्क्वेजर सामग्री का निर्माण एक सरल, किफायती तथा पर्यावरण-अनुकूल कोटिंग तकनीक के रूप में उभरकर सामने आया है। यह विधि कम प्रसंस्करण चरणों, कम ऊर्जा खपत, प्राकृतिक एवं जैव-अपघटनीय सामग्री के उपयोग तथा जटिल उपकरणों की आवश्यकता के अभाव के कारण पारंपरिक तकनीकों की तुलना में अधिक लाभकारी है। साथ ही, इसकी बहुउपयोगिता विभिन्न आधार पदार्थों पर प्रभावी अनुप्रयोग की अनुमति देती है, जिससे सक्रिय पैकेजिंग एवं स्क्वेजर प्रणालियों के विकास में इसकी उपयोगिता बढ़ जाती है। इस प्रकार, यह तकनीक गुणवत्ता संरक्षण, पर्यावरणीय स्थिरता तथा आर्थिक व्यवहार्यता के बीच संतुलन स्थापित करते हुए भविष्य की उन्नत एवं टिकाऊ विकैफीनीकरण तथा खाद्य-पैकेजिंग प्रणालियों के लिए एक आशाजनक विकल्प प्रस्तुत करती है।

## उपभोक्ता मांग का परिदृश्य

जैसे-जैसे उपभोक्ताओं की प्राथमिकताएँ केवल उत्तेजना प्राप्त करने वाले पेय पदार्थों से स्वास्थ्य-केंद्रित पेय विकल्पों की ओर बढ़ रही हैं, वैसे-वैसे विकैफीनीकृत उत्पाद वैश्विक बाजार में तेजी से बढ़ते हुए एक महत्वपूर्ण खंड के रूप में उभर रहे हैं। इस बढ़ती मांग के पीछे स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता, बदलती जीवनशैली तथा अत्यधिक कैफीन सेवन के दुष्प्रभावों जैसे नींद में बाधा, चिंता और हृदय संबंधी समस्याओं के प्रति बढ़ती समझ प्रमुख कारण हैं। हालांकि, कम मात्रा

में कैफीन नींद की कमी की स्थिति में मनोदशा तथा संज्ञानात्मक प्रदर्शन में सुधार कर सकता है।

इसके अतिरिक्त, कैफीन के कई चिकित्सीय उपयोग भी हैं। यह नवजात शिशुओं में बसने संबंधी समस्याओं के उपचार हेतु प्रयुक्त कैफीन साइट्रेट के रूप में विश्व स्वास्थ्य संगठन की आवश्यक औषधियों की सूची में शामिल है। कैफीन में हल्का ब्रोकोडायलेटर प्रभाव भी पाया जाता है, जिससे यह अस्थमा के उपचार में सहायक हो सकता है। साथ ही, इसे अक्सर इबुप्रोफेन या पैरासिटामोल जैसी गैर-स्टेरायडल सूजनरोधी दवाएँ के साथ मिलाकर दर्द निवारण की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है।

कैफीन की यह द्वैध प्रकृति दर्शाती है कि यह लाभकारी भी हो सकता है और हानिकारक भी। यही तथ्य विकैफीनीकरण की बढ़ती आवश्यकता को रेखांकित करता है। विकैफीनीकरण के माध्यम से अधिक सुरक्षित, कम-कैफीन वाले पेय तैयार किए जा सकते हैं। साथ ही, इससे प्राप्त कैफीन को चिकित्सा और उपचारात्मक अनुप्रयोगों में उपयोग के लिए पृथक किया जा सकता है, जिससे इसका औद्योगिक महत्व भी बढ़ जाता है। विकैफीनीकरण प्रक्रिया से प्राप्त कैफीन उच्च शुद्धता का होता है और इसे सीधे औषधीय निर्माणों में सम्मिलित किया जा सकता है। इन उत्पादों में यह सक्रिय घटक अथवा सहायक पदार्थ के रूप में विभिन्न चिकित्सीय उद्देश्यों की पूर्ति करता है।

विकैफीनीकृत कॉफी में प्रतिऑक्सीकारक, क्लोरोजेनिक अम्ल तथा पॉलीफेनॉल जैसे महत्वपूर्ण जैव-सक्रिय यौगिक सुरक्षित रहते हैं। ये यौगिक सूजन को कम करने, हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने तथा चयापचय को समर्थन देने जैसे लाभों से जुड़े हैं। इसी कारण विकैफीनीकृत पेय को अब कार्यात्मक पेय के रूप में भी प्रचारित किया जा रहा है, जो स्वास्थ्य को समर्थन देने के साथ-साथ अपने लाभकारी गुणों को बनाए रखते हैं।



वैश्विक विकैफीनीकृत पेय पदार्थ व्यापार का अनुमानित विकास तथा प्रमुख वृद्धि कारक

उपभोक्ताओं के दीर्घकालिक स्वास्थ्य लाभों के प्रति अधिक सजग होने के साथ-साथ विकैफीनीकृत उत्पादों का वैश्विक बाजार भी निरंतर विस्तार कर रहा है। वर्ष 2023 में कैफीन-मुक्त उत्पादों का वैश्विक बाजार मूल्य लगभग 3.76 अरब अमेरिकी डॉलर था, जिसके वर्ष 2032 तक बढ़कर लगभग 6.90 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँचने का अनुमान है। यह अवधि लगभग 7.07% की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर को दर्शाती है। यह वृद्धि स्वस्थ पेय विकल्पों के प्रति उपभोक्ताओं की मजबूत मांग को इंगित करती है, विशेष रूप से कॉफी और चाय उद्योग में, जहाँ कम-कैफीन वाले विकल्पों की लोकप्रियता लगातार बढ़ रही है।

### विकैफीनीकरण: उपयोग और महत्व

विकैफीनीकृत उत्पादों ने विभिन्न उद्योगों का ध्यान आकर्षित किया है क्योंकि इनमें कैफीन की मात्रा कम होती है और दैनिक जीवन में इनके अलग-अलग उपयोग हैं। पेय पदार्थ के रूप में, बहुत से लोग विकैफीनीकृत चाय और कॉफी का आनंद लेना पसंद करते हैं। वे कैफीन के उत्तेजक प्रभावों के बिना भी इसके प्राकृतिक स्वाद और सुगंध का पूरा आनंद ले पाते हैं। अपने उच्च प्रतिऑक्सीकारक गुणों के कारण कैफीन-रहित कॉफी खाद्य उत्पादों में एक प्राकृतिक परिरक्षक के रूप में भी काम करती है। त्वचा देखभाल उद्योग अपने उत्पादों में कैफीन-रहित ग्रीन टी और कॉफी के अर्क को उनके प्रतिऑक्सीकारक और उम्र-रोधी (उम्र बढ़ने के प्रभाव को रोकने वाले) गुणों के लिए प्राथमिकता देता है, क्योंकि ये महीन रेखाओं और झुर्रियों को कम करने तथा स्वस्थ त्वचा को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं। पोष्टिक-

औषध उद्योग भी कैफीन-रहित उत्पादों को कार्यात्मक खाद्य सामग्री के रूप में देखता है जो स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकते हैं। कैफीन-रहित कॉफी क्लोरोजेनिक एसिड से भरपूर होती है और इसने कई चयापचय कारकों पर सकारात्मक प्रभाव दिखाया है, क्योंकि यह खाली पेट रक्त शर्करा के स्तर (फास्टिंग ब्लड ग्लूकोज), कमर की परिधि और ट्राइग्लिसराइड्स को काफी कम करती है। ये कमियाँ दर्शाती हैं कि कैफीन-रहित कॉफी मोटापा, उच्च रक्तचाप और इंसुलिन प्रतिरोध से जुड़े जोखिम कारकों को कम करने में मदद कर सकती है।

विकैफीनीकरण का महत्व इस बात में निहित है कि यह कॉफी की रासायनिक संरचना को किस प्रकार प्रभावित करता है। विकैफीनीकरण कैफीन को हटा देती है, पर यह प्रक्रिया क्लोरोजेनिक एसिड, कैफिक एसिड और ट्राइगोनेलिन सहित अन्य जीवसक्रिय यौगिकों को सुरक्षित रखती है, क्योंकि इन यौगिकों में प्रतिऑक्सीकारक और सूजनरोधी गुण होते हैं जो इसके स्वास्थ्य लाभों में योगदान कर सकते हैं।

विकैफीनीकरण की वजह से कैफीन के प्रति संवेदनशील लोग भी इसके दुष्प्रभावों की चिंता किए बिना कॉफी का आनंद ले सकते हैं। कॉफी पीना अवसाद और चिंता के जोखिम को कम कर सकता है, जिसमें कैफीन-युक्त और कैफीन-रहित कॉफी दोनों ही लक्षणों को कम करती हैं। कॉफी को बेहतर संज्ञानात्मक कार्य से जोड़ा गया है, लेकिन 60 वर्ष से अधिक उम्र के वयस्कों में यह प्रभाव विकैफीनीकृत कॉफी के साथ मजबूती से जुड़ा नहीं देखा गया है, जो मस्तिष्क स्वास्थ्य पर विकैफीनीकरण के प्रभाव को समझने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता का संकेत देता है।



विकैफीनीकृत उत्पादों के प्रमुख उपयोग एवं स्वास्थ्य संबंधी लाभ

## निष्कर्ष

विकैफीनीकरण आधुनिक खाद्य एवं पेय उद्योग की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया बन चुकी है, जो उपभोक्ताओं को कैफीन के दुष्प्रभावों से बचाते हुए चाय और कॉफी के स्वाद, सुगंध तथा लाभकारी जीव-सक्रिय यौगिकों का आनंद लेने का अवसर प्रदान करती है। समय के साथ विकैफीनीकरण तकनीकों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, जिससे अधिक सुरक्षित, पर्यावरण-अनुकूल और चयनात्मक विधियों का विकास संभव

हुआ है। बढ़ती स्वास्थ्य जागरूकता, बदलती जीवनशैली तथा कैफीन-मुक्त उत्पादों की बढ़ती मांग ने इस क्षेत्र के महत्व को और बढ़ाया है। इसके अतिरिक्त, विकैफीनीकरण से प्राप्त कैफीन की औषधीय एवं औद्योगिक उपयोग इसकी उपयोगिता को और विस्तृत करती है। भविष्य में जीव-आधारित, ऊर्जा-कुशल एवं गुणवत्ता-संरक्षण करने वाली तकनीकों के विकास के साथ विकैफीनीकरण उद्योग के और अधिक विस्तार तथा नवाचार की संभावनाएँ हैं।



## मशीन विज्ञान आधारित खाद्य गुणवत्ता एवं सुरक्षा के मूल्यांकन

राजवर्धन पाटील, देवबंदा महापात्र, सखाराम काले एवं परमानंद साहू

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, नामकुम, रांची

आधुनिक समय में उपभोक्ताओं की जागरूकता बढ़ने के साथ-साथ खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा की माँग भी तेजी से बढ़ी है। आज के उपभोक्ता केवल भोजन की उपलब्धता से संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि वे सुरक्षित, पोषणयुक्त, आकर्षक और उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य उत्पादों की अपेक्षा करते हैं। कृषि एवं खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता उपभोक्ता स्वास्थ्य, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, आर्थिक विकास और खाद्य सुरक्षा से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है। इसी कारण से खाद्य सुरक्षा हेतु सख्त कानून बनाए गए हैं तथा खाद्य उत्पादों की अनिवार्य जाँच एवं प्रमाणीकरण पर विशेष बल दिया जा रहा है।

वर्तमान खाद्य उद्योग का मुख्य लक्ष्य ऐसे सुरक्षित उत्पाद विकसित करना है जो बाजार की गुणवत्ता आवश्यकताओं को पूरा कर सके। इसके लिए तेज, सटीक और भरोसेमंद तकनीकों की आवश्यकता होती है। परंपरागत खाद्य परीक्षण विधियाँ प्रायः समय लेने वाली, श्रमसाध्य और विनाशकारी होती हैं, जिनमें नमूने को नष्ट करना पड़ता है। इससे न केवल अपशिष्ट बढ़ता है, बल्कि उत्पादन प्रक्रिया भी धीमी हो जाती है।

इस समस्या के समाधान के रूप में गैर-विनाशकारी, तेज और स्वचालित तकनीकों का विकास हुआ है, जिनमें मशीन विज्ञान आधारित प्रणालियाँ प्रमुख हैं। मशीन विज्ञान तकनीकें कैमरा, सेंसर, प्रकाश स्रोत और कंप्यूटर एल्गोरिथ्म का उपयोग करके खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता और सुरक्षा का मूल्यांकन करती हैं। ये तकनीकें मानव आँख की सीमाओं को पार कर अधिक सटीक और वस्तुनिष्ठ परिणाम प्रदान करती हैं।

### खाद्य गुणवत्ता एवं सुरक्षा की अवधारणा

खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा उपभोक्ता संतुष्टि के प्रमुख निर्धारक हैं। खाद्य गुणवत्ता को बाहरी और आंतरिक दोनों प्रकार के गुणों से परिभाषित किया जा सकता है। बाहरी गुणों में रंग, आकार, आकृति, सतह की बनावट, चमक और दृश्य आकर्षण शामिल हैं, जबकि आंतरिक गुणों में स्वाद, सुगंध, पोषण मूल्य, नमी, शर्करा, प्रोटीन और वसा की मात्रा एवं अन्य जैव सक्रिय यौगिक शामिल हैं।

"गुणवत्ता" शब्द की परिभाषा अत्यंत व्यापक है और यह उपभोक्ता की पसंद, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और बाजार की माँग के अनुसार भिन्न हो सकती है। वास्तव में, खाद्य गुणवत्ता केवल उत्पाद की विशेषताओं तक सीमित नहीं है, बल्कि उन प्रक्रियाओं, तकनीकों और प्रबंधन प्रणालियों से भी संबंधित है जिनके माध्यम से वह गुणवत्ता प्राप्त की जाती है।

फल एवं सब्जियों के संदर्भ में, उपभोक्ता खरीद के समय मुख्यतः बाहरी गुणों जैसे रंग, आकार, आकृति, चमक और दाग-धब्बों की अनुपस्थिति पर ध्यान देते हैं। जबकि उपभोग के बाद उनकी संतुष्टि आंतरिक गुणवत्ता मापदंडों पर निर्भर करती है। इससे अतिरिक्त, निर्यात योग्य खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता और सुरक्षा पर वैश्विक स्तर पर कड़े मानक लागू होते हैं, क्योंकि खाद्य जनित रोग मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा हैं और देशों की आर्थिक उत्पादकता को भी प्रभावित करते हैं। अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि सुरक्षा, गुणवत्ता का सबसे महत्वपूर्ण घटक है, क्योंकि असुरक्षित भोजन उपभोक्ता के स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकता है। सुरक्षा अन्य गुणवत्ता गुणों से इस दृष्टि से भिन्न है कि यह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देती, बल्कि इसके लिए वैज्ञानिक परीक्षण आवश्यक होते हैं।

आज अधिकांश देशों में खाद्य सुरक्षा कानूनों और प्रमाणन प्रणालियों की संख्या में वृद्धि हुई है, क्योंकि खाद्य की गुणवत्ता किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास का प्रमुख मानक है। विभिन्न देशों और महाद्वीपों में आई एस ओ, एचएससीसीपी, एफ एस एस ए आई, जी एफ एस आई, एफ एस एम ए, ई एफ एस ए, एफ एस ए एन जेड, एफ एस ए, कोडेक्स एलीमेंटारियस जैसे मानक खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

### खाद्य गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु मशीन विज्ञान तकनीकें

पिछले एक दशक में मशीन विज्ञान आधारित गैर-विनाशकारी तकनीकों का खाद्य गुणवत्ता मूल्यांकन में व्यापक उपयोग हुआ है। इन तकनीकों के माध्यम से प्रत्येक खाद्य वस्तु का व्यक्तिगत रूप से निरीक्षण संभव होता है, अपशिष्ट कम होता है और एक ही नमूने पर बार-बार मापन किया जा सकता है।

### आरजीबी इमेजिंग (रंग आधारित इमेजिंग)

यह इमेजिंग सबसे सरल और व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली मशीन विज्ञान तकनीक है। इसमें सामान्य डिजिटल कैमरे का उपयोग होता है, जो लाल (आर), हरे (जी) और नीले (बी) रंग चैनलों में चित्र कैप्चर करता है। यह तकनीक मुख्यतः खाद्य पदार्थों की बाहरी गुणवत्ता के मूल्यांकन में प्रयुक्त होती है। इस इमेजिंग के माध्यम से फलों और सब्जियों में परिपक्वता निर्धारण, रंग मूल्यांकन, सतही दोष, दाग-धब्बे और क्षति का पता लगाया जाता है। यह तकनीक तेज, कम लागत वाली और ऑटोमैटिक स्तर पर छँटाई एवं मूल्यांकन के लिए अत्यंत उपयुक्त है।



आरजीवी इमेजिंग का उपयोग करके संतरे की छंटाई को दर्शाते हुए

## हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग

हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग एक उन्नत तकनीक है, जो सैकड़ों संकीर्ण तरंगदैर्घ्य बैंड में चित्र कैप्चर करती है। इसमें दृश्य, निकट आईआर और शॉर्ट-वेव आईआर क्षेत्र शामिल होते हैं। यह तकनीक स्थानिक और स्पेक्ट्रल दोनों प्रकार की जानकारी प्रदान करती है, जिससे खाद्य पदार्थों की रासायनिक संरचना, आंतरिक दोष, फफूंद संक्रमण, मिलावट और पोषक तत्वों का सटीक विश्लेषण संभव होता है। हालांकि यह तकनीक अत्यंत सटीक है, परंतु इसके लिए उन्नत हार्डवेयर और डेटा प्रोसेसिंग सिस्टम की आवश्यकता होती है। मंहगे हार्डवेयर छोटे उत्पादकों के लिए अपनाया कठिन बनाता है। स्पेक्ट्रल ओवरलैप मल्टी-कॉम्पोनेंट विश्लेषण को जटिल बनाता है, जिसके लिए फसल-विशिष्ट कैलिब्रेशन आवश्यकता होती है जो पर्यावरणीय बदलावों (जैसे, प्रकाश और तापमान) के प्रति संवेदनशील होते हैं। इसके अलावा, केवल सतह पर आधारित पहचान सतह के नीचे के दोषों को नहीं पकड़ पाती।



(अ) हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग कैमरा (ब) हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग सिस्टम के माध्यम से फल की पकावट का निरीक्षण

## मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग

मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग का सरल रूप है, जिसमें कम और चौड़े तरंगदैर्घ्य बैंड का उपयोग किया जाता है। यह तकनीक जटिलता और प्रदर्शन के बीच संतुलन प्रदान करती है। इसका उपयोग फलों में चोट पहचान, ताज़गी मूल्यांकन, नमी स्तर मापन और गुणवत्ता ग्रेडिंग में किया जाता है। सीमित तरंगदैर्घ्य के कारण यह तकनीक तेज होती है और वास्तविक समय औद्योगिक अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त है। हालांकि, कम बैंड वाले सिस्टम

हाइपरस्पेक्ट्रल सिस्टम की तुलना में रासायनिक विशिष्टता कम कर देते हैं, जिससे जटिल मिश्रणों में स्पेक्ट्रल ओवरलैप होता है और सटीकता कम हो जाती है। चूंकि बैंड का चयन स्थिर और फसल-विशेष है; इसलिए प्रकाश की परिवर्तनशीलता या सतह की बनावट जैसे पर्यावरणीय कारक अक्सर पुनः कैलिब्रेशन की मांग करते हैं, जिससे प्रोसेसिंग लाइनों में सीधे उपयोग करना जटिल हो जाता है। यह हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग सिस्टम की तुलना में अधिक किफायती है, लेकिन बड़े सेसर्स की वजह से इसे फील्ड या छोटे पैमाने पर इस्तेमाल करना मुश्किल हो जाता है। मल्टीस्पेक्ट्रल तरंग लंबाई सतह से परे प्रवेश नहीं कर सकती; इसलिए, सतह के अंदर की दोष, जैसे सेब में आंतरिक चोट, पता नहीं लग पाती।



मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग सिस्टम के माध्यम से विभिन्न बीज वर्गीकरण

## थर्मल इमेजिंग (इन्फ्रारेड इमेजिंग)

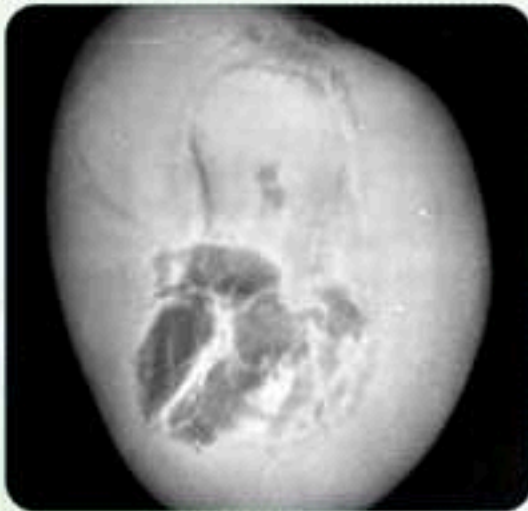
थर्मल इमेजिंग वस्तुओं द्वारा उत्सर्जित ऊष्मा को मापकर तापमान वितरण का दृश्य रूप प्रस्तुत करती है। खाद्य उद्योग में इसका उपयोग बेकिंग, सुखाने, तलने और ठंडा करने जैसी प्रक्रियाओं की निगरानी के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त, थर्मल इमेजिंग के माध्यम से सूक्ष्मजीवी खराबी, चोट और असमान पकने की पहचान की जा सकती है, क्योंकि प्रभावित क्षेत्रों का तापमान सामान्य भागों से भिन्न होता है।



थर्मल इमेजिंग के माध्यम से सेब संक्रमण का पता लगाते हुए

### एक्स-रे इमेजिंग

एक्स-रे इमेजिंग एक शक्तिशाली गैर-विनाशकारी तकनीक है, जो खाद्य उत्पादों के आंतरिक ढाँचे को प्रदर्शित करती है। इसका उपयोग मांस और मछली में हड्डी पहचान, सूखे मेवों में पत्थर, धातु कण, कोंच के टुकड़े और पैकेजिंग दोषों की पहचान में किया जाता है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में एक्स-रे प्रणालियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और आज अनेक प्रसंस्करण इकाइयों में इनका उपयोग अनिवार्य हो गया है।



आम की एक्स-रे छवि आंतरिक कीट संक्रमण को दर्शाते हुए

### 3-डी इमेजिंग (स्टीरियो इमेजिंग)

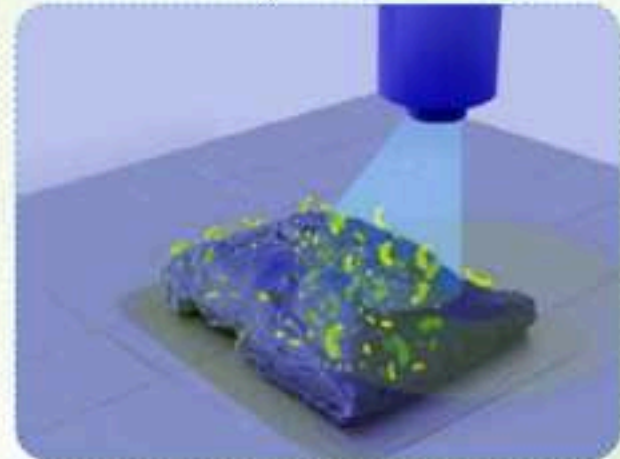
यह इमेजिंग तकनीक गहराई और सतह आकृति की जानकारी प्रदान करती है। इसके माध्यम से खाद्य उत्पादों का आकार, आयतन, सतह खुरदरापन और विकृति का सटीक मापन संभव होता है। इस तकनीक का उपयोग फलों और सब्जियों की आकार आधारित छंटाई, बेकरी उत्पादों की बनावट मूल्यांकन और सतही दोष पहचान में किया जाता है।



3-डी इमेजिंग से खाद्य उत्पादों का आकार, आयतन, सतह खुरदरापन और विकृति का सटीक मापन

### फ्लोरोसेंस इमेजिंग

फ्लोरोसेंस इमेजिंग पराबैंगनी प्रकाश के प्रभाव में खाद्य पदार्थों से उत्सर्जित प्रकाश का उपयोग करती है। अनेक जैविक और रासायनिक यौगिक पराबैंगनी प्रकाश में चमकते हैं, जिससे फफूंद संक्रमण, कीटनाशक अवशेष और संदूषण की पहचान संभव होती है।



फ्लोरोसेंस इमेजिंग के तहत पराबैंगनी किरणों के माध्यम से फफूंद संक्रमण का पता लगाते हुए

### निकट इन्फ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी

निकट इन्फ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी खाद्य पदार्थों में उपस्थित अणुओं द्वारा प्रकाश के अवशोषण पर आधारित है। इसके माध्यम से नमी, शर्करा, वसा, प्रोटीन और स्टार्च की मात्रा का त्वरित और गैर-विनाशकारी विश्लेषण किया जाता है।



## हैंडहेल्ड एनआईआर स्पेक्ट्रोस्कोपी के माध्यम से सब का गुणवत्ता विश्लेषण



मशीन विज्ञान आधारित खाद्य गुणवत्ता मूल्यांकन में अपनाई गई प्रक्रिया का प्रवाह चार्ट

## खाद्य गुणवत्ता विश्लेषण में मशीन विज्ञान तकनीकों के अनुप्रयोग

| तकनीक                   | अनुप्रयोग क्षेत्र           | खाद्य उत्पादों के उदाहरण                                                                                  |
|-------------------------|-----------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| आरजीबी इमेजिंग          | सतही रंग, आकार, दोष         | आम में परिपक्वता, सेब में दाग, टमाटरों का रंग वर्गीकरण                                                    |
| हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग | आंतरिक दोष, रासायनिक संरचना | अनाज में नमी की मात्रा, मेवों में फफूंद (कवक) संक्रमण, पत्तेदार सब्जियों में कीटनाशक अवशेषों की पहचान     |
| मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग | ताजगी, ग्रेडिंग             | आड़ू में चोट (खरोंच) की पहचान, चावल की गुणवत्ता का वर्गीकरण, ब्रेड में फफूंद द्वारा खराब होना             |
| धर्मल इमेजिंग           | तापमान निगरानी, खराबी       | बिस्कुट में समान रूप से बेकिंग (पकने) की जाँच, मांस में सूक्ष्मजीवीय खराबी, केलों की परिपक्वता का स्तर    |
| एक्स-रे इमेजिंग         | विदेशी वस्तु पहचान          | मछली/मांस में हड्डी की पहचान, सूखे मेवों में पत्थर की पहचान, पैकेज्ड स्नैक्स में सील दोष की पहचान         |
| 3डी इमेजिंग             | आकार, आयतन विश्लेषण         | सेबों का आकार के आधार पर छंटाई, कुकीज़ में आकार (आकृति) का विश्लेषण, सिट्रस फलों में चोट (खरोंच) की पहचान |
| फ्लोरोसेंस इमेजिंग      | संदूषण पहचान                | मक्का में अपलाटॉक्सिन की पहचान, पालक में कीटनाशक अवशेष, स्ट्रॉबेरी पर फफूंद के धब्बे                      |
| एनआईआर स्पेक्ट्रोस्कोपी | पोषण विश्लेषण               | गेहूं में प्रोटीन की मात्रा, दूध पाउडर में वसा की मात्रा, प्र संस्कृत जूस में शर्करा (चीनी) का स्तर       |

### निष्कर्ष

मशीन विज्ञान आधारित तकनीकें आधुनिक खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा मूल्यांकन की रीढ़ बन चुकी हैं। ये तकनीकें तेज़, सटीक और गैर-विनाशकारी निरीक्षण प्रदान कर खाद्य अपशिष्ट को कम करती हैं तथा उपभोक्ता विश्वास को बढ़ाती हैं। आरजीबी, हाइपरस्पेक्ट्रल, धर्मल और एक्स-रे जैसी विभिन्न तकनीकें विशिष्ट गुणवत्ता मापदंडों के लिए

उपयुक्त समाधान प्रदान करती हैं। भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग और ऑटोमेशन के साथ मशीन विज्ञान प्रणालियों का एकीकरण खाद्य उद्योग को और अधिक सुरक्षित, कुशल और टिकाऊ बनाएगा। इस प्रकार, मशीन विज्ञान तकनीकों को अपनाना उच्च गुणवत्ता और सुरक्षित खाद्य प्रणालियों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।



## कृषि में डिजिटल ट्विन का अनुप्रयोग एक नई क्रांति

देवबन्धा महापात्र, परमानंद साहू, सखाराम काले एवं राजवर्धन पाटील

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची

पारंपरिक कृषि में किसान अक्सर अपने अनुभव और अनुमान के आधार पर निर्णय लेते थे। लेकिन बदलती जलवायु और संसाधनों की कमी के कारण अब सटीकता (प्रेसीजन) की आवश्यकता है। आधुनिक युग में कृषि क्षेत्र में तकनीकी परिवर्तन एक बड़े बदलाव की दिशा में अग्रसर हैं। इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी), स्वचालित ड्रोन, स्मार्ट सेंसर, रोबोटिक्स, और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) के कारण किसान खेत की निगरानी, बीज बुवाई, सिंचाई और फसल प्रबंधन के निर्णय पहले से कहीं अधिक सूक्ष्म और सटीक तरीके से ले सकते हैं। इन डिजिटल उपकरणों से जुड़ा एक महत्वपूर्ण कार्य डिजिटल ट्विनिंग है, जिसका उद्देश्य उपकरणों और मॉडल के पैरामीटर को कैलिब्रेट व अनुकूलित करना है। डिजिटल ट्विनिंग का अर्थ है कृषि उपकरणों, सेंसरों और सॉफ्टवेयर मॉडल्स को इस तरह से समायोजित करना कि वे न्यूनतम संसाधनों में अधिकतम परिणाम दे सकें। यह तकनीक डेटा और एल्गोरिदम का उपयोग करके खेती की हर प्रक्रिया को ट्यून करती है। उदाहरण के लिए, जमीन में लगाए गए मॉड्यूलर सेंसर से मिल रहा डेटा रिमोटली मॉड्यूल द्वारा प्रोसेस किया जाता है और उस डेटा के आधार पर सिस्टम अपने आप पानी की मात्रा एडजस्ट करता है। इससे न केवल पानी की बचत होती है, बल्कि फसल की पैदावार भी बढ़ती है। इसी तरह ड्रोन या कृषि रोबोट को उड़ान या कार्य के अनुसार ट्विन कर, बीज या छिड़काव की मात्रा नियंत्रित की जाती है। डिजिटल ट्विन का महत्व इसलिए है क्योंकि यह कृषि क्षेत्र को "स्मार्ट" बनाते हुए उत्पादकता और कुशलता बढ़ाने में मदद करता है।



संवेदी (सेंसर) डेटा पर आधारित डिजिटल तकनीकों से कृषि निर्णय लेते किसान

### डिजिटल ट्विन: अवधारणा और परिभाषा

डिजिटल ट्विन मूलतः डिजिटल या इलेक्ट्रॉनिक प्रणालियों को अनुकूलित करना है। यद्यपि यह शब्द आमतौर पर प्रयोग नहीं किया

जाता, लेकिन इसे हम ऐसे समझ सकते हैं जैसे कोई गूज़ने वाला रेडियो लम्बी-लंबी मैनुअल घुमाने की बजाय डिजिटल सिमल प्रोसेसर द्वारा स्वतः उपयुक्त आवृत्ति पर समायोजित हो जाए। इसी तरह कृषि में डिजिटल ट्विन का आशय है सेंसर और अन्य डिजिटल उपकरणों के माप और नियंत्रण पैरामीटर (जैसे प्रेशर, कैलिब्रेशन वक्र, मॉडल के हाइपरपैरामीटर) को डिजिटल रूप से सेट करके यथासंभव सही परिणाम प्राप्त करना। उदाहरणतः (i) किसी ऑटोमेटेड ड्रिप सिंचाई सिस्टम का नियंत्रक जमीन की नमी के अनुसार पानी की मात्रा को स्वतः कम-अधिक कर सकता है, (ii) भू-स्थानिक डेटा में एमएल मॉडल के हाइपरपैरामीटर ट्यून करके फसल उपज की भविष्यवाणी बेहतर बन सकती है। ध्यान देने योग्य है कि कभी-कभी 'डिजिटल ट्विनिंग' से डिजिटल ट्विन जैसी अवधारणा को भी जोड़ा जाता है, जहाँ भौतिक खेत का सटीक डिजिटल प्रतिरूप बनाकर उसमें परिवर्तन कर परिणामों की पूर्वानुमान क्षमता बढ़ाई जाती है।

डिजिटल ट्विन वास्तविक भौतिक प्रणालियों (जीवित या निर्जीव) की डिजिटल प्रतिकृतियां हैं, जो जटिल प्रणालियों के विश्लेषण, निर्णय सहायता और तकनीकी एकीकरण का मेल हैं। डिजिटल ट्विन ने प्रमुखता हासिल की है, जिसका आंशिक कारण इंटरनेट ऑफ थिंग्स प्रौद्योगिकियों का बढ़ता उपयोग है। यह तकनीक सूक्ष्म उपकरणों और रिमोट सेंसिंग के माध्यम से वास्तविक समय के करीब, उच्च रिजॉल्यूशन पर भौतिक प्रणालियों की निगरानी करने की अनुमति देती है, जिससे डेटा का निरंतर प्रवाह होता है। डिजिटल ट्विन भौतिक और आपासी स्थानों को जोड़ने, सिस्टम के पूरे जीवनचक्र में जानकारी की निरंतरता सुनिश्चित करने, सिमुलेशन के माध्यम से सिस्टम के विकास और सत्यापन करने और अवांछनीय स्थितियों को रोकने में बेहद उपयोगी रहे हैं।

अन्य उभरती प्रौद्योगिकियों की तरह, डिजिटल ट्विन ने भी विभिन्न उद्योगों में एक नया क्षेत्र खोल दिया है, और कृषि भी इसका अपवाद नहीं है। एक टाइम मशीन की तरह, डिजिटल ट्विन तकनीक उपयोगकर्ताओं को उनके खेतों के अतीत, वर्तमान और भविष्य को समझने में सक्षम बनाती है, जिससे कृषि उत्पादन और प्रबंधन में अनिश्चितताओं को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। परिणामस्वरूप, यह नई तकनीक 'एग्रीकल्चर 4.0' की ओर प्रभावी परिवर्तन और उद्योग के सतत विकास को मजबूती से सहारा दे सकती है, जिससे अंततः खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा मिलेगा।

### डिजिटल मॉडल, डिजिटल शैडो और डिजिटल ट्विन की तुलना



डिजिटल मॉडल, शैडो और ट्विन की तुलना

### विभिन्न क्षेत्रों में डिजिटल ट्विन के अनुप्रयोग

डिजिटल ट्विनिंग तकनीकें सिर्फ कृषि तक सीमित नहीं हैं। ऑटोमोबाइल उद्योग में इंजन नियंत्रण यूनिट को रीमैप कर ईंधन दक्षता बढ़ाई जाती है। रेडियो संचार में सॉफ्टवेयर-आधारित ट्यूनिंग से आवृत्ति चयन और सिंक्रोनाइजेशन होता है। सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग में मॉडल के हाइपरपैरामीटर ट्यूनिंग से एप्लिकेशन प्रदर्शन बेहतर होता है। स्वास्थ्य सेवाओं में मेडिकल उपकरणों के सेंसरों का डिजिटल कैलिब्रेशन किया जाता है। ये सभी उदाहरण इस बात की ओर संकेत करते हैं कि डिजिटल सिस्टम को बेहतर बनाने के लिए कैलिब्रेशन और अनुकूलन का निरंतर चक्र आवश्यक है।

कृषि के सन्दर्भ में, डिजिटल ट्विनिंग के कई उपक्षेत्र हैं, जैसे सटीक सिंचाई (सेंसर द्वारा मृदा नमी डेटा के अनुसार), ड्रोन आधारित छिड़काव (उड़ान और छिड़काव की मात्रा का ट्विनिंग), स्वचालित रोबोटिक्स (रोबोट के पथ और गति का अनुकूलन), तथा ए.आई., मशीन लर्निंग मॉडल (उपज भविष्यवाणी के मॉडल के पैरामीटर ट्यूनिंग करना)। इन उदाहरणों से दिखता है कि डिजिटल ट्विनिंग क्रांति लगभग हर प्रौद्योगिकी-आधारित खेत में पाई जा सकती है। निम्न तालिका में इन अनुप्रयोगों को सार संक्षेप में दर्शाया गया है:

### कृषि में डिजिटल ट्विन का अनुप्रयोग

| अनुप्रयोग                  | उद्देश्य                                     | मुख्य तकनीकें                                          | लाभ                                            | सीमाएँ                                              |
|----------------------------|----------------------------------------------|--------------------------------------------------------|------------------------------------------------|-----------------------------------------------------|
| सटीक सिंचाई                | सिंचाई पानी का अनुकूलन और बचत                | आई.ओ.टी. सेंसर, स्वचालित वाल्व, डेटा एनालिटिक्स        | पानी की बचत, ऊर्जा में कमी, उपज में वृद्धि     | उच्च लागत, कनेक्टिविटी आवश्यकता                     |
| सेंसर कैलिब्रेशन           | माप की सटीकता सुनिश्चित करना                 | डिजिटल कैलिब्रेशन उपकरण, मशीन लर्निंग मॉडल             | माप त्रुटि में कमी, विश्वसनीय डेटा             | जटिल प्रक्रिया, रख-रखाव लागत, प्रशिक्षण             |
| ड्रोन/रोबोट नियंत्रण       | कार्य कुशलता, छिड़काव व निगरानी सुचारु बनाना | ड्रोन यूएवी, कंप्यूटर विजन, रिमोट कंट्रोल सॉफ्टवेयर    | तेज कार्यवाई, लक्षित छिड़काव, श्रम बचत         | मौसम पर निर्भरता, प्रारंभिक निवेश, तकनीकी प्रशिक्षण |
| मशीन लर्निंग मॉडल ट्यूनिंग | फसल भविष्यवाणी, रोग पहचान सटीक करना          | ए.आई./मशीन लर्निंग, डेटा एनालिटिक्स, क्लाउड कंप्यूटिंग | बेहतर भविष्यवाणी, जोखिम में कमी, निर्णय सहायता | डेटा की गुणवत्ता, मॉडल जटिलता, पारदर्शिता अभाव      |

| अनुप्रयोग                    | उद्देश्य                                 | मुख्य तकनीकें                                                     | लाभ                                 | सीमाएँ                                                       |
|------------------------------|------------------------------------------|-------------------------------------------------------------------|-------------------------------------|--------------------------------------------------------------|
| आई.ओ.टी. उपकरण<br>कैलिब्रेशन | उपकरण स्थिरता और<br>प्रदर्शन बनाए रखना   | फर्मवेयर अपडेट, रिमोट<br>कैलिब्रेशन प्रोटोकॉल                     | उपकरण जीवन बढ़ाना<br>विश्वसनीयता    | नेटवर्क निर्भरता,<br>रखरखाव, साइबर<br>सुरक्षा                |
| ऑटोमेशन मशीनरी               | खेती के यंत्रों की कार्यक्षमता<br>बढ़ाना | जी.पी.एस. रेडियो<br>नियंत्रण, ऑटोपायलट<br>सिस्टम, कम श्रम<br>लागत | समय की बचत, अधिक<br>एकर-कुल उत्पादन | महंगी मशीनरी,<br>छोटा फार्म फायदेमंद<br>नहीं, विश्वास की कमी |

## कृषि में डिजिटल ट्रैकिंग के उदाहरण (केस-स्टडी)

कृषि में डिजिटल ट्रैकिंग का सबसे स्पष्ट उदाहरण सटीक सिंचाई है। आई.सी.ए.आर. द्वारा प्रकाशित अध्ययन में पाया गया कि आईओटी-सक्षम नमी सेंसर आधारित सिंचाई प्रणाली ने पानी की खपत में लगभग 25-30% की कमी लाकर संसाधन की बचत की। इसी अध्ययन में पौधों की आवश्यकता के अनुसार उर्वरक की मात्रा भी 15-20% तक कम की गई, जिससे लागत बची और उपज में कोई गिरावट नहीं आई। एक अलग आई.सी.ए.आर. हॉर्टिकल्चर रिपोर्ट में बताया गया कि सेंसर-आधारित ऑटोमैटिक सिंचाई से विभिन्न फलों में पानी का गहरा रिसाव 40-50% तक कम हुई और उर्वरक कुशलता में सुधार हुआ। जैसे एक उदाहरण में बनीचे में सेंसर सिंचाई ने केले की पैदावार को 15% तक बढ़ाया। यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल ट्रैकिंग (सेंसर डेटा के अनुसार सिंचाई एल्गोरिथम को ट्रैक करना) से पानी और पोषक तत्व की बचत होती है एवं फसल उत्पादन बढ़ता है।

(क) सटीक कृषि के लिए डिजिटल ट्रैकिंग : डिजिटल फार्मिंग का लक्ष्य कृषि संपत्तियों से उपलब्ध जानकारी का उपयोग करके खाद्य सुरक्षा, जलवायु संरक्षण और संसाधन प्रबंधन जैसी कई मौजूदा चुनौतियों का समाधान करना है। हालाँकि, कृषि क्षेत्र अत्यंत जटिल और गतिशील है, जिसके लिए परिष्कृत प्रबंधन प्रणालियों की आवश्यकता होती है। डिजिटल दृष्टिकोणों से अधिक अनुकूलन और निर्णय लेने में बेहतर सहायता प्रदान करने की अपेक्षा की जाती है। कृषि में डिजिटल ट्रैकिंग एक खेत का आपासी प्रतिनिधित्व है, जिसमें ऊर्जा के उपयोग और नुकसान को कम करते हुए उत्पादकता और दक्षता बढ़ाने की अपार क्षमता है।

डेटा संग्रह: डिजिटल ट्रैकिंग के निर्माण के लिए निम्नलिखित माध्यमों से डेटा एकत्र किया जाता है।

- सेंसर: ये मिट्टी की नमी, तापमान, पी.एच. मान और पोषक तत्वों के स्तर को मापते हैं।
- ड्रोन और उपग्रह: ये फसल के स्वास्थ्य और विकास के पैटर्न को समझने के लिए सटीक इमेजरी (चित्रावली) कैचर करते हैं।

- मौसम केंद्र: ये जलवायु और वर्षा से संबंधित महत्वपूर्ण डेटा प्रदान करते हैं।



डिजिटल ट्रैकिंग आधारित स्मार्ट कृषि प्रणाली



डिजिटल मॉडल निर्माण हेतु डेटा संग्रह

## डिजिटल मॉडल निर्माण

- एकत्र किए गए डेटा को एक डिजिटल प्लेटफॉर्म में एकीकृत किया जाता है जो भौतिक वातावरण की तरह ही होता है।

- मशीन लर्निंग और ए.आई. एल्गोरिदम परिणामों की भविष्यवाणी करने और सुधार के सुझाव देने के लिए डेटा का विश्लेषण करते हैं।

### सिमुलेशन और भविष्यवाणी

किसान सिंचाई के विभिन्न समय, उर्वरक अनुप्रयोगों, या रोपण रणनीतियों का आभासी रूप से परीक्षण कर सकते हैं।

जोखिम प्रबंधन: विभिन्न परिदृश्यों (जैसे सूखा, बाढ़, कीटों का प्रकोप) का अनुकरण करके, डिजिटल ट्विन व्यवधानों का अनुमान लगाने और अनुकूलन प्रतिक्रियाओं की योजना बनाने में मदद करते हैं, जिससे भोजन की कमी के जोखिम को कम किया जा सकता है। भविष्य कहने वाला मॉडल पैदावार, कीटों के हमले और बीमारियों के जोखिम का पूर्वानुमान लगाते हैं।

### वास्तविक समय निगरानी:

जैसे-जैसे नया डेटा आता है, डिजिटल ट्विन लगातार खुद को अपडेट करता रहता है। यह समय पर निर्णय लेने के लिए अलर्ट और अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

**(ख) खाद्य सुरक्षा :** डिजिटल ट्विनिंग कृषि उत्पादन और खाद्य आपूर्ति श्रृंखलाओं में वास्तविक समय की निगरानी, भविष्य कहने वाला विश्लेषण और अनुकूलन को संभव करके खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए एक परिवर्तनकारी तकनीक के रूप में उभर रही है। डिजिटल ट्विनिंग कृषि को अधिक लचीला, कुशल और टिकाऊ बनाकर खाद्य सुरक्षा को आगे बढ़ाने का एक शक्तिशाली उपकरण है, लेकिन इसके व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढांचे और क्षमता निर्माण में निवेश की आवश्यकता है। प्रशीतन प्रणालियों के डिजिटल ट्विन भंडारण और परिवहन के दौरान तापमान और आर्द्रता को ट्रैक करते हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है और शैल्फ-लाइफ बढ़ती है।

खाद्य प्रसंस्करण में अनुप्रयोग: डिजिटल ट्विनिंग भौतिक संचालन और डिजिटल इंटेलिजेंस के बीच के अंतर को पाटकर खाद्य प्रसंस्करण और संरक्षण में क्रांति ला रही है। जैसे-जैसे तकनीक आगे बढ़ेगी, यह टिकाऊ, कुशल और सुरक्षित खाद्य उत्पादन प्रणाली प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

- प्रक्रिया अनुकूलन: डिजिटल ट्विन अक्षमताओं की पहचान करने, ऊर्जा उपयोग को अनुकूलित करने और पैदावार में सुधार करने के लिए उत्पादन लाइनों का अनुकरण करते हैं। उदाहरण के लिए, वे निरंतर उत्पाद गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए तापमान, दबाव और मिश्रण मापदंडों का मॉडल तैयार कर सकते हैं।



### डिजिटल ट्विनिंग का खाद्य प्रसंस्करण में अनुप्रयोग

- गुणवत्ता नियंत्रण: सेंसर डेटा को एकीकृत करके, डिजिटल ट्विन वास्तविक समय में नमी की मात्रा, पी.एच. और बनावट जैसे मापदंडों की निगरानी करते हैं। यह एकरूपता बनाए रखने और उत्पाद की गुणवत्ता प्रभावित होने से पहले विचलन का पता लगाने में मदद करता है।
- उपकरण रखरखाव: डिजिटल ट्विन के माध्यम से भविष्य कहने वाला रखरखाव बेहतर होता है, जो मशीन के प्रदर्शन को ट्रैक करते हैं और विफलताओं की भविष्यवाणी करते हैं, जिससे डाउनटाइम और रखरखाव लागत कम हो जाती है।
- उत्पाद विकास: आभासी मॉडल खाद्य वैज्ञानिकों को भौतिक परीक्षणों से पहले नई फॉर्मूलेशन और प्रसंस्करण स्थितियों का डिजिटल रूप से परीक्षण करने की अनुमति देते हैं, जिससे समय और संसाधनों की बचत होती है।
- शेल्फ-लाइफ भविष्यवाणी: पर्यावरणीय स्थितियों और सूक्ष्मजीवी विकास का अनुकरण करके, डिजिटल ट्विन भविष्यवाणी कर सकते हैं कि उत्पाद कब तक सुरक्षित और ताजा रहेगा।
- पैकेजिंग अनुकूलन: आभासी मॉडल विभिन्न पैकेजिंग सामग्रियों और डिजाइनों का परीक्षण करते हैं ताकि उत्पाद संरक्षण और स्थिरता पर उनके प्रभाव का निर्धारण किया जा सके।

**इन्फ्रास्ट्रक्चर ट्विनिंग :** कृषि-प्लेटफॉर्म और डिजिटल पहचान प्रणालियों को छोटे किसानों के अनुसार समायोजित करने पर जोर दिया जा रहा है। सरकार ने डिजिटल कृषि मिशन शुरू किया है, जिसका उद्देश्य आई.सी.टी. और डेटा इकोसिस्टम को जोड़कर खेती को लाभकारी और डेटा-आधारित बनाना है। इस मिशन के तहत किसान-एग्रीस्टेक द्वारा 11 करोड़ किसानों को डिजिटल आईडी, मिट्टी का प्रोफाइल मैप, और निर्णय सहायता प्रणाली मुहैया कराए जाने की योजना है।

## सीमाएँ और चुनौतियाँ

डिजिटल दृष्टि के फायदे स्पष्ट होते हुए भी इसके समक्ष कई चुनौतियाँ हैं:

- सबसे बड़ी बाधा प्रारंभिक लागत है। आई.ओ.टी. सेंसर, ड्रोन, ए.आई. सिस्टम लगाना छोटे किसानों के लिए महंगा पड़ सकता है।
- इसके अलावा डिजिटल अवसंरचना की कमी भी समस्या है: ग्रामीण इलाकों में अक्सर इंटरनेट कनेक्टिविटी और बिजली आपूर्ति अस्थिर होती हैं। इसके साथ कौशल अंतर भी बड़ा मुद्दा है।
- जटिल डिजिटल उपकरणों को संचालित करने के लिए तकनीकी प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, जबकि बहुत से किसान टेक्नोलॉजी एडॉप्शन के लिए तैयार नहीं हैं।

डेटा की गुणवत्ता और गोपनीयता संबंधी चिंताएँ भी बढ़ रही हैं, जितना डेटा सेंसर से इकट्ठा होता है, उसका सही उपयोग करना और उसके दुरुपयोग को रोकना मुश्किल है। विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि किसानों के व्यक्तिगत और खेत संबंधी डेटा का दुरुपयोग हो सकता है, विशेषकर जब डेटा सुरक्षा के ठोस कानून न हो। उदाहरण स्वरूप, भारत में किसानों का डिजिटल डेटाबेस तैयार करते समय गोपनीयता की सुरक्षा ना होने पर आलोचना हुई है। इन सभी कारकों को देखते हुए डिजिटल ट्युनिंग समाधानों को उपयोगी और प्रभावी बनाने के लिए नीतिगत रूप से सखिसडी, प्रशिक्षण, और आधारभूत ढांचा निर्माण पर जोर दिया जा रहा है।

## भविष्य की दिशा : रुझान और शोध की आवश्यकता

डिजिटल एग्रीकल्चर का भविष्य बहुत उज्जवल दिखता है, लेकिन इसके लिए निरंतर नवाचार और नीति समर्थन की जरूरत है। नीति आयोग की कृषि की पुनर्कल्पना रिपोर्ट के अनुसार, भविष्य में जलवायु-सहनशील बीज, डिजिटल ट्विन्स, और सटीक उपकरणों का विकास होगा। किसान-मित्र डिजिटल प्लेटफॉर्म, सेंसर टेक्नोलॉजी, और ए.आई. ऐप्स विकसित हो रहे हैं। नए शोधों का सुझाव है कि आगे के

अनुसंधान में सेंसर प्रणालियों को और अधिक टिकाऊ, किफायती और अनुकूलनशील बनाने पर ध्यान होना चाहिए। उदाहरण के लिए, सस्ते सेंसरों की मजबूती बढ़ाने, उनकी स्व-स्वीकृति प्रक्रिया पर काम करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें अलग-अलग मिट्टी व जलवायु में भरोसे से उपयोग किया जा सके।

नीतिगत रूप से, सरकारों को डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर पर निवेश करके छोटे किसानों को भी डिजिटल सेवाओं तक पहुंचाना होगा। इसके लिए अनुसंधान संस्थानों और उद्योग को मिलकर कार्य करना चाहिए। साथ ही, डेटा की सुरक्षा के लिए मजबूत कानून बनाना और शिक्षण संस्थानों में आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी की पढ़ाई शामिल करना भी महत्वपूर्ण है। इन सब प्रयासों से एक ऐसे कृषि-चक्र का निर्माण होगा, जिसमें सेंसर डेटा → डिजिटल दृष्टि → अनुकूलित मॉडल → संचालित निर्णय → प्रतिक्रिया (फीडबैक) की प्रक्रिया निरंतर चलेगी, और कृषक लाभान्वित होंगे। इस क्रम में प्रत्येक चक्र के समापन पर नए डेटा के साथ पुनः दृष्टि शुरू होती है, जिससे कृषि निर्णय चक्र निरंतर सुधार के साथ चलता रहता है।

## निष्कर्ष

डिजिटल दृष्टि नई परिभाषित नहीं की गई, लेकिन समग्र विचार यह है कि कृषि-प्रणालियों के डिजिटल पहलुओं को अनुकूलित करना ही इसका उद्देश्य है। लेख में वर्णित कई केस-स्टडीज यह दिखाते हैं कि सटीक सिंचाई, सेंसर कैलिब्रेशन, ड्रोन, मशीन लर्निंग मॉडल और आई.ओ.टी. उपकरण में डिजिटल दृष्टि से महत्वपूर्ण लाभ मिल सकते हैं। इससे पानी, ऊर्जा और सामग्रियों की बचत होती है तथा उपज बढ़ती है। लेकिन इसके लिए आर्थिक समर्थन, प्रशिक्षण और सुरक्षित डेटा-नीति आवश्यक है। भविष्य में इन तकनीकों को और सहज, किफायती और किसानों के अनुकूल बनाकर पूरे कृषि क्षेत्र में लगाना होगा। संक्षेप में, डिजिटल दृष्टि कृषि को अधिक स्मार्ट, स्थायी और लाभकारी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसे नीति, शोध और प्रैक्टिकल इनोवेशन द्वारा आगे बढ़ाया जा सकता है।



## खाद्य पदार्थों में मिलावट की पहचान: पारंपरिक घरेलू परीक्षणों से कृत्रिम बुद्धिमत्ता तक

बी. नरेश<sup>1</sup>, नंदकिशोर ठोंबरे<sup>1</sup>, प्रियंका साकरे<sup>1</sup> एवं सीरव कुमार<sup>2</sup>

<sup>1</sup>भाकूअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, राँची

<sup>2</sup>वैओअनुप - केंद्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चंडीगढ़

खाद्य पदार्थ मानव जीवन के लिए अनिवार्य है क्योंकि यह विकास, ऊर्जा, स्वास्थ्य और समग्र कल्याण के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। पहले के समय में, लोग भोजन की गुणवत्ता और शुद्धता को परखने के लिए सरल घरेलू तरीकों पर भरोसा करते थे, जिन्हें आमतौर पर 'रसोई परीक्षण' कहा जाता था। वे यह निर्धारित करने के लिए कि भोजन ताजा और उपभोग के लिए सुरक्षित है या नहीं, अपनी ज्ञानेन्द्रियों जैसे कि दृष्टि, गंध, स्वाद और स्पर्श का उपयोग करते थे। हालांकि, आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के साथ, खाद्य पदार्थों की उत्पादन और वितरण तेजी से जटिल हो गया है। खाद्य पदार्थ अब उपभोक्ताओं तक पहुँचने से पहले प्रसंस्करण, भंडारण और परिवहन के कई चरणों से गुजरता है। परिणामस्वरूप, लोगों के लिए अपने द्वारा उपभोग किए जाने वाले भोजन की वास्तविक गुणवत्ता और सुरक्षा का आकलन करना अधिक कठिन बना दिया है। इसके साथ ही, संदूषण, अनुचित रख-रखाव और खाद्य मिलावट की बढ़ती समस्या के कारण खाद्य सुरक्षा की चुनौतियाँ बढ़ गई हैं जहाँ आर्थिक लाभ के लिए भोजन में निम्न स्तर का या हानिकारक पदार्थ मिला दिए जाते हैं।

### खाद्य अपमिश्रण

खाद्य पदार्थों में मिलावट एक व्यापक समस्या बन गई है जो दूध, अनाज, दालें, मसाले, खाद्य तेल, फल, सब्जियाँ और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों जैसे उत्पादों को प्रभावित कर रही है। खाद्य पदार्थों की आपूर्ति श्रृंखलाओं की बढ़ती जटिलता के साथ, हर स्तर पर खाद्य गुणवत्ता की निगरानी करना अधिक चुनौतीपूर्ण हो गया है। कुछ निर्माता और व्यापारी खाद्य पदार्थों की बनावट व संत को सुधारने, उसे अधिक ताजा दिखाने या उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों की नकल करने के लिए हानिकारक रसायनों, कृत्रिम रंगों और अनधिकृत परिरक्षकों का उपयोग करते हैं। परिणामस्वरूप, उपभोक्ता अनजाने में असुरक्षित या निम्न स्तर का खाद्य पदार्थ खरीदते हैं। मिलावट न केवल जन स्वास्थ्य को प्रभावित करती है बल्कि उपभोक्ताओं को गुमराह भी करती है और खाद्य बाजार में अनुचित प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करती है। ईमानदार उत्पादकों को अक्सर नुकसान उठाना पड़ता है क्योंकि मिलावटी उत्पादों को कम कीमतों पर बेचा जा सकता है। चूंकि कई मिलावटों का पता केवल दृश्य निरीक्षण से नहीं लगाया जा सकता, इसलिए उपभोक्ता इसके खतरों से अभिज्ञ रह सकते हैं। इसलिए, खाद्य अपमिश्रण न

केवल खाद्य सुरक्षा का मुद्दा है, बल्कि एक गंभीर सामाजिक और आर्थिक समस्या भी है, जिसके लिए उपभोक्ताओं की रक्षा हेतु और सुरक्षित व पौष्टिक खाद्य की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए सख्त नियमों, प्रभावी परीक्षण विधियों और बढ़ी हुई जन जागरूकता की आवश्यकता है।

### अपमिश्रित खाद्य के स्वास्थ्य जोखिम

अपमिश्रित खाद्य पदार्थों के सेवन से स्वास्थ्य संबंधी कई तरह की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जो सामान्य पाचन विकारों से लेकर गंभीर दीर्घकालिक बीमारियों का कारण बनती हैं। उदाहरण स्वरूप, मिलावटी दूध से उदर विकार, पाचन संबंधी समस्याएँ और गुर्दे व यकृत को गंभीर क्षति पहुँचती है। खाद्य तेलों में मिलाए जाने वाले हानिकारक पदार्थों से हृदय संबंधी विकार, दृष्टि संबंधी समस्याएँ और गंभीर जठरांत्र संबंधी बीमारियाँ होती हैं। इसी तरह, मसालों में उपयोग किए जाने वाले कृत्रिम रंग और रासायनिक रंजक एलर्जी, एनीमिया, तंत्रिका तंत्र के विकार और अन्य विषैले प्रभाव उत्पन्न करते हैं। सीसा, तांबे के योगिक और प्रतिबोधित रंजक जैसे विषैले पदार्थ समय के साथ शरीर में एकत्रित हो सकते हैं और मस्तिष्क, यकृत, गुर्दे व तंत्रिका तंत्र सहित महत्वपूर्ण अंगों को गंभीर क्षति पहुँचा सकते हैं। कुछ अपमिश्रक तत्व बच्चों में विकास संबंधी समस्याओं, मानसिक क्षमता में कमी, हार्मोनल असंतुलन और कैंसर के बढ़ते जोखिम से जुड़ी हैं। बच्चे, गर्भवती महिलाएँ, दुर्बल और कमजोर रोग प्रतिरोधक क्षमता वाले लोग इन स्वास्थ्य जोखिमों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होते हैं। इसलिए, खाद्य अपमिश्रण केवल खाद्य गुणवत्ता में कमी का मामला नहीं है; यह एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य धिता है जो व्यक्तियों और समुदायों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकती है।

### खाद्य परीक्षण का विकास

खाद्य गुणवत्ता का आकलन करने और अपमिश्रण की जाँच के लिए उपयोग की जाने वाली विधियों में समय के साथ महत्वपूर्ण बदलाव और विकास हुआ है। शुरुआती चरणों में, लोग खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता को परखने के लिए मुख्य रूप से अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर निर्भर थे। ताजगी, रूप-रंग, स्वाद और खराब होने के संकेतों का आकलन करने के लिए दृष्टि, गंध, स्वाद और स्पर्श का उपयोग किया जाता था। हालांकि ये संवेदी अवलोकन आज भी महत्वपूर्ण हैं, लेकिन ये

व्यक्तिपरक हैं और अक्सर छिपी हुई अपमिश्रण या सद्गुणों का पता लगाने में विफल रहते हैं।

जैसे-जैसे खाद्य अपमिश्रण को लेकर चिंताएँ बढ़ीं, सरल घरेलू या रसोई परीक्षण उपभोक्ताओं के लिए व्यावहारिक उपकरणों के रूप में उभरे। इन परीक्षणों में दूध, मसाले, शहद, खाद्य तेल और दालों जैसे उत्पादों में मिलावट की पहचान करने के लिए पानी, आयोडीन के घोल, नींबू के रस या सामान्य अभिकर्मकों जैसी आसानी से उपलब्ध सामग्रियों का उपयोग किया गया। रसोई परीक्षणों ने जन जागरूकता बढ़ाई और एक त्वरित प्रारंभिक जाँच प्रदान की, लेकिन वे केवल सीमित संख्या में अपमिश्रण का पता लगा सकते थे और आम तौर पर सटीक परिणामों के बजाय केवल गुणात्मक परिणाम देते थे।

## खाद्य गुणवत्ता मूल्यांकन का विकास : रसोई परीक्षणों से स्मार्ट सेंसर तक



## घरेलू रसोई परीक्षण

घरेलू किट और रसोई परीक्षण खाद्य मिलावट की जाँच के लिए आसान और सुविधाजनक तरीके हैं। सामान्य परीक्षणों की सूची, जिन्हें घरेलू स्तर पर किया जा सकता है, नीचे दी गई तालिका में प्रस्तुत है:

| खाद्य पदार्थ               | सामान्य मिलावटी तत्व  | सरल पहचान परीक्षण                               | अवलोकन/परिणाम                                                                    |
|----------------------------|-----------------------|-------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------|
| पनीर                       | स्टार्च / आटा         | आयोडीन के घोल की कुछ बूंदें मिलाएँ              | नीला-काला रंग दिखाई देता है                                                      |
| हल्दी पाउडर                | मेटानिल येलो डाई      | सांद्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाएँ               | गुलाबी/लाल रंग विकसित होता है                                                    |
| लाल मिर्च पाउडर            | ईंट का चूरा           | पानी की सतह पर छिड़कें                          | भारी कण नीचे बैठ जाते हैं                                                        |
| काली मिर्च                 | पपीते के बीज          | पानी का परीक्षण                                 | पपीते के बीज तैरते हैं जबकि असली काली मिर्च डूब जाती है                          |
| चीनी                       | चोंक पाउडर            | पानी में घोलें                                  | चोंक अधुलनशील रहता है और नीचे बैठ जाता है                                        |
| धनिया पाउडर                | लकड़ी का बुरादा       | पानी में डालें                                  | लकड़ी का बुरादा सतह पर तैरता है                                                  |
| दालें                      | मेटानिल येलो          | पानी में भिगोएँ और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाएँ   | गुलाबी रंग विकसित होता है                                                        |
| हरी मटर                    | मैलाकाइट ग्रीन डाई    | पानी में भिगोएँ                                 | हरा रंग पानी में घुलने/छूटने लगता है                                             |
| गुड                        | चोंक पाउडर            | पानी में घोलें                                  | चोंक अधुलनशील रहता है और नीचे बैठ जाता है                                        |
| सहजन (मोरिंगा) पत्ती पाउडर | स्टार्च / चावल का आटा | आयोडीन का घोल मिलाएँ                            | नीला-काला रंग दिखाई देता है                                                      |
| दूध                        | पानी                  | चिकनी/पॉलिश की हुई सतह पर एक बूंद रखें          | शुद्ध दूध सफेद लकीर छोड़ते हुए धीरे-धीरे बहता है, मिलावटी दूध तेजी से बह जाता है |
| दूध                        | स्टार्च               | उबालें, ठंडा करें और आयोडीन का घोल मिलाएँ       | नीला-काला रंग दिखाई देता है                                                      |
| दूध                        | डिटर्जेंट             | तेजी से/जोर से हिलाएँ                           | देर तक टिकने वाला झाग बनता है                                                    |
| सरसों तेल                  | आर्जीमोन तेल          | सांद्र नाइट्रिक अम्ल मिलाएँ और हिलाएँ           | संतरा-लाल रंग मिलावट को दर्शाता है                                               |
| नारियल तेल                 | अन्य वनस्पति तेल      | तेल को लगभग 30 मिनट के लिए रेफ्रिजरेटर में रखें | शुद्ध नारियल तेल समान रूप से जम जाता है; मिलावटी तेल अलग तरल परतें दिखाता है     |
| शहद                        | चीनी की चाशनी         | पानी में एक बूंद डालें                          | शुद्ध शहद नीचे बैठ जाता है; मिलावटी शहद जल्दी घुल जाता है                        |
| घी                         | वनस्पति घी / डालडा    | बीडोइन परीक्षण (HCl + चीनी)                     | गहरा लाल रंग दिखाई देता है                                                       |
| बादाम दूध                  | स्टार्च               | आयोडीन का घोल मिलाएँ                            | नीला-काला रंग दिखाई देता है                                                      |

| खाद्य पदार्थ     | सामान्य मिलावटी तत्व | सरल पहचान परीक्षण                                                                               | अवलोकन/परिणाम                                                                                                      |
|------------------|----------------------|-------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| आयोडीन युक्त नमक | आयोडीन अनुपस्थिति    | की एक आलू काटें, कटी हुई सतह पर नमक छिड़कें, 1 मिनट रुकें, फिर नींबू के रस की 2-3 बूंदें मिलाएं | नीला या नीला-काला रंग आयोडीन युक्त नमक को दर्शाता है; कोई रंग न बदलना आयोडीन की अनुपस्थिति को दर्शाता है           |
| अंडा             | पुराना अंडा          | पानी में तैरने का परीक्षण                                                                       | ताजे अंडे डूब जाते हैं और तली में सपाट लेट जाते हैं। पुराने अंडे सीधे खड़े हो जाते हैं। खराब अंडे सतह पर तैरते हैं |

हालांकि ये परीक्षण करने में आसान हैं, लेकिन ये केवल कुछ सामान्य अपमिश्रण का पता लगा सकते हैं और हानिकारक या आधुनिक रासायनिक मिलावटों की पहचान नहीं कर पाते हैं। ये परीक्षण केवल यह दिखाते हैं कि मिलावट मौजूद है या नहीं, न कि उसकी सटीक मात्रा को मापते हैं। इसके परिणाम परीक्षण की स्थितियों, अभिकर्मक की गुणवत्ता के साथ-साथ प्रक्रिया के दौरान होने वाली गलतियों से प्रभावित हो सकते हैं। इसलिए, ये परीक्षण कानूनी या आधिकारिक उद्देश्यों के लिए विश्वसनीय नहीं हैं। किसी भी संदेहास्पद मिलावट की पुष्टि प्रयोगशाला परीक्षण के माध्यम से की जानी चाहिए।

घरेलू रसोई परीक्षण की सीमाओं को दूर करने के लिए प्रयोगशाला आधारित विश्लेषणात्मक पद्धतियाँ विकसित की गईं। रासायनिक, भौतिक और सूक्ष्मजीववैज्ञानिक विश्लेषणों ने मिलावटों, संदूषकों और खाद्य गुणवत्ता के मानकों की सटीक और विश्वसनीय पहचान प्रदान की। हालांकि, इन विधियों के लिए अक्सर अत्याधुनिक उपकरणों, कुशल कर्मियों और काफी समय की आवश्यकता होती थी।

### खाद्य अपमिश्रण की जाँच हेतु आधुनिक विधियाँ

खाद्य अपमिश्रण का पता लगाने के आधुनिक विधियाँ त्वरित, सटीक और अक्सर गैर-विनाशकारी होते हैं जो व्यापक नमूना तैयारी के बिना मिलावट की पहचान करने में मदद करते हैं। खाद्य प्रमाणीकरण और गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए नियर-इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी, फूरियर ट्रांसफॉर्म इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी (एफटीआईआर), इलेक्ट्रॉनिक नोज, इलेक्ट्रॉनिक टंग और सेंसर-आधारित उपकरणों जैसे उन्नत तकनीकों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। ये विधियाँ त्वरित परिणाम देती हैं, इनमें न्यूनतम रसायनों की आवश्यकता होती है, और ये मिलावट के सूक्ष्म स्तर का भी पता लगा सकती हैं।

आज, सेंसर प्रणालियों के साथ कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग का समन्वय इस विकास के नवीनतम चरण का प्रतिनिधित्व करता है। एआई-संचालित प्रणालियाँ जटिल डेटासेट का विश्लेषण कर सकती हैं, अपमिश्रण के स्वरूपों को पहचानना और वास्तविक समय में निर्णय लेने में सहायता कर सकती हैं, जिससे खाद्य गुणवत्ता का आकलन पहले से कहीं अधिक तेज, स्मार्ट और अधिक सुलभ हो गया है।

**नियर-इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी:** यह तकनीक खाद्य घटकों द्वारा नियर-इंफ्रारेड प्रकाश के अवशोषण को मापती है और त्वरित, गैर-विनाशकारी विश्लेषण प्रदान करती है। इसका उपयोग रासायनिक अभिकर्मकों के

बिना मिलावट का पता लगाने के लिए किया जाता है। जैसे जल मिश्रित दूध, स्टार्च मिश्रित हल्दी पाउडर, या सस्ते वनस्पति तेलों के साथ मिलाया गया जैतून का तेल।



एनआईआर-आधारित गुणवत्ता जाँच उपकरण

**फूरियर ट्रांसफॉर्म इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी:** यह तकनीक खाद्य पदार्थों की उनकी अनूठी इंफ्रारेड फिंगर प्रिंटिंग के आधार पर पहचान करती है। यह मिलावट के कारण होने वाले रासायनिक परिवर्तनों का पता लगाने में अत्यधिक प्रभावी है, जैसे वनस्पति घी मिला हुआ शुद्ध घी और सिंथेटिक घटकों से अपमिश्रित दूध।

**इलेक्ट्रॉनिक टंग:** यह उपकरण सेंसर सरणियों का उपयोग करके मानव स्वाद धारणा की नकल करता है और स्वाद पैटर्न विश्लेषण के माध्यम से असली उत्पादों को मिलावटी उत्पादों से अलग कर सकता है। उदाहरण के लिए, शहद में चीनी के सिरप की मिलावट और फलों के रस में कृत्रिम मिठास की मिलावट।

**इलेक्ट्रॉनिक नोज:** इलेक्ट्रॉनिक नासिका खाद्य पदार्थों द्वारा छोड़े जाने वाले वाष्पशील यौगिकों और सुगंध के प्रवृत्ति का पता लगाती है। यह अपमिश्रण और गुणवत्ता में गिरावट की त्वरित स्क्रीनिंग के लिए उपयोगी है। उदाहरण के लिए, चिकोरी मिला हुआ कॉफी पाउडर, साधारण चावल के साथ मिश्रित शुद्ध बासमती चावल, और खराब हुए दूध व डेयरी उत्पादों की पहचान।

**सेंसर-आधारित उपकरण:** ये उपकरण त्वरित, सुव्यवस्थित और वास्तविक समय में खाद्य गुणवत्ता के आकलन के लिए प्रकाशीय सेंसर, वैद्युतरासायनिक या जैवसंवेदी का उपयोग करते हैं। उदाहरणों में दूध में डिटर्जेंट की पहचान, फलों और सब्जियों में कीटनाशकों के अवशेषों का पता लगाना, दूध पाउडर में मेलानाइन की जाँच और मसालों में कृत्रिम रंगों की पहचान शामिल है।

## त्वरित गैर-विनाशकारी तकनीकों के लाभ

त्वरित गैर-विनाशकारी तकनीकों नमूने को नुकसान पहुँचाए बिना खाद्य गुणवत्ता का आकलन करने का एक तेज और कुशल तरीका प्रदान करती हैं। इन विधियों में नमूना तैयार करने की बहुत कम या बिल्कुल आवश्यकता नहीं होती, जिससे समय और श्रम की बचत होती है। वे रसायनों और अभिकर्मकों की आवश्यकता को कम करती हैं, जिससे वे सुरक्षित और पर्यावरण के अनुकूल बनती हैं। ऐसी तकनीकों सटीक और विश्वसनीय परिणाम प्रदान करती हैं और कम समय में कई नमूनों का विश्लेषण कर सकती हैं। वे ऑन-साइट परीक्षण के साथ-साथ खाद्य उद्योगों में नियमित गुणवत्ता निगरानी के लिए उपयुक्त हैं। इसके अतिरिक्त, वे शुरुआती चरण में ही खाद्य मिलावट का पता लगाने में मदद करती हैं और बेहतर पूर्वानुमान के लिए इन्हें कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग के साथ एकीकृत किया जा सकता है। इन तकनीकों पर आधारित परीक्षण उपकरणों के निर्माण से किसानों, खाद्य निरीक्षकों, खुदरा विक्रेताओं और उपभोक्ताओं को प्रयोगशाला सुविधाओं की आवश्यकता के बिना सीधे खेतों, बाजारों, प्रसंस्करण इकाइयों और खुदरा दुकानों पर खाद्य गुणवत्ता का परीक्षण करने में मदद मिलेगी।

## उपभोक्ता जागरूकता की आवश्यकता

खाद्य मिलावट को रोकने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में उपभोक्ता जागरूकता एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कई उपभोक्ता अनजाने में मिलावटी भोजन खरीदते हैं क्योंकि वे आम मिलावटों और उनके हानिकारक प्रभावों से अनजान होते हैं। इसलिए, लोगों को खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा के बारे में शिक्षित करना अनिवार्य है। उपभोक्ताओं को यह सीखना चाहिए कि खाद्य पदार्थों के लेबल को कैसे पढ़ें। निर्माण और उपयोग की अंतिम तिथियाँ जाँचें, एफएसएसआई और एमार्क जैसे गुणवत्ता प्रमाणपत्रों को स्थापित करें, विश्वसनीय स्रोतों से ही खाद्य उत्पाद खरीदें। उन्हें मिलावट के सामान्य संकेतों के प्रति सचेत रहना चाहिए और दूषित या कम गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों के सेवन से जुड़े स्वास्थ्य जोखिमों को समझना चाहिए। सार्वजनिक जागरूकता कार्यक्रम, शैक्षिक अभियान, कार्यशालाएँ और स्कूलों में खाद्य सुरक्षा शिक्षा इस ज्ञान को फैलाने और उपभोक्ताओं को बेहतर भोजन विकल्प चुनने में मदद कर सकती है।

जागरूकता उपभोक्ताओं को अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य की रक्षा करने में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए भी सक्षम बनाती है। जब उपभोक्ता अधिक सतर्क हो जाते हैं और सुरक्षित, उच्च गुणवत्ता वाले

भोजन की मांग करते हैं, तो खाद्य निर्माताओं और खुदरा विक्रेताओं को बेहतर गुणवत्ता मानकों और नैतिक प्रथाओं को बनाए रखने के लिए प्रोत्साहन मिलता है।

## निष्कर्ष

खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा सुनिश्चित करना एक साझा जिम्मेदारी है जिसमें उत्पादक, नियामक, वैज्ञानिक और उपभोक्ता सभी शामिल हैं। हालांकि सरल घरेलू परीक्षण कुछ सामान्य मिलावटों की पहचान करने और जन जागरूकता पैदा करने के लिए उपयोगी बने हुए हैं, लेकिन वे वैज्ञानिक विश्लेषण का स्थान नहीं ले सकते। एनआईआर, एफटीआईआर, इलेक्ट्रॉनिक नोज, इलेक्ट्रॉनिक टंग और सेंसर-आधारित उपकरण जैसी आधुनिक गैर-विनाशकारी तकनीकों त्वरित, सटीक और विश्वसनीय परिणाम प्रदान करके खाद्य गुणवत्ता मूल्यांकन का परिदृश्य बदल रही हैं। जैसे-जैसे ये तकनीकें अधिक सस्ती और सुवादा होती जाएंगी, इनके प्रयोगशालाओं से बाहर निकलकर किसानों, खाद्य निरीक्षकों, खुदरा विक्रेताओं और आम उपभोक्ताओं तक पहुँचने की उम्मीद है। संवेदन तकनीकों और कृत्रिम बुद्धिमत्ता में प्रगति के साथ उपभोक्ता जागरूकता को जोड़कर, हम एक सुरक्षित खाद्य प्रणाली का निर्माण कर सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हमारी थाली तक पहुँचने वाला भोजन शुद्ध, प्रामाणिक और स्वास्थ्यवर्धक हो।



## 5 चीजें हमेशा देखें - सुरक्षित और बेहतर खरीदारी के लिए



## कार्बन क्रेडिट व्यापार योजना : भारत की हरित क्रांति और आर्थिक विकास का नया अध्याय

सफीक अहमद<sup>1</sup>, आर के पटेल<sup>2</sup>, देवीदीन यादव<sup>3</sup>, कृपा शंकर<sup>4</sup>, हरपाल सिंह<sup>4</sup> एवं प्रदीप कुमार<sup>5</sup>

<sup>1</sup>भाकृअनुप - भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

<sup>2</sup>क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् - भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, दतिया

<sup>3</sup>बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी

<sup>4</sup>भाकृअनुप - भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, देहरादून, उत्तराखंड

जब किसान ऐसी खेती करते हैं जो हवा से कार्बन डाइऑक्साइड सोख लेती है (कार्बन संचयन) या हरितगृह गैसों का उत्सर्जन कम करती है, तो उन्हें 'कार्बन जमा' मिलते हैं। एक कार्बन जमा का अर्थ है एक टन कार्बन डाइऑक्साइड को वातावरण में जाने से रोकना। इसका जन्म 1997 के क्योटो समझौते से हुआ था। इसका मूल सिद्धांत 'प्रदूषण फैलाने वाला भुगतान करें' है।

भारत ने पेरिस समझौते के तहत अपने 'राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान' में खेती को एक मुख्य आधार माना है। भारत की लगभग 60-65% जनसंख्या खेती पर निर्भर है, जो इस देश को कार्बन जमा का सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता बना सकता है।

### किसान कैसे कमाई कर सकते हैं?

किसानों को सीधे बाजार में कार्बन जमा बेचना थोड़ा कठिन होता है, इसलिए उन्हें समूहों या कार्बन परियोजनाओं (जैसे ग्रो इंडिगो या वराह) के साथ जुड़ना होता है।

### कमाई के मुख्य तरीके: विस्तृत विश्लेषण

#### शून्य जुताई

पारंपरिक खेती में हम खेत को बार-बार जोतते हैं ताकि मिट्टी भुरभुरी हो जाए। लेकिन विज्ञान कहता है कि मिट्टी के अंदर 'कार्बनिक पदार्थ' दबे होते हैं। जब हल मिट्टी को पलटता है, तो वह कार्बन हवा की ऑक्सीजन के संपर्क में आकर CO<sub>2</sub> बन जाता है और उड़ जाता है।

- कार्बन क्रेडिट कैसे मिलता है?: शून्य जुताई में 'हेम्पी सीडर' जैसी मशीनों का उपयोग होता है। इससे मिट्टी का कार्बन मिट्टी में ही 'लॉक' रहता है। जितना कार्बन आपने उड़ने से बचाया, उतने ही आपके क्रेडिट्स बढ़ते हैं।
- अतिरिक्त लाभ: ट्रैक्टर का डीजल बचता है और मिट्टी की नमी बरकरार रहती है।

#### धान की सीधी बुवाई

धान के खेतों में भरा हुआ पानी 'अवायवीय' स्थिति पैदा करता है, जिससे मीथेन (CH<sub>4</sub>) पैदा होती है। मीथेन, कार्बन डाइऑक्साइड से 28 गुना ज्यादा गर्मी सोखती है।

- कार्बन क्रेडिट कैसे मिलता है?: सीधी बुआई तकनीक में खेत को भरकर रखने की जरूरत नहीं होती। इससे मीथेन का उत्सर्जन 60% से 90% तक कम हो जाता है। इस कमी को 'कार्बन उत्सर्जन कटौती' माना जाता है और इसके बदले पैसे मिलते हैं।
- अतिरिक्त लाभ: पानी की 20-30% बचत और लेबर का कम खर्च।

#### कृषि-वार्मिकी

यह कार्बन क्रेडिट कमाने का सबसे तेज 'शॉर्टकट' है। पेड़ हवा से CO<sub>2</sub> सोखकर उसे अपनी लकड़ी और जड़ों में जमा कर लेते हैं।

- कार्बन क्रेडिट कैसे मिलता है?: पापलर, मालाबार नीम, या फलों के पेड़ हर साल भारी मात्रा में कार्बन सोखते हैं। यदि आप 1 एकड़ की मेड़ पर भी पेड़ लगाते हैं, तो वे आपकी मुख्य फसल से अलग बोनस आय (कार्बन क्रेडिट के रूप में) देते हैं।
- अतिरिक्त लाभ: लकड़ी बेचकर भविष्य में बड़ी कमाई और खेत का बेहतर माइक्रो-क्लाइमेट।

#### उर्वरक प्रबंधन

जब हम जरूरत से ज्यादा यूरिया या नाइट्रोजन खाद डालते हैं, तो मिट्टी से नाइट्रस ऑक्साइड (N<sub>2</sub>O) निकलती है। यह गैस CO<sub>2</sub> से 300 गुना ज्यादा खतरनाक है।

- कार्बन क्रेडिट कैसे मिलता है?: 'नीम कोटेड यूरिया' या 'नैनो यूरिया' का उपयोग करके और केवल जरूरत के हिसाब से खाद डालकर आप भारी मात्रा में गैस उत्सर्जन रोकते हैं। इस रोक को ऑडिट किया जाता है और क्रेडिट जारी होते हैं।



## कार्बन जमा प्राप्त करने की विस्तृत प्रक्रिया

यह प्रक्रिया तकनीकी है और आमतौर पर इसमें 12 से 24 महीने का समय लगता है:

### चरण 1: पंजीकरण

किसान को अकेले काम करने के बजाय किसान उत्पादक संगठन या किसी एग्रीगेटर कंपनी (जैसे ग्री इंडिगो, वराह, या इंडिगो एजी) के साथ जुड़ना होता है।

- दस्तावेज: आधार कार्ड, खेत के कागजात (खतीनी), और पिछले 3 साल का खेती का रिकॉर्ड।
- अनुबंध: कंपनी के साथ एक समझौता होता है कि आप अगले कुछ वर्षों तक कार्बन-अनुकूल खेती करेंगे।

### चरण 2: आधार रेखा सर्वेक्षण

प्रोजेक्ट शुरू होने से पहले विशेषज्ञों की टीम या सैटेलाइट डेटा के जरिए यह देखा जाता है कि शुरुआत में आपके खेत की मिट्टी में कितना कार्बन है। यह 'जीरो पॉइंट' होता है। इसके बाद जो भी सुधार होगा, उसी पर पैसे मिलेंगे।

### चरण 3: निगरानी

- सैटेलाइट तकनीक: कंपनियाँ उपग्रह चित्रों का उपयोग करती हैं। वे घर बैठे देख सकती हैं कि आपने वास्तव में घसाली जलाई है या नहीं, या आपके खेत में हरियाली कितनी है।
- डिजिटल रिकॉर्ड: किसान को मोबाइल ऐप पर अपनी गतिविधियों (खाद डालना, बुवाई, सिंचाई) का फोटो या डेटा डालना होता है।

### चरण 4: सत्यापन

जब डेटा तैयार हो जाता है, तो एक तीसरे पक्ष की ऑडिट कंपनी के निरीक्षक आते हैं।

- वे रैंडम खेतों से मिट्टी के नमूने लेते हैं।
- वे सैटेलाइट डेटा और किसान के रिकॉर्ड का मिलान करते हैं।
- यदि सब सही पाया जाता है, तो वे एक 'सत्यापन रिपोर्ट' जारी करते हैं।

### चरण 5: भुगतान

सत्यापन के बाद 'कार्बन सर्टिफिकेट' जारी होते हैं।

- ट्रेडिंग: वे सर्टिफिकेट अंतरराष्ट्रीय 'कार्बन एक्सचेंज' पर बेचे जाते हैं। बड़ी कंपनियाँ (जैसे टाटा, रिलायंस, या गूगल) इन्हें अपनी कार्बन भरपाई के लिए खरीदती हैं।
- पैसे का हस्तांतरण: बिक्री से जो पैसा मिलता है, उसमें से कंपनी अपना सर्विस चार्ज (लगभग 20-30%) काटकर बाकी पैसा सीधे किसान के बैंक खाते में भेज देती है।

## भारत में कार्बन क्रेडिट: संभावनाओं और चुनौतियों का सैद्धांतिक विश्लेषण

### आर्थिक एवं सामाजिक संभावनाओं का विस्तार

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए कार्बन क्रेडिट केवल एक योजना नहीं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कायाकल्प का एक माध्यम है। इसके लाभों को हम दो मुख्य दृष्टिकोणों से देख सकते हैं:

**अतिरिक्त आय का सिद्धांत:** पारंपरिक कृषि में किसान की आय केवल उसकी फसल की उपज और उसके बाजार मूल्य पर निर्भर करती है। कार्बन क्रेडिट इस समीकरण में एक नया आयाम जोड़ता है। जब किसान ऐसी पद्धतियाँ अपनाता है जो वातावरण से कार्बन सोखती हैं, तो वह वास्तव में एक 'पर्यावरणीय सेवा' प्रदान कर रहा होता है। इस सेवा के बदले उसे जो 'क्रेडिट' मिलते हैं, उन्हें अंतरराष्ट्रीय बाजार में बेचा जाता है। एक अनुमान के अनुसार, प्रति एकड़ ₹1,000 से ₹3,000 की यह आय किसान के लिए एक सुरक्षा कवच की तरह काम करती है, विशेषकर तब जब फसल की कीमतें गिर रही हों।

**मृदा स्वास्थ्य और दीर्घकालिक उत्पादकता:** कार्बन खेती का सबसे गहरा लाभ मिट्टी की भौतिक और रासायनिक संरचना में सुधार है। जब मिट्टी में 'जैविक कार्बन' बढ़ता है, तो वह एक स्पंज की तरह काम करने लगती है। इससे मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ जाती है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। साथ ही, मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ने से रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है, जिससे किसान की लागत घटती है और उसकी भूमि लंबे समय तक उपजाऊ बनी रहती है।

### कार्यान्वयन की चुनौतियाँ और उनके निहितार्थ

इतनी बड़ी संभावनाओं के बावजूद, इसके क्रियान्वयन में कई गंभीर बाधाएँ हैं। सबसे बड़ी चुनौती जागरूकता की है; अधिकांश भारतीय किसानों के लिए यह समझना मुश्किल है कि अदृश्य गैसों को हवा से कम करने के बदले उन्हें पैसा कैसे मिल सकता है।

**तकनीकी और प्रक्रियात्मक जटिलता:** कार्बन क्रेडिट प्राप्त करने की प्रक्रिया अत्यंत वैज्ञानिक और डेटा-आधारित है। इसमें प्रत्येक गतिविधि का सटीक प्रलेखन अनिवार्य है। बुवाई से लेकर कटाई तक का डिजिटल रिकॉर्ड रखना छोटे और कम पढ़े-लिखे किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती है। इसके अलावा, भारत में भूमि का स्वामित्व छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित है। एक एकल छोटे किसान के लिए 'सत्यापन' की प्रक्रिया इतनी महंगी होती है कि वह उसके क्रेडिट से मिलने वाले लाभ से भी अधिक हो सकती है। यही कारण है कि यहाँ किसान उत्पादक संगठन की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है, जो सैकड़ों किसानों को एक समूह में जोड़कर लागत को कम कर सकते हैं।

## कार्बन संचयन का विज्ञान

कार्बन संचयन कोई कृत्रिम प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह प्रकृति का अपना संतुलन बनाने का तरीका है, जिसे किसान अपने प्रबंधन से तेज़ कर देता है।

### पौधों की 'कार्बन फैक्ट्री'

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, प्रत्येक पौधा एक जीवित 'कार्बन अवशोषक' है। प्रकाश संश्लेषण के दौरान, पौधे सूर्य की ऊर्जा का उपयोग करके वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड ( $\text{CO}_2$ ) खींचते हैं और पानी ( $\text{H}_2\text{O}$ ) के साथ मिलकर इसे शर्करा (ग्लूकोज) में बदल देते हैं।

मिट्टी में कार्बन का स्थिरीकरण प्रक्रिया केवल भोजन बनाने पर नहीं रुकती। पौधे इस कार्बन का एक बड़ा हिस्सा (लगभग 30-40%) अपनी जड़ों के माध्यम से मिट्टी में तरल रूप में उत्सर्जित करते हैं। मिट्टी के भीतर मौजूद सूक्ष्मजीव और कवक इस कार्बन का उपभोग करते हैं। इस प्रक्रिया में, वे कार्बन को 'ह्यूमस' नामक एक अत्यंत स्थिर पदार्थ में बदल देते हैं। ह्यूमस कार्बन का वह रूप है जो मिट्टी में दशकों या सदियों तक सुरक्षित रह सकता है। कार्बन क्रेडिट इसी 'स्थिर कार्बन' की मात्रा के आधार पर मापा और दिया जाता है। जब किसान गहरी जुताई नहीं करता तो यह जमा हुआ कार्बन मिट्टी के अंदर ही सुरक्षित रहता है और हवा में वापस नहीं जा पाता। इस प्रकार, एक किसान का खेत वास्तव में एक 'कार्बन बैंक' बन जाता है।

### टिकाऊ कृषि विधियाँ और कार्बन संचयन में उनका योगदान

कृषि पद्धतियों में बदलाव ही कार्बन क्रेडिट उत्पन्न करने का प्राथमिक स्रोत है। यहाँ दो सबसे महत्वपूर्ण विधियों का वैज्ञानिक और कार्यात्मक विवरण दिया गया है:

धान की खेती और मीथेन प्रबंधन: पारंपरिक धान की खेती में खेतों को लगातार पानी से भरकर रखा जाता है। यह 'अवायवीय' स्थिति पैदा करता है, जहाँ ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में मिट्टी के भीतर मौजूद बैक्टीरिया कार्बनिक पदार्थों को तोड़कर मीथेन ( $\text{CH}_4$ ) गैस उत्सर्जित करते हैं। मीथेन, कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में गर्मी को रोकने में लगभग 28 गुना अधिक शक्तिशाली है। जब किसान वैकल्पिक गीलापन और सुखाना या धान की सीधी बुवाई जैसी तकनीकें अपनाता है, तो मिट्टी हवा के संपर्क में रहती है। इससे मीथेन का उत्सर्जन 40% से 50% तक कम हो जाता है। इस कमी को वैज्ञानिक गणनाओं के आधार पर कार्बन क्रेडिट में बदला जाता है।

शून्य जुताई का सिद्धांत: मिट्टी कार्बन का एक विशाल भंडार है। जब हम ट्रैक्टर से गहरी जुताई करते हैं, तो मिट्टी के कणों के बीच फंसा हुआ कार्बन हवा की ऑक्सीजन के साथ क्रिया करके तुरंत कार्बन डाइऑक्साइड ( $\text{CO}_2$ ) में बदल जाता है और वायुमंडल में मुक्त हो जाता है। शून्य जुताई पद्धति में मिट्टी की संरचना को छेड़ा नहीं जाता,

जिससे कार्बन मिट्टी के भीतर ही 'बंद' रहता है। यह न केवल कार्बन को बचाता है, बल्कि मिट्टी के कटाव को रोकता है और मिट्टी की जैविक शक्ति को बनाए रखता है।

### आर्थिक विश्लेषण और लाभ का ढांचा

कार्बन क्रेडिट का बाजार विशुद्ध रूप से वैज्ञानिक बचत और वैश्विक मांग पर आधारित है।

बाजार मूल्य और मूल्य निर्धारण: अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्बन क्रेडिट का मूल्य 'स्वैच्छक बाजार' में तय होता है। एक क्रेडिट का अर्थ है एक टन  $\text{CO}_2$  उत्सर्जन की बचत। इसकी कीमत ₹1,500 से ₹4,000 के बीच अस्थिर रहती है, जो क्रेडिट की 'गुणवत्ता' पर निर्भर करती है।

निवेश और आय का गणित: किसानों के लिए इसमें कुछ शुरुआती निवेश आवश्यक होता है, जैसे हैप्पी सीडर मशीनें, DSR उपकरण या विशिष्ट बीज। हालांकि, यह निवेश दीर्घकालिक लाभ देता है। यदि हम 10 एकड़ के एक मॉडल को देखें, जहाँ किसान पुनर्जोखेती कर रहा है, तो वह प्रति एकड़ लगभग 2 क्रेडिट उत्पन्न कर सकता है। बाजार दर ₹2,000 प्रति क्रेडिट के हिसाब से, किसान को ₹40,000 की वार्षिक अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। यह आय फसल की बिक्री से होने वाले मुनाफे से बिल्कुल अलग और शुद्ध 'बोनस' है।

### निगरानी, रिपोर्टिंग और सत्यापन

कार्बन क्रेडिट को 'मुद्रा' के रूप में तभी स्वीकार किया जाता है जब उसे तीन कड़े चरणों से गुजारा जाए, जिसे निगरानी, रिपोर्टिंग और सत्यापन कहते हैं:

- सुदूर संवेदन :** आधुनिक तकनीक में अब हर खेत पर जाकर भौतिक निरीक्षण की आवश्यकता नहीं होती। उपग्रह चित्रों के माध्यम से खेत की हरियाली, फसल का घनत्व और यहाँ तक कि मिट्टी की नमी की निगरानी की जाती है। यह डेटा प्रमाणित करता है कि किसान वास्तव में बताए गए तरीकों से खेती कर रहा है।
- मिट्टी का नमूना :** वैज्ञानिक सटीकता के लिए प्रयोगशाला में मिट्टी की जाँच अनिवार्य है। इसमें मिट्टी के 'कार्बनिक कार्बन' के स्तर को मापा जाता है। बुवाई से पहले और कटाई के बाद के स्तर का अंतर ही वास्तविक बचत को दर्शाता है।
- ब्लॉकचेन तकनीक :** डेटा की पारदर्शिता और सुरक्षा के लिए ब्लॉकचेन का उपयोग किया जाता है। यह एक डिजिटल लेजर है जिसे बदला नहीं जा सकता। यह सुनिश्चित करता है कि एक ही कार्बन क्रेडिट को दो बार न बेचा जाए और भुगतान सीधे वास्तविक किसान तक पहुँचे।

### भारत सरकार की रणनीतिक भूमिका और 'नेट जीरो' लक्ष्य

भारत सरकार का दृष्टिकोण इस क्षेत्र में अत्यंत प्रगतिशील है।

भारतीय कार्बन बाजार: ऊर्जा दक्षता ब्यूरो वर्तमान में एक स्वदेशी 'भारतीय कार्बन बाजार' विकसित कर रहा है। अब तक भारतीय किसानों को विदेशी एजेंसियों और डीलर के उतार-चढ़ाव पर निर्भर रहना पड़ता था। ऊर्जा दक्षता ब्यूरो के आने से प्रक्रिया सरल होगी, प्रमाणीकरण सस्ता होगा और भुगतान भारतीय रुपये में सीधे और पारदर्शी तरीके से मिलेगा।

नेट जीरो 2070 का विजन: भारत ने 2070 तक 'शुद्ध शून्य' उत्सर्जन का लक्ष्य रखा है। इसका अर्थ यह है कि देश जितना कार्बन उत्सर्जित करेगा, उतना ही उसे वापस सोखने की क्षमता भी विकसित करेगा। चूंकि भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, इसलिए खेती को इस लक्ष्य को प्राप्त करने का सबसे बड़ा 'कार्बन सिक' माना गया है। यह योजना किसानों को पर्यावरण संरक्षक के रूप में स्थापित करती है और कृषि को एक टिकाऊ और लाभदायक व्यवसाय बनाती है।



## छोटी जोत से लाख लीडर तक : श्री नारायण बेदिया की प्रेरणादायक यात्रा

उदयकुमार एम एस<sup>1</sup>, संजय कुमार पाण्डेय<sup>2</sup>, दिनेश कुमार<sup>3</sup>, सिंगराय माझी<sup>4</sup> एवं पी. पटमाझी<sup>5</sup>

भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, राँची

जब बात हीसले की हो, तो जमीन का रक्बा मायने नहीं रखता। इस बात को सच कर दिखाया है झारखंड के राँची जिले के अन्नादा प्रखंड स्थित राजादेरा पंचायत के तिरला कोचा गाँव के प्रगतिशील किसान श्री नारायण बेदिया ने, उन्होंने जैविक खेती को वैज्ञानिक ज्ञान और मेहनत के साथ अपनाकर छोटी सी जमीन को भी टिकाऊ और लाभदायक आजीविका में बदल दिया है। केवल लगभग एक एकड़ जमीन होने के बावजूद, उन्होंने पर्यावरण-अनुकूल तरीकों पर आधारित एक विविधकृत कृषि प्रणाली विकसित की है, जिससे उन्हें आर्थिक स्थिरता और पर्यावरणीय संतुलन दोनों मिल रहे हैं। सिर्फ एक एकड़ जमीन के मालिक, पर सपने करोड़ों के। आज इनका नाम सुनते ही बड़े-बड़े जमींदार भी कुर्सी छोड़कर खड़े हो जाते हैं। क्योंकि इन्होंने वो कर दिखाया जो किताबों में पढ़ाया जाता है, पर खेत में करना मुश्किल लगता है। इन्होंने एक एकड़ से क्रांति पैदा कर दी।

सबसे पहला युद्ध इन्होंने रासायनिक खाद और कीटनाशकों के खिलाफ छेड़ा। बोरे भर-भर के यूरिया और डीएपी लाने की जगह, इन्होंने अपने खेत को ही खाद की फैक्ट्री बना दिया। फसल कटने के बाद बचे डल्ल, पत्ते, गोबर, घर का कचरा, गाँव का बायोमास, सबको मिलाकर तैयार किया देसी कंपोस्ट। मिट्टी ने जब ये अमृत पिया तो सोना उगलने लगी। कीड़े-मकोड़े आए तो बाजार नहीं भागे। घर की रसोई को बना दिया प्रयोगशाला। गौमूत्र, नीम की पत्ती, लहसुन, मिर्च से तैयार किया अमिअस। बेल, घतूरा, और नीम से बना डाला ब्रह्मास्त्र। नीम का तेल तो इनका सबसे बड़ा हथियार था। नतीजा यह हुआ कि कीड़े खेत छोड़कर भागे, और फसल ऐसी लहलहाई कि देखने वाले देखते रह गए। आज इनके खेत में टमाटर लाल सुर्ख, बैंगन चमकदार, गोभी सफेद दूध सी, और मिर्च तीखी ऐसी कि जुबान पर रखते ही आँख से आँसू आ जाए। पर ये आँसू खुशी के हैं। क्योंकि सब्जी में जहर का एक कतरा नहीं। जोन्हा मार्केट और गुंडलीपोखर मार्केट के लोग सुबह-सुबह इनके खेत के बाहर लाइन लगाते हैं। ग्राहक एक बार इनकी सब्जी चख ले, तो दूसरी दुकान पर जाना भूल जाए। कमाई का गणित जिसने सबको चौंकाया।

जहाँ से बड़की बदलाव की चिंगारी साल था 2011-2012। नारायण जी एक आम किसान थे। खेती वही पुराने ढर्रे पर। खर्चा ज्यादा, कमाई कम। तभी रामकृष्ण मिशन की ट्रेनिंग ने इनकी जिंदगी का रुख मोड़ दिया। पहली बार लाख की वैज्ञानिक खेती का नाम सुना। साथ ही समझ आया कि धरती माँ को जहर देकर जो पैसा आएगा, वो अभिशाप बनेगा। बस यहीं से दिल में एक बीज पड़ा। बीज था जहर-मुक्त खेती

का, आत्मनिर्भर बनने का। लेकिन कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। सन 2011-12 में, उन्होंने 10 कुसुम के पेड़ों पर लाख की खेती शुरू की, जिससे उनकी आय बढ़कर ₹1 लाख हो गई, यानी आय में दस गुना बढ़ोतरी हुई। सन 2016 में, भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान से ट्रेनिंग लेने के बाद, उन्होंने लाख की खेती को 20-22 कुसुम के पेड़ों और 400 सेमियालता के पौधों तक बढ़ाया, जिससे उन्हें औसतन ₹2.5 लाख की आय हुई।



साल 2016 में भाकृअनुप - राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, राँची से इन्होंने वो हथियार हासिल किए जो किसी योद्धा के पास होते हैं। कीट नियंत्रण का विज्ञान, फसल प्रबंधन का गणित, पानी और संसाधनों को बचाने की कला। ट्रेनिंग से लौटे तो किसान नहीं, खेत के वैज्ञानिक बनकर लौटे। अब एक एकड़ का टुकड़ा इनके लिए प्रयोगशाला था, और हर पौधा इनका रिसर्च पेपर। जहर को किया बाहर, खेत में उतारा अमृत। 2011 से पहले, उनकी आय ₹10,000 थी। 2025 में, उन्होंने 36-40 कुसुम के पेड़ों, 35 बेर के पेड़ों और 1,000 सेमियालता पौधों पर लाख की खेती की, जिससे उन्हें ₹7,50,000 की आमदनी हुई। इससे कुल आय ₹8,50,000 हो गई, जो 2011 के आंकड़ों की तुलना में 750 प्रतिशत ज्यादा थी।

लोग पूछते हैं, एक एकड़ में होता क्या है? नारायण जी हँसकर हिसाब बताते हैं। लाख की खेती इनकी मुख्य फसल है। उसी एक एकड़ पर मौसम के हिसाब से सब्जियाँ भी उगाते हैं। न कोई केमिकल का खर्चा, न कोई महंगे बीज का झंझट। लागत आती है न के बराबर, क्योंकि खाद, दवा सब घर की। और कमाई? सिर्फ सब्जियों से हर साल 70 हजार से 1 लाख रुपये सीधे जेब में। लाख की खेती से जो आता है वो

अलग। यानी एक एकड़ से दोहरी कमाई, तिहरा मुनाफा। न बैंक का कर्ज, न साहूकार का डर। हर महीने घर में लक्ष्मी का वास। इसे कहते हैं असली 'सोनघिरैया मॉडल'। धरती माँ भी खुश, क्योंकि उसकी कोख जहर से बची रही, और किसान भी मालामाल हुये।

नारायण बेदिया की सबसे बड़ी खुशी ये है कि इन्होंने सफलता को अपनी जेब में बंद नहीं किया। जब खुद लखपति बने, तो सोचा कि गाँव का हर किसान लखपति क्यों न बने। बस फिर क्या था। निकल पड़े गाँव-गाँव, टोला-टोला। चौपाल लगाई, पंचायत में बोले, नौजवानों को समझाया। इनका नारा एक ही था: "केमिकल छोड़ो, सेहत से नाता जोड़ो"। खर्च घटाओ, मुनाफा बढ़ाओ।" बात लोगों के दिल में उतर गई। रामकृष्ण मिशन के सक्रिय सदस्य के तौर पर इन्होंने सेवा को धर्म माना। आईसीआईसीआई फाउंडेशन ने जब मास्टर ट्रेनर बनाया, तो जिम्मेदारी और बढ़ गई। आज हाल ये है कि सैकड़ों किसान इनके खेत को तीर्थ मानकर देखने आते हैं। नारायण जी सबको खेत में ले जाकर, मिट्टी हाथ में लेकर सिखाते हैं। कैसे कम पानी में फसल लहलहाए, कैसे गोबर से सोना बनाएँ, कैसे कीड़ों से दोस्ती करके फसल बचाएँ। तिरला कोचा के आसपास के 10-15 गाँवों में अब जैविक खेती की लहर दौड़ चुकी है। लोग प्यार से 'गुरुजी' कहते हैं। पर्यावरण का प्रहरी, सेहत का पहरेदार।

नारायण जी की खेती सिर्फ पैसे कमाने का जरिया नहीं है। ये एक आंदोलन है। आंदोलन धरती को बचाने का। जब रासायनिक खाद डालते हैं तो मिट्टी कमजोर हो जाती है, पानी जहरीला हो जाता है, और

हम जो खाते हैं वो धीमा जहर बन जाता है। नारायण जी ने इस जहर के चक्र को तोड़ा। इनके खेत में चिड़िया चहकती है, केचुए मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं, तितलियाँ मंडराती हैं। यानी पूरा ईको-सिस्टम जिंदा है। इनकी सब्जी खाने वाला बच्चा बीमार नहीं पड़ता, बुजुर्ग की हड्डी मजबूत रहती है। यह है असली स्वास्थ्य बीमा आज का हीरो, कल की उम्मीद।

आज श्री नारायण बेदिया का नाम रांची ही नहीं, पूरे झारखंड के कृषि विभाग की फाइलों में दर्ज है। अधिकारी इनके खेत देखने आते हैं, युवा इनसे प्रेरणा लेते हैं। इन्होंने साबित कर दिया कि खेती घाटे का सौदा नहीं, अगर दिमाग लगाया जाए तो ये सोने की खान है। जब कोई युवा कहता है कि "खेती में क्या रखा है", तो नारायण जी उसे अपने एक एकड़ में खड़ा करके दिखाते हैं। कहते हैं: "बेटा, हजार एकड़ वाला भी उतना खुश नहीं जितना मैं एक एकड़ में हूँ। क्योंकि मेरी मिट्टी जिंदा है, मेरा पानी साफ है, और मेरा परिवार स्वस्थ है।" यह कहानी सिर्फ एक किसान की नहीं है। यह उस सोच की जीत है, जो कहती है कि भारत का भविष्य गाँव में है और गाँव का भविष्य जैविक खेती में है। श्री नारायण बेदिया ने एक एकड़ से जो मशाल जलाई है, उसकी रोशनी अब पूरे देश में फैलनी चाहिए। क्योंकि मिट्टी में सचमुच सोना है, बस उसे पहचानने वाला, नारायण बेदिया जैसा चाहिए। यही है रांची का 'लाख का बादशाह'। एक एकड़ का किसान, पर हीसला ऐसा कि पूरी दुनिया को रास्ता दिखा दे।



## प्रशिक्षण से परिवर्तन की ओर : आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म

संगीता श्रीवास्तव एवं प्रियंका श्रीवास्तव

भाकूअनुप - भारतीय गान्धारी अनुसन्धान संस्थान, लखनऊ

आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म भारत सरकार का एक राष्ट्रीय डिजिटल प्रशिक्षण पोर्टल है, जिसे मिशन कर्मयोगी के अंतर्गत सितंबर 2020 में प्रारंभ किया गया। इसका उद्देश्य सिविल सेवकों को पारंपरिक नियम-आधारित प्रशिक्षण मॉडल से आगे बढ़ा कर भूमिका-आधारित, नागरिक-केंद्रित और भविष्य के लिए तैयार 'कर्मयोगी' के रूप में विकसित करना है, जिससे शासन की गुणवत्ता और प्रभावशीलता में सुधार हो सके। यह प्लेटफॉर्म अधिकारियों को ज्ञान, कौशल और दक्षताओं (एएसके—Attitude, Skills, Knowledge) से सुसज्जित करता है, ताकि शासन प्रणाली में गुणात्मक सुधार लाया जा सके। आईगॉट-कर्मयोगी पर स्व-गति वाले ऑनलाइन पाठ्यक्रम, वेबिनार और सहकर्मी-आधारित सीखने के विविध अवसर उपलब्ध हैं, जो अधिकारियों को निरंतर सीखने के लिए प्रेरित करते हैं। इस पहल का लक्ष्य एक ऐसी नागरिक-केंद्रित सिविल सेवा का निर्माण करना है, जो नागरिकों की बढ़ती अपेक्षाओं को समझते हुए उन्हें दक्ष, पारदर्शी और उत्तरदायी प्रशासन प्रदान कर सके। इस प्रकार आईगॉट-कर्मयोगी प्रशिक्षण को केवल कौशल-विकास तक सीमित न रखकर व्यावहारिक परिवर्तन और शासन सुधार का एक सशक्त माध्यम बनाता है।

### पारंपरिक प्रशिक्षण से डिजिटल प्रशिक्षण में परिवर्तन की आवश्यकता

आईगॉट-कर्मयोगी (एकीकृत सरकारी ऑनलाइन प्रशिक्षण) प्लेटफॉर्म के माध्यम से सरकारी कर्मचारियों को निरंतर, सुलभ और प्रासंगिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है, जिससे उन्हें पारंपरिक नियम-आधारित प्रशिक्षण मॉडल से आगे बढ़ा कर भूमिका-आधारित, परिणामोन्मुख और नागरिक-केंद्रित कार्य संस्कृति की ओर उन्मुख किया जा सके। यह प्रभाव केवल ज्ञान-वृद्धि तक सीमित न रहकर कर्मचारियों की मानसिकता, कौशल और कार्य निष्पादन में सकारात्मक परिवर्तन लाता है, जिसके परिणामस्वरूप शासन की गुणवत्ता, सेवा वितरण की दक्षता और सार्वजनिक जवाबदेही में उल्लेखनीय सुधार संभव हो पाता है। पारंपरिक प्रशिक्षण प्रणाली मुख्यतः औपचारिक और सीमित अवधि की रही है, जिसके कारण वह व्यवहार, दक्षता और कार्य निष्पादन में अपेक्षित परिवर्तन नहीं ला पाती है, विशेषकर बदलते प्रशासनिक, तकनीकी और सामाजिक परिवेश में ऐसे प्रशिक्षण पर्याप्त नहीं हैं। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए प्रशिक्षण को सूचना-आधारित मॉडल से आगे बढ़ाकर सतत भूमिका-आधारित बनाया गया है, ताकि सरकारी कर्मचारी आधुनिक चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर सकें, नागरिकों को बेहतर सार्वजनिक सेवाएँ प्रदान कर

सकें और सुशासन के माध्यम से भारत के विकासात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति में योगदान दे सकें।



### आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म के मुख्य उद्देश्य

#### क्षमता निर्माण

यह पहल अधिकारियों को डिजिटल साक्षरता, डेटा विश्लेषण, ई-गवर्नेंस, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, साइबर सुरक्षा जैसी आधुनिक तकनीकों से परिचित कराती है। इससे कर्मचारी न केवल वर्तमान प्रशासनिक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा कर पाते हैं, बल्कि भविष्य की चुनौतियों के लिए भी स्वयं को सक्षम बना पाते हैं। यह क्षमता निर्माण शासन प्रणाली को अधिक कुशल, उत्तरदायी और नवोन्मेषी बनाता है।

#### आजीवन सीखना

आईगॉट-कर्मयोगी आजीवन सीखने की संस्कृति को बढ़ावा देता है, जिसमें अधिकारी अपने पूरे सेवा काल में निरंतर सीखते रहते हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से स्व-अध्ययन, कौशल उन्नयन और आत्म-मूल्यांकन को आसान बनाया गया है। इससे अधिकारी जटिल और बहुआयामी चुनौतियों का समाधान करने में अधिक सक्षम बनते हैं और शासन व्यवस्था को अनुकूलनशील बनाते हैं।

#### भूमिका-आधारित प्रशिक्षण

आईगॉट-कर्मयोगी पारंपरिक नियम-आधारित प्रशिक्षण इस सोच से आगे बढ़ते हुए भूमिका-आधारित प्रशिक्षण पर बल देता है। प्रत्येक अधिकारी की वर्तमान भूमिका, उत्तरदायित्व और भविष्य की पदोन्नति को ध्यान में रखकर प्रशिक्षण मॉड्यूल तैयार किए जाते हैं। इससे प्रशिक्षण अधिक प्रासंगिक, व्यावहारिक और परिणामोन्मुखी बनता है तथा अधिकारी अपने कार्यक्षेत्र में बेहतर निर्णय लेने में सक्षम होते हैं।

## नागरिक-केंद्रित दृष्टिकोण

आईगॉट-कर्मयोगी का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य सरकारी कर्मचारियों की मानसिकता और दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना है। यह पहल अधिकारियों को केवल नियमों के पालनकर्ता के रूप में नहीं, बल्कि नागरिकों की सेवा करने वाले कर्मयोगी के रूप में विकसित करने पर जोर देती है। प्रशिक्षण के माध्यम से संवेदनशीलता, सहानुभूति, नैतिकता और सेवाभाव जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित किया जाता है। इसका परिणाम अधिकारियों की मानसिकता बदलकर सेवाभाव और सहानुभूति के साथ कार्य करने को प्रोत्साहित करना है।

### IGOT-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म के मुख्य उद्देश्य



## आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म की प्रमुख विशेषताएँ

**डिजिटल लर्निंग पोर्टल:** आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म एक राष्ट्रीय स्तर का डिजिटल लर्निंग पोर्टल है (आईगॉटकर्मयोगी.गोव.इन), जिसे सरकारी कर्मचारियों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विकसित किया गया है। इस पोर्टल पर विभिन्न मंत्रालयों, विभागों, शैक्षणिक संस्थानों और विशेषज्ञ संगठनों द्वारा विकसित हजारों ऑनलाइन कोर्स उपलब्ध हैं। ये कोर्स कई भारतीय भाषाओं में प्रदान किए जाते हैं, जिससे प्रशिक्षण की पहुँच देश के हर कोने तक सुनिश्चित होती है। यह प्लेटफॉर्म ऑन-डिमांड, स्व-गति और सतत सीखने को बढ़ावा देता है।

**योग्यता ढाँचा:** यह एक कर्मयोगी योग्यता ढाँचा है, जिसे एसके (मानसिकता, कौशल, ज्ञान) मॉडल के रूप में परिभाषित किया गया है।

- मानसिकता: नैतिकता, सेवाभाव, जवाबदेही और नागरिक-केंद्रित सोच
- कौशल: नेतृत्व, संचार, समस्या-समाधान, डिजिटल दक्षता
- ज्ञान: विषय-वस्तु, नीतियाँ, नियम और तकनीकी जानकारी

यह ढाँचा सुनिश्चित करता है कि प्रशिक्षण केवल जानकारी तक सीमित न रहकर व्यवहार परिवर्तन और कार्य निष्पादन सुधार का माध्यम बने।



**70-20-10 मॉडल:** आईगॉट प्लेटफॉर्म 70-20-10 मॉडल पर आधारित है, जो सीखने की एक आधुनिक और व्यवहारिक अवधारणा प्रस्तुत करता है:

- 70% अनुभवात्मक सीख: कार्यस्थल पर वास्तविक समस्याओं से सीखना
- 20% सामाजिक सीख: सहकर्मियों, मेंटर और टीम से सीखना
- 10% औपचारिक प्रशिक्षण: कोर्स, वर्कशॉप और ऑनलाइन मीडियम

यह मॉडल प्रशिक्षण को व्यावहारिक, सहभागी और प्रभावी बनाता है।

**कर्मा पॉइंट्स और प्रमाण-पत्र:** सीखने की प्रक्रिया को आकर्षक और प्रेरणादायक बनाने के लिए आईगॉट-कर्मयोगी में कर्मा पॉइंट्स और डिजिटल प्रमाण-पत्र की व्यवस्था की गई है। यह प्रणाली अधिकारियों को निरंतर सीखने और आत्म-विकास के लिए प्रोत्साहित करती है।

**मानव संसाधन प्रक्रियाओं के साथ एकीकरण:** आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म को सरकारी मानव संसाधन प्रबंधन प्रणाली (एचआरएमएस) तथा प्रदर्शन मूल्यांकन से एकीकृत किया गया है। इसके माध्यम से अधिकारियों की योग्यता, कौशल और प्रदर्शन के आधार पर उपयुक्त पदस्थापन, कार्य-असाइनमेंट का बेहतर निर्धारण, प्रभावी प्रतिभा प्रबंधन तथा करियर प्रगति संभव हो पाती है। यह एकीकरण प्रशिक्षण को प्रशासनिक निर्णयों से जोड़कर उसे अधिक उपयोगी, व्यावहारिक और परिणामोन्मुखी बनाता है।



## आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म: चुनौतियाँ एवं समाधान

### चुनौतियाँ

आईगॉट-कर्मयोगी के प्रभावी क्रियान्वयन में कई संरचनात्मक और व्यवहारिक चुनौतियाँ सामने आती हैं। डिजिटल विभाजन के कारण

दूरदराज और पिछड़े क्षेत्रों में इंटरनेट की सीमित उपलब्धता तथा वरिष्ठ अधिकारियों के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग प्रारंभिक रूप से कठिन होना एक प्रमुख बाधा है। इसके अतिरिक्त, नई कार्य-पद्धतियों और डिजिटल प्रशिक्षण को अपनाने में अनुकूलन की गति धीमी रहने से प्रशासनिक परिवर्तन की प्रक्रिया प्रभावित होती है। केंद्र, राज्य और स्थानीय स्तरों के बीच समुचित एकीकरण और समन्वय की कमी भी एक चुनौती है, जिसके कारण प्रशिक्षण के लाभ सभी स्तरों तक समान रूप से नहीं पहुँच पाते। साथ ही, प्रभावी निगरानी और मूल्यांकन तंत्र के अभाव में प्रशिक्षण के वास्तविक परिणामों का आकलन करना और जवाबदेही सुनिश्चित करना कठिन हो जाता है। इसके अतिरिक्त, पारंपरिक सामान्यवादी दृष्टिकोण से विशेषज्ञता-आधारित प्रशासन की ओर संक्रमण भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है, क्योंकि इसके लिए विशिष्ट डोमेन ज्ञान, तकनीकी कौशल तथा व्यवहारिक बदलावों को अपनाने हेतु प्रशासनिक सोच में मूलभूत परिवर्तन अपेक्षित है।

#### समाधान

आईगॉट-कर्मयोगी प्लेटफॉर्म सरकारी प्रशिक्षण प्रणाली को अधिक प्रभावी बनाने के लिए निरंतर और सुलभ प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान करता है, जिसके अंतर्गत अधिकारी "कभी भी, कहीं भी और किसी भी" डिवाइस पर सीख सकते हैं। यह डिजिटल मंच भूमिका-आधारित शिक्षण को बढ़ावा देता है, जहाँ अधिकारियों की जिम्मेदारियों और कार्यक्षेत्र के अनुसार मॉड्यूलर प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाता है, जिससे सीखना अधिक प्रासंगिक और व्यवहारिक बनता है। डिजिटल प्रशिक्षण को व्यापक बनाने और डिजिटल असमानता को कम करने के

उद्देश्य से डिजिटल साक्षरता और सहायता पर विशेष ध्यान दिया जाता है, जिसमें मार्गदर्शन, तकनीकी सहायता और सरल इंटरफेस शामिल हैं। इसके साथ ही, प्रोत्साहन और जवाबदेही की व्यवस्था के माध्यम से प्रशिक्षण में सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाता है तथा सीखने के परिणामों को प्रदर्शन मूल्यांकन से जोड़ा जाता है। अंततः, सहयोग और साझेदारी के माध्यम से केंद्र, राज्य सरकारों और विभिन्न मंत्रालयों के साथ मिलकर प्रशिक्षण कार्यक्रमों को लागू किया जाता है, जिससे आईगॉट-कर्मयोगी एक समन्वित और प्रभावी क्षमता निर्माण मंच के रूप में उभरता है।

#### निष्कर्ष

आईगॉट-कर्मयोगी भारत सरकार की एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसका उद्देश्य सरकारी कर्मचारियों को डिजिटल प्लेटफॉर्म आईगॉट के माध्यम से प्रशिक्षित कर 'प्रशिक्षण से परिवर्तन की ओर' अग्रसर करना है। यह पहल निरंतर सीखने और कौशल-विकास पर केंद्रित है, जिसके अंतर्गत विभिन्न ऑनलाइन पाठ्यक्रम, मूल्यांकन और क्षमता-आधारित प्रशिक्षण प्रदान किए जाते हैं, ताकि सिविल सेवकों की कार्यक्षमता, नागरिक-केंद्रित दृष्टिकोण और सेवा-भाव में सुधार हो सके। आईगॉट-कर्मयोगी के माध्यम से अधिकारियों को आधुनिक शासन के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल और व्यवहार से सुसज्जित किया जाता है, जिससे उनमें जवाबदेही, नवाचार और परिवर्तनकारी सोच का विकास होता है। परिणामस्वरूप यह पहल विकसित भारत के लक्ष्य को साकार करने में सहायक बनती है तथा जनता को अधिक दक्ष, प्रभावी और पारदर्शी सेवाएँ उपलब्ध कराने की दिशा में एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरती है।



## झारखंड मिलेट मिशन: श्री अन्न से समृद्धि की ओर एक कदम

नीतू कुमारी<sup>1</sup>, राशि भूषण चौधरी<sup>2</sup> एवं विशालाक्षी चौबे<sup>3</sup>

<sup>1</sup>बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची

<sup>2</sup>भाकृअनुप - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

<sup>3</sup>इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

बदलते जलवायु परिदृश्य, अनियमित वर्षा, बढ़ती खेती लागत तथा प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ते दबाव ने भारतीय कृषि के सामने नई चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। विशेषकर झारखंड जैसे वर्षा आधारित कृषि प्रधान राज्य में ऐसी फसलों की आवश्यकता है जो कम पानी, कम लागत और सीमित संसाधनों में भी अच्छी पैदावार दें तथा किसानों को स्थिर आय प्रदान करें। ऐसे समय में मिलेट (श्री अन्न) किसानों के लिए एक भरोसेमंद विकल्प बनकर उभरे हैं।



महुआ (रागी), कोदो, कुटकी, सांवा, कंगनी, ज्वार और बाजरा जैसी मिलेट फसलें झारखंड की पारंपरिक कृषि एवं खान-पान का हिस्सा रही हैं। ये फसलें जलवायु परिवर्तन के प्रति सहनशील होने के साथ-साथ पोषण से भी भरपूर हैं। इन्हीं विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए झारखंड सरकार ने मिलेट की खेती को पुनर्जीवित करने, किसानों की आय बढ़ाने तथा पोषण सुरक्षा को मजबूत करने के उद्देश्य से झारखंड राज्य मिलेट मिशन की शुरुआत की।

### झारखंड मिलेट मिशन क्या है?

झारखंड राज्य मिलेट मिशन, कृषि, पशुपालन एवं सहकारिता विभाग, झारखंड सरकार की एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसकी शुरुआत वर्ष 2024-25 में की गई। इसका उद्देश्य केवल मिलेट उत्पादन बढ़ाना नहीं, बल्कि किसानों की आय में वृद्धि, जलवायु-अनुकूल खेती, पोषण सुरक्षा तथा मिलेट की संपूर्ण मूल्य श्रृंखला को मजबूत करना है।

मिशन के अंतर्गत महुआ (रागी), ज्वार, बाजरा, कोदो, कुटकी, सांवा, कंगनी, चीना आदि मिलेट फसलों को बढ़ावा दिया जा रहा है। किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज, तकनीकी प्रशिक्षण, आधुनिक उत्पादन तकनीक,

फसल प्रबंधन, प्रसंस्करण, विपणन एवं डीबीटी के माध्यम से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने पर जोर दिया गया है।

### किसान के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात

पात्र किसान को अधिकतम 5 एकड़ तक मिलेट की खेती के लिए ₹3,000 प्रति एकड़ प्रोत्साहन राशि मिल सकती है। अधिकतम वित्तीय सहायता ₹15,000 तक है और राशि डीबीटी के माध्यम से बैंक खाते में भेजी जाती है।

### किसानों को क्या सहायता मिलती है?

वित्तीय सहायता के साथ किसानों को गुणवत्तापूर्ण एवं प्रमाणित बीज, उन्नत उत्पादन तकनीक का प्रशिक्षण, कृषि वैज्ञानिकों एवं विभागीय अधिकारियों से तकनीकी मार्गदर्शन, प्रदर्शन प्लॉट, क्लस्टर आधारित खेती, फसल प्रबंधन सलाह तथा कटाई उपरांत प्रबंधन, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन की जानकारी दी जाती है। एसएचजी एवं एफपीओ से जुड़ने तथा बाजार एवं विपणन के अवसर भी उपलब्ध कराए जाते हैं।

### योजना का लाभ कौन ले सकता है?

झारखंड के स्थायी निवासी, रयत किसान तथा निर्धारित शर्तों के अनुसार बटाईदार किसान योजना का लाभ ले सकते हैं। किसान को स्वीकृत क्लस्टर क्षेत्र में मिलेट की खेती के लिए इच्छुक होना चाहिए तथा आवश्यक भूमि, आधार, बैंक खाता एवं अन्य दस्तावेज उपलब्ध होने चाहिए। बैंक खाता आधार से लिंक होना आवश्यक है ताकि सहायता डीबीटी के माध्यम से प्राप्त हो सके।

### मिलेट क्लस्टर: सामूहिक खेती का मॉडल

मिशन की प्रमुख विशेषता क्लस्टर आधारित खेती है। इसमें एक गाँव अथवा आसपास के गाँवों के इच्छुक किसानों को समूह के रूप में जोड़कर मिलेट की वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित खेती कराई जाती है। इससे बीज, प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन, निगरानी, उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

उदाहरण के लिए, यदि किसी गाँव में 30-40 किसान लगभग 40-50 एकड़ क्षेत्र में मिलेट की खेती करना चाहते हैं, तो उस क्षेत्र को मिलेट क्लस्टर के रूप में विकसित किया जा सकता है।

क्लस्टर का चयन कृषि विभाग द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार किया जाता है। संभावित गाँवों की पहचान के बाद बीएओ, एटीएम एवं

बीटीएम द्वारा इच्छुक किसानों और उपलब्ध भूमि का सर्वेक्षण किया जाता है। यथासंभव एक-दूसरे के निकट स्थित खेतों वाले सन्निहित क्षेत्र को प्राथमिकता दी जाती है। इसके बाद प्रस्ताव जिला कृषि कार्यालय को भेजा जाता है और स्वीकृति मिलने पर किसानों का पंजीकरण, ई-केवाईसी तथा दस्तावेज एवं खेत का सत्यापन किया जाता है।

### क्लस्टर से लाभ

समय पर बीज एवं कृषि आदान, सामूहिक वैज्ञानिक प्रशिक्षण, विशेषज्ञों से तकनीकी मार्गदर्शन, संसाधनों का बेहतर उपयोग, लागत में कमी, सामूहिक प्रसंस्करण एवं विपणन एसएचजी/एफपीओ से जुड़ने का अवसर।

### मिशन की प्रगति: किसानों का बढ़ता विश्वास

उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार 24,000 से अधिक किसानों ने पंजीकरण कराया है, 36,000 से अधिक किसानों का प्रमाणीकरण और 31,000 से अधिक किसानों का ई-केवाईसी पूरा किया जा चुका है। 73,000 एकड़ से अधिक क्षेत्र का प्रमाणीकरण किया जा चुका है। गुमला जिला किसानों की संख्या एवं क्षेत्रफल, दोनों के मामले में अग्रणी जिलों में शामिल है।

ये आँकड़े संकेत देते हैं कि झारखंड के किसान तेजी से श्री अन्न की खेती की ओर बढ़ रहे हैं।

### आवेदन कैसे करें?

मिशन में पंजीकरण ऑनलाइन तथा ऑफलाइन दोनों माध्यमों से किया जा सकता है। ऑनलाइन आवेदन में कठिनाई होने पर किसान नजदीकी कृषि कार्यालय अथवा सीएससी/प्रज्ञा केन्द्र की सहायता ले

सकते हैं। ऑफलाइन सहायता के लिए ग्राम कृषि मित्र (जहाँ उपलब्ध हों), बीएओ, एटीएम या बीटीएम से संपर्क किया जा सकता है।

आवेदन में दी गई जानकारी आधार एवं बैंक रिकॉर्ड से मेल खानी चाहिए। बैंक खाता सक्रिय और आधार से लिंक हो। मोबाइल नंबर चालू रखें तथा एप्लीकेशन आईडी सुरक्षित रखें। किसी भुटि की स्थिति में संबंधित कृषि अधिकारी से तुरंत संपर्क करें।

### आवश्यक दस्तावेज

|                               |                                 |
|-------------------------------|---------------------------------|
| आधार कार्ड                    | पहचान एवं ई-केवाईसी             |
| निवास प्रमाण                  | आवश्यकता होने पर                |
| भूमि संबंधी दस्तावेज          | खतियान/रसीद अथवा स्वीकृत अभिलेख |
| भूमि स्वामी का सहमति पत्र     | बटाईदार किसान के लिए            |
| बैंक पासबुक                   | डीबीटी हेतु                     |
| आधार से लिंक सक्रिय बैंक खाता | वित्तीय सहायता हेतु             |
| मोबाइल नंबर                   | ओटीपी एवं सूचना                 |
| पासपोर्ट आकार फोटो            | यदि आवश्यक हो                   |

### सहायता राशि कैसे मिलती है?

पात्र किसान द्वारा निर्धारित प्रक्रिया पूरी करने और आवश्यक सत्यापन के बाद वित्तीय सहायता डीबीटी के माध्यम से सीधे बैंक खाते में भेजी जाती है। इसलिए केवल आवेदन करना पर्याप्त नहीं है; पंजीकरण, ई-केवाईसी, दस्तावेज तथा अन्य निर्धारित सत्यापन प्रक्रियाएँ समय पर पूरी करना आवश्यक है।

### किसानों के लिए सुझाव

शिकायत या भुगतान में देरी होने पर: किसान टोल-फ्री किसान हेल्पलाइन 1800-123-1136 पर संपर्क कर सकते हैं।





भाकृअनुप – राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान  
नामकुम, राँची - 834 010 झारखण्ड (भारत)





हर कदम, हर डगर

किसानों का हमसाफर

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

*Agrisearch with a human touch*



भाकृअनुप – राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान  
नामकुम, राँची – 834 010 झारखण्ड (भारत)